सर्वश्रेष्ठ रूसी और सोवियत पुस्तकमाला

मक्सिम गोर्की

चुनी हुई कहानियां

प्रगति प्रकाशन
मास्को

सम्पादक : मदनलाल 'मधु'

М. ГОРЬКИЙ
ИЗБРАННЫЕ РАССКАЗЫ
на языке хинди

अनुक्रम

गोर्की, उनका कृतित्व और भारत ५

मकर चुद्रा। अनुवादक नरोत्तम नागर १३

नमकसार में। अनुवादक नरोत्तम नागर ३०

बाज का गीत। अनुवादक नरोत्तम नागर ४५

चेल्काश। अनुवादक नरोत्तम नागर ५२

बुढ़िया इजरगिल। अनुवादक नरोत्तम नागर ९६

कैसे ऊब मिटे? अनुवादक नरोत्तम नागर १२४

ओरलोव दम्पति। अनुवादक नरोत्तम नागर १४७

तूफ़ान का अग्रदूत। अनुवादक मदनलाल 'मधु' २२४

इटली की कथाएं। अनुवादक यशवन्त २२६

इन्सान पैदा हुआ। अनुवादक नरोत्तम नागर २५१

परिशिष्ट २६५

गोर्की, उनका कृतित्व और भारत

१९६८ में जब गोर्की की जन्म-शताब्दी मनायी जा रही थी, तो उनके सम्बन्ध में "सोवेत्स्काया कूलतूरा" (सोवियत संस्कृति) पत्रिका के एक अंक में ख़्वाजा अहमद अब्बास का एक लेख छपा था। लेख का आरम्भ बहुत दिलचस्प था। "दुनिया के किन तीन लेखकों ने आपको सबसे अधिक प्रभावित किया है? ऐसा प्रश्न पूछने पर आपको शायद यह उत्तर मिलेगा –

"'मक्सिम गोर्की, थामस मन और बर्नार्ड शॉ।'

"अथवा यह –

"'लेव तोल्सतोय, हेर्बर्ट वेल्स और मक्सिम गोर्की।'

"या यह –

"'चार्ल्स डिकन्स, एर्नेस्ट हेमिंग्वेइ और मक्सिम गोर्की।

"अथवा यह –

"'गोल्सवर्दी, फ़ान्त्स काफ़्का और मक्सिम गोर्की।'

"हर बार तीन में से एक नाम अवश्य ही मक्सिम गोर्की का होगा।"

ख़्वाजा अहमद अब्बास के उक्त लेख के कई वर्ष पहले मुमताज़ हुसैन ने अपने "गोर्की – जीवन और साहित्य" लेख में कुछ इसी प्रकार के उद्‌गार प्रकट किये थे। उन्होंने लिखा था कि "अगर भारत के शिक्षित वर्ग में यह मत-संग्रह किया जाये कि वे अपने देश से बाहर दुनिया के किन लेखकों को जानते हैं, तो शेक्सपीयर के बाद उनकी अधिकांश संख्या गोर्की ही का नाम लेगी।"

मुमताज़ हुसैन के उक्त उद्‌गारों के बहुत वर्ष पहले, १९३६ में गोर्की के निधन पर भारत के महान लेखक प्रेमचन्द ने गोर्की और उनके साहित्य के बारे में अपनी पत्नी से निम्न शब्द कहे थे –

"जब घर-घर शिक्षा का प्रचार हो जायेगा, तो क्या गोर्की का प्रभाव घर-घर न हो जायेगा? वे भी तुलसी-सूर की तरह चारों ओर पूजे जायेंगे।"

यह एक महान लेखक की विश्व-साहित्य की एक अन्य महान विभूति को श्रद्धांजलि और साथ ही भविष्यवाणी भी थी। यह भविष्यवाणी एक सत्य का रूप ले चुकी है। प्रेमचन्द के समय में ही गोर्की भारत में बहुत लोकप्रिय थे और स्वतंत्र भारत में बढ़ती हुई साक्षरता के साथ-साथ गोर्की के साहित्य की लोकप्रियता भी बढ़ती जा रही है।

अब आइये इस प्रश्न पर विचार करें कि गोर्की की इस लोकप्रियता का रहस्य क्या है?

मुझे लगता है कि इसका मुख्य कारण तो गोर्की के रूस और तत्कालीन भारत की राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों की समानता तथा गोर्की के कृतित्व में ऐसे व्यापक तत्त्वों का विद्यमान होना है, जो किसी देश के जीवन से सम्बन्ध रखते हुए भी सार्वभौमिक होते हैं। रूस में जार की निरंकुश सत्ता से मुक्ति पाने का जो संघर्ष १८२५ के दिसम्बरवादी विद्रोह से शुरू हुआ था और जिसे हेर्ज़ेन, दोब्रोल्यूबोव और चेर्नीशेव्स्की जैसे विचारकों-आन्दोलनकारियों ने आगे बढ़ाया था, वह गोर्की के समय तक मार्क्सवादी संघर्षकर्त्ताओं और मजदूर आन्दोलन के रूप में बहुत ही ठोस शक्ल ले चुका था। यह १९वीं शताब्दी के अन्त और २०वीं शताब्दी के आरम्भ की बात थी। उस समय का भारत राजनैतिक दृष्टि से इतना सजग और उग्र नहीं था, लेकिन फिर भी १८८५ में इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना हो चुकी थी, जिसके नेतृत्व में आगे चलकर भारत की जनता ने बड़े पैमाने पर अंग्रेज साम्राज्यवादियों के विरुद्ध आज़ादी की लड़ाई लड़ी, बीसवीं शताब्दी के शुरू में तिलक और उनके अनुयायियों के रूप में कांग्रेस में गर्मदल का जन्म हो चुका था, "स्वराज्य के लिये लड़ो, भीख नहीं मांगो", तिलक का यह नारा लोगों की जबान पर चढ़ चुका था, स्वदेशी आन्दोलन चल चुका था, बहुत-से क्रान्तिकारी षड्यन्त्र हो चुके थे और १९०८ में जब अंग्रेजों की साम्राज्यवादी सरकार ने तिलक को मांडले निर्वासित किया तो बम्बई के मजदूरों ने बहुत बड़ी हड़ताल की थी, जिसका लेनिन ने भी बड़े उत्साह से स्वागत किया था। आर्थिक दृष्टि से भी यद्यपि गोर्की के समय का रूस भारत से उन्नत था, क्योंकि

वहां पूंजीवाद का अधिक विकास हो चुका था, वड़े पैमाने के उद्योगों की अधिक स्थापना हो चुकी थी और इसके साथ ही पूंजीवाद की क़ब्र खोदने-वाला सर्वहारा वर्ग भी कहीं अधिक वढ़ और संगठित हो चुका था, तथापि रूस आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ कृषि-प्रधान देश था, वहां शोषण, ग़रीवी, वेरोज़गारी, भूख, अकाल और वीमारियों का वोलवाला था। स्वयं गोर्की का जीवन ही इन कटुताओं का मूर्त रूप था। भारत में यह सव और भी ज़्यादा था। सामाजिक दृष्टि से भी दोनों देशों की जनता निरक्षरता, रूढ़ियों और अन्धविश्वासों तथा धार्मिक ढकोसलों का शिकार थी। इसलिये गोर्की ने अपने देश और अपने युग के जिस वातावरण से प्रेरित होकर साहित्य-सृजन किया, वह वास्तव में भारत और दुनिया के अनेक अन्य देशों का भी भाग्य था। यही कारण है कि उनका साहित्य इतने व्यापक रूप से भारतीयों के हृदयों को छू पाया। उदाहरण के लिये जव "वुढ़िया इज़रगिल" कहानी के तीसरे भाग का नायक दान्को किसी भी तरह के पुरस्कार की आशा न करते हुए अपनी जनता के स्वतंत्रता-संघर्ष का पथ-प्रदर्शन करते हुए अपनी जान दे देता है, तो वह ऐसे नायकों का प्रतीक वनकर सामने आता है, जो सच्चे अर्थ में देशभक्त कहलाने के अधिकारी हैं और जिनकी हर युग तथा हर देश में पूजा होती आई है। भारत में भी वहुत-से देशभक्त इसी तरह स्वतन्त्रता की वेदी पर शहीद हो रहे थे। आज़ादी की इसी तीव्राकांक्षा की अनुभूति हमें "मकर चुद्रा" के नायक-नायिका में होती है। "वाज़ का गीत" और "तूफ़ान का अग्रदूत" जैसे रूपक तो किसी भी स्वतंत्रता-प्रेमी को प्रेरित कर सकते हैं। वे साहस और हिम्मत का संचार करते हैं, संघर्ष-क्षेत्र में कूदने और डटकर जूझने का आह्वान करते हैं। "तूफ़ान! ख़ूव ज़ोर-शोर से आये तूफ़ान!" हर रूसी की भांति हर भारतीय भी क्रान्ति के इस तूफ़ान का आह्वान करता था। भारत की एक जानी-मानी क्रान्तिकारी, श्रीमती कामा तो साहसियों के उन्मादवाले "वाज़ के गीत" पर मुग्ध थीं। गोर्की के तलछटी पात्रों में भी, जो निश्चय ही अनुकरणीय अथवा आदर्श पात्र नहीं हैं, हमें ऐसे गुण दिखाई देते हैं, जो मानव के उज्ज्वल पक्षों को उभारते हैं, यह दिखाते हैं कि जीवन की अत्यधिक प्रतिकूल और निर्मम परिस्थितियों के वावजूद वे अपना मानवीय रूप सुरक्षित रख पाते हैं, स्वतन्त्रता को प्यार करते हैं, लालच, निजी स्वार्थ और घटियापन से ऊपर उठ सकते हैं। यही हैं

वे मानवीय गुण जो गोर्की और उनके साहित्य को सर्वप्रिय बनाते हैं। "चेल्काश" ऐसी कहानियों का बहुत ही सुन्दर उदाहरण है। गोर्की की कहानियों के अधिकतर पात्रों में जीवन को बेहतर बनाने, उसका रूप बदलने, उसे नये सांचे में ढालने की तड़प और विह्वलता पाई जाती है। "ओरलोव दम्पति" का ओरलोव ऐसी ही इच्छा से उबलता हुआ सा प्रतीत होता है। वह कहता है कि "मेरी आत्मा दहक रही है... वह विस्तार चाहती है... असीम शक्ति अनुभव करता हूं मैं अपने में..." हमारे प्रसिद्ध आधुनिक लेखक कृष्णचन्द्र का यह कथन बिल्कुल सही है कि "गोर्की के नायक अमानवीय, ग़रीबी और पतन की परिस्थितियों में रहते हुए भी उनके विरुद्ध संघर्ष करते हैं, भिन्न और बेहतर लोग बनना चाहते हैं।" प्रसिद्ध आलोचक अमृतराय का यह कथन बहुत उपयुक्त लगता है कि "गोर्की अपनी रचनाओं में मौत पर ज़िन्दगी का झंडा गाड़ते से प्रतीत होते हैं।"

हां, गोर्की के नायक, उनके पात्र जीवन के प्रति उत्साह से ओत-प्रोत हैं, वे उसे बदलना चाहते हैं, बेहतर बनाना चाहते हैं। लेकिन कैसे? क्या उनकी यह चाह हवाई है? अगर "ओरलोव दम्पति" कहानी का ओरलोव इस प्रश्न का उत्तर नहीं जानता, तो "टक्कर" नाटक का नायक नील इसका उत्तर जानता है, जब वह यह कहता है कि "जो काम करता है, वही स्वामी है।" निश्चय ही समाज के कर्णधार दूसरों की मेहनत पर जीनेवाले शोषक नहीं हैं, बल्कि मेहनत से धन पैदा करनेवाले श्रमिक हैं। "मां" उपन्यास का नायक पावेल व्लासोव तो और भी स्पष्ट रूप से इस बात को समझता है। वह जानता है कि पूंजीवादी समाज को बदले बिना शोषित और उत्पीड़ित लोगों की मुक्ति नहीं हो सकती। भारत के साधारण मेहनतकश तो दोहरे शोषण की चक्की में पिस रहे थे, अंग्रेज़ी साम्राज्य-वाद की चक्की में और भारतीय जमींदारों और बढ़ते हुए पूंजीपतियों की चक्की में। इसी लिये रूस और दुनिया के अन्य देशों की भांति भारत के क्रान्तिकारियों, समाजवादियों और मजदूर आन्दोलन के सक्रिय कार्यकर्त्ताओं और मजदूरों ने बड़े उत्साह से "मां" का स्वागत किया, उसे पढ़ा और आज भी पढ़ा जा रहा है, उससे प्रेरणा प्राप्त की जा रही है।

गोर्की के साहित्य का एक व्यापक तत्त्व है—मानवतावाद। वे मानव और उसकी गरिमा को सबसे ऊंचा स्थान देते हैं। मानव की प्रतिष्ठा का

उन्होंने बहुत सशक्त शब्दों में स्तुति-गान किया है। "मानव–वह अद्भुत है! मानव–कैसी गर्वीली गूंज है इस शब्द में!" इस दृष्टि से गोर्की ने महान रूसी साहित्य और विश्व-साहित्य की परम्परा को आगे बढ़ाया है। लेकिन गोर्की का मानवतावाद सक्रिय मानवतावाद है, वह मानव के प्रति दया पर नहीं, उसके प्रति आदर भावना पर आधारित है। "व्यक्ति का आदर करना चाहिये! दया नहीं... दया से उसका अपमान नहीं करो... उसका आदर करना चाहिये!" मानव की गरिमा और प्रतिष्ठा पर यदि आघात पहुंचता है, तो गोर्की उसकी रक्षा के लिये संघर्ष का आह्वान करते हैं और यह विश्वास पैदा करते हैं कि इस संघर्ष का अन्त निश्चय ही विजय में होगा। सज्जाद ज़हीर के ये शब्द बहुत सही हैं कि "गोर्की ने मानवात्मा में विश्वास पैदा किया।" कहना न होगा कि भारतीय लेखकों की एक पूरी पीढ़ी ही गोर्की के कृतित्व से प्रभावित हुई है। जब तक अन्याय, असमानता, मानव की अवहेलना, जातीय भेद-भाव के विरुद्ध तथा उज्ज्वल भविष्य और बेहतर जीवन के लिये संघर्ष होता रहेगा, गोर्की की रचनायें हमें प्रेरित करती रहेंगी।

तो इस तरह गोर्की के प्रस्तुत कहानी संग्रह के सन्दर्भ में मैंने इन कहानियों और गोर्की की अन्य रचनाओं से कुछ उदाहरण देते हुए गोर्की की महान प्रतिभा के कुछ लक्षणों पर प्रकाश डालने और भारतीय पाठकों में उनकी लोकप्रियता के कारणों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। मुझे आशा है कि गोर्की की रचनाओं के रस-पान में सहृदय पाठकों को इससे कुछ सहायता मिलेगी। किन्तु गोर्की के प्रति आभार-प्रदर्शन के बिना मैं अपनी इस भूमिका को समाप्त नहीं करना चाहूंगा। वास्तव में बात आभार की भी नहीं है, उस ऋण की है, जिससे हम भारतीय कभी उऋण नहीं हो सकते। मेरा अभिप्राय उस गहरी दिलचस्पी से है, जो गोर्की ने भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में ली, उस उत्साह से है, जिससे उन्होंने भारत की प्राचीन संस्कृति और साहित्य को जांचा-परखा, अपने अनेक लेखों में भारत की प्राचीन उपलब्धियों की मुक्त कण्ठ से सराहना की और इस तरह जहां सदियों की औपनिवेशिक दासता में पिसे, हीनवृत्ति के शिकार और हतोत्साहित हुए भारतीयों में विश्वास और स्वाभिमान की भावना पैदा करने में योग दिया, वहां अपने देशवासियों और पश्चिमी पाठकों के सम्मुख भारत का एक गौरवशाली रूप भी प्रस्तुत किया।

भारत के स्वतंत्रता-संग्राम में गोर्की के सक्रिय सहयोग का प्रमाण वे लेख हैं, जो उन्होंने १९१२–१९१३ में "सोव्रेमेन्निक" (समकालीन) पत्रिका के तीन अंकों में लिखे थे। उन्होंने निष्कर्ष निकालते हुए लिखा था–"भारत में इस बात का विश्वास दिलानेवाली आवाज अधिकाधिक जोर पकड़ती जा रही है कि अब वह समय आ गया है, जब भारतीयों के लिये सामाजिक और राजनैतिक निर्माण-कार्य अपने हाथ में लेना जरूरी हो गया है, कि भारत में अंग्रेजी राज्य के दिन पूरे हो चुके हैं।" इन्हीं दिनों गोर्की भारतीय क्रान्तिकारी कृष्ण वर्मा श्याम जी और श्रीमती कामा से पत्र-व्यवहार कर रहे थे और उन्होंने श्रीमती कामा से भारतीय नारियों के जीवन के बारे में एक लेख भेजने का अनुरोध भी किया था। गोर्की ने अंग्रेज साम्राज्यवादियों द्वारा वीर सावरकर को दिये जानेवाले दण्ड के विरुद्ध भी आवाज उठाई थी। वर्तमान शताब्दी के दूसरे-तीसरे दशक में जब भारत के स्वतंत्रता-संघर्ष ने खूब जोर पकड़ा, तो गोर्की ने यह अनुभव किया कि भारत की आजादी का दिन निकट आ रहा है। १९३२ में उन्होंने अमरीकी संवाददाताओं से कहा–"अंग्रेज लार्ड और व्यापारी ३० करोड़ भारतीयों को फूटी आंखों नहीं सुहाते और वे अधिकाधिक यह समझते जा रहे हैं कि इंगलैंड के दास होने की भूमिका भगवान ने उनके लिये निर्धारित नहीं की है।" गोर्की ने उन लोगों को भी मुंहतोड़ जवाब दिया था जो यह दावा करते थे कि पूरब के लोग निरंकुश शासन के अतिरिक्त किसी और शासन-प्रणाली का अर्थ नहीं समझते कि उन्हें स्वामी की सत्ता अपेक्षित है। गोर्की ने इस सम्बन्ध में लिखा था–"भारत में राष्ट्रीय क्रान्ति ने अपने को काफ़ी ठोस शक्ल में जाहिर किया है और बहुत पहले अतीत में भी, सिपाहियों के विद्रोह को भी इस तरह स्पष्ट करना बहुत कठिन है कि भारतीय निरंकुश शासन के अभ्यस्त हैं। गोर्की ने ऐसे महानुभावों (gentlemen) के विरुद्ध लगातार आवाज उठाई जो अपनी लूट-खसोट के लिये भारत के दरवाजे खुले रखना चाहते थे। उन्होंने उन पूंजीवादी दार्शनिकों और मानवतावादियों को भी आड़े हाथों लिया, जो मानव-कल्याण और प्यार-मुहब्बत की चिकनी-चुपड़ी बातें करते हैं, लेकिन ऐसी सामाजिक व्यवस्था की ओर से आंखें मूंद लेते हैं, जिसके अन्तर्गत मुट्ठी भर शासक उपनिवेशों के करोड़ों लोगों का शोषण करते हैं। इस तरह हम देखते हैं कि गोर्की भारत के बहुत बड़े और सच्चे मित्र थे।

भारतीय पाठकों के लिये यह जानना भी दिलचस्प होगा कि मार्क्सवादी होने के नाते गोर्की गांधी जी के दृष्टिकोणों से सहमत नहीं थे, फिर भी रूसी पाठकों को महान भारतीय नेता के जीवन और कार्य-कलापों से परिचित कराने के लिये उन्होंने १९२३ में रोमां रोलां से, जो गांधी जी के बड़े प्रशंसक थे, "बेसेदा" (बातचीत) पत्रिका के लिए ये एक लेख भेजने का अनुरोध किया था।

गोर्की प्राचीन भारतीय इतिहास और साहित्य से भी भली भांति परिचित थे। मानवजाति के इतिहास के बारे में अपना मत प्रकट करते हुए गोर्की ने लिखा था – "मानवजाति का इतिहास यूनान और रोम से नहीं, भारत और चीन से आरम्भ करना चाहिये।" इसी प्रकार साहित्य कला के विकास के बारे में भी गोर्की ने यह मत प्रकट किया है कि उस का आरम्भ होमर की 'इलियाद' और 'ओदीसी' से नहीं, भारत की, कुल मिलाकर पूरब की पौराणिक कथाओं से होना चाहिये। गोर्की के व्यक्तिगत पुस्तकालय में रामायण, प्राचीन भारतीय दन्त-कथायें, हठ-योग, गांधी जी की जीवनी और टैगोर के उपन्यास अभी तक सुरक्षित हैं। जब "विश्व साहित्य" प्रकाशनगृह की प्रकाशन-योजना तैयार की गयी थी, तो गोर्की ने उसमें रामायण, महाभारत, और पंचतन्त्र को भी शामिल किया था, जिन्हें वे विश्व-साहित्य के बहुमूल्य रत्न मानते थे।

उपर्युक्त कुछ तथ्यों से यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि गोर्की न केवल अपनी महान साहित्यिक देन के कारण ही, बल्कि एक सजग राजनैतिक और सांस्कृतिक कार्यकर्त्ता के रूप में भी भारतीयों के स्नेह-पात्र होने के अधिकारी हैं।

मुझे आशा ही नहीं, विश्वास भी है कि आनेवाले वर्षों में भारतीय पाठकों में गोर्की की लोकप्रियता निरन्तर बढ़ती जायेगी और वे अंग्रेजी में नहीं, बल्कि भारतीय भाषाओं में अधिक अच्छे अनुवादों की मांग करेंगे। शायद मेरे लिये अन्त में यह जोड़ देना अनुचित न होगा कि मास्को का प्रगति प्रकाशन इस क्षेत्र में बहुत उपयोगी काम कर रहा है।

'मधु'

मकर चुद्रा

समुद्र की ओर से ठंडी नम हवा आ रही थी, साहिल की तरफ़ दौड़ती लहरों की उदास नृत्य-धुन और तटवर्ती झाड़ियों की सरसराहट को घास के सुविस्तृत मैदानों में अपने साथ ला रही थी। रह-रहकर हवा का झोंका आता और अलाव में चुरमुर हुए पीले पत्तों की आहुति डाल जाता, जिससे लपटें लपलपा उठतीं; शरद-रात्रि का अंधेरा कांप उठता और भयभीत होकर पीछे हट जाता, क्षण भर को बाईं ओर सीमाहीन स्तेपी और दाहिनी ओर सीमाहीन समुद्र की झलक मिलती और मेरे सामने एक वृद्ध जिप्सी मकर चुद्रा का आकार उभरता, जो पचासेक डग दूर अपने कैम्प के घोड़ों की निगरानी कर रहा था।

ठंडी हवा के झोंकों ने उसके कोट के पल्लों को उघाड़ दिया था और उसकी बालदार नंगी छाती पर बेरहमी से थपेड़े मार रहे थे, लेकिन वह इनसे बेख़बर मेरी ओर मुंह किए सौम्य और सशक्त मुद्रा में लेटा हुआ, अपने बहुत बड़े पाइप से बराबर कश खींच रहा था, नाक और मुंह से धुएं के घने बादल छोड़ रहा था। मेरे सिर के ऊपर से स्पेती के निस्तब्ध अंधकार पर कहीं अपनी नज़र जमाये और हवा के तेज थपेड़ों से अपने आपको बचाने का ज़रा भी प्रयत्न न करते हुए मुझसे बातें कर रहा था—

"तो तुम दुनिया की धूल छानते फिर रहे हो? बहुत ख़ूब! बहुत अच्छा रास्ता पकड़ा है तुमने, मेरे सूरमा! ऐसा ही करना भी चाहिये—घूम-फिरकर दुनिया देखो, जब मन भर जाए तो पड़ रहो और सदा के लिये आंखें मूंद लो—बस, क़िस्सा ख़त्म!"

उसकी "ऐसा ही करना भी चाहिये" वाली बात मुझे जंची नहीं। मेरी आपत्ति सुन वह सशंक अन्दाज़ में बोला—

"जीवन? अन्य लोग? भई वाह! तुम्हें क्या लेना-देना है इस सब से? क्या तुम ख़ुद अपने में ही जीवन नहीं हो? और जहां तक अन्य लोगों का सम्बन्ध है, तो वे तुम्हारे बिना भी जी रहे हैं और जी लेंगे। क्या तुम सचमुच यह समझते हो कि तुम्हारी किसी को जरूरत है! न तो तुम रोटी हो और न लाठी, और इसलिये किसी को भी तुम्हारी जरूरत नहीं है।

"सीखो और दूसरों को सिखाओ, – तुम यह कहते हो, न? लेकिन क्या तुम लोगों को सुखी होना सिखा सकते हो? नहीं सिखा सकते। दूसरों को सिखाने से पहले जरा अपने बाल तो पक जाने दो। फिर तुम उन्हें सिखाओगे भी क्या? हर आदमी अपनी जरूरत को समझता है। जो चतुर हैं, वे जो कुछ मिलता है, उसे ले लेते हैं, जो बुद्धू हैं, वे टापते रह जाते हैं और हर कोई अपने आप ही सीखता है...

"अजीब हैं तुम्हारे ये लोग भी। एक ही जगह जमघट लगा बैठे, रेल-पेल कर रहे हैं, जबकि दुनिया में इतनी जगह पड़ी है," उसने मैदान की ओर हाथ घुमाया – "और सब के सब काम में जुते रहते हैं। किसलिये? किसके लिये? यह कोई नहीं जानता। जब कभी मैं किसी आदमी को खेत जोतते देखता हूं तो मन ही मन सोचता हूं – यह देखो, वह अपनी शक्ति और अपना पसीना बूंद-बूंद करके धरती में खपाए दे रहा है, केवल इसी लिये न कि अन्त में इसी धरती में उसकी जगह होगी और वहीं पड़ा-पड़ा गल-सड़ न जायेगा। कुछ भी वह अपने पीछे नहीं छोड़ जाएगा। अपने खेतों के सिवा और कुछ भी तो वह नहीं देख पाता और जैसा निपट मूर्ख पैदा हुआ था, वैसा ही मर जायेगा।

"क्या इसी लिये उसने जन्म लिया था कि धरती को खोदता रहे और ख़ुद अपने लिए एक क़ब्र तक खोदने का प्रबंध किए बिना इस दुनिया से कूच कर जाए? क्या उसने कभी आज़ादी का भी स्वाद चखा? क्या उसने इन मैदानी विस्तारों की ओर नजर उठाकर भी कभी देखा? समुद्र के मर्मर-संगीत को सुनकर उसका मन कभी खिला? वह एक ग़ुलाम है – जन्म के दिन से मृत्यु के दिन तक ग़ुलाम रहता है, बस! वह अपने साथ कर ही क्या सकता है? कुछ नहीं, सिवा इसके कि अपने गले में फंदा डालकर लटक जाए – अगर इसमें इतनी भी समझ हो तो!

"अब रही मेरी बात, अठावन साल की उम्र तक इतना कुछ देखा है मैंने कि उसे अगर काग़ज़ पर उतारा जाए तो वह, जैसा थैला तुम लिये

फिर रहे हो, वैसे हजार थैलों में भी न समा पाये। जरा नाम तो लो किसी ऐसी जगह का, जो मैंने न देखी हो? नहीं, तुम एक भी ऐसी जगह का नाम नहीं ले सकते। तुमने तो नाम भी नहीं सुने होंगे उन जगहों के जहां मैं हो आया हूं। बस, ऐसे ही जीना चाहिये—चलते जाओ, चलते जाओ किसी भी जगह ज्यादा न टिको,—कोई टिके भी क्यों? जिस प्रकार दिन और रात एक दूसरे का पीछा करते हुए धरती का चक्कर लगाते रहते हैं, ठीक वैसे ही, अगर तुम जीवन से ऊबना नहीं चाहते, तो जीवन के बारे में सोचने से दूर भागते रहो। जीवन के बारे में जैसे ही सोचने लगते हैं, वैसे ही उसका उल्लास वहीं समाप्त हो जाता है। मेरे साथ भी ऐसा ही हुआ था। अरे हां! सच, ऐसा ही हुआ था, मेरे सूरमा।

"यह उन दिनों की बात है, जब मैं गालीसिया की जेल में था। 'किसलिये जिन्दा हूं मैं इस दुनिया में?' उदास होकर मैं सोचता। जेल में बड़ी ऊब महसूस होती है, मेरे सूरमा, ओह, कितनी ऊब महसूस होती है! जब मैं खिड़की से बाहर खेतों की ओर देखता, तो मेरा मन बुरी तरह उदास हो उठता, ऐसे लगता कि मानो उदासी ने उसे किसी संडसी से दबोच लिया हो। कौन बता सकता है कि आखिर आदमी किसलिये जीता है? कोई नहीं बता सकता, मेरे सूरमा! और अपने आपसे यह पूछना नहीं चाहिये। जीते जाओ, और बस! घूमो-फिरो और जो कुछ देखा जा सकता है, देखो। तब उदासी तुम पर कभी हावी नहीं हो सकेगी। एक बार तो अपनी पेटी का फंदा गले में डालकर मैं झूल ही गया होता!

"अरे, हां! एक आदमी से मेरी अच्छी बातचीत हुई। बड़ा धीर-गम्भीर था, कोई तुम्हारा ही रूसी। बोला—'जैसे मन में आये, वैसे नहीं, बल्कि जैसे ख़ुदा की किताब में लिखा है, वैसे जीना चाहिये। ख़ुदा की बात मानोगे, तो वह तुम्हारी हर मुराद पूरी करेगा।' वह ख़ुद चिथड़े पहने था। मैंने कहा—'ख़ुदा से एक नया सूट क्यों नहीं मांग लेते?' इसपर वह बुरी तरह बिगड़ खड़ा हुआ और गालियां देते हुए मुझे भगा दिया। लेकिन कुछ ही क्षण पहले, वह उपदेश झाड़ रहा था कि लोगों से प्रेम करना चाहिये, उन्हें क्षमा करना चाहिये। अगर मैंने उसका दिल दुखा ही दिया था, तो कर देता मुझे माफ़। ऐसे होते हैं तुम्हारे ये उपदेशक! सीख देते हैं कि कम खाओ और ख़ुद दिन में दस बार खाते हैं।"

उसने आग में थूका और चुप हो गया, फिर से पाइप सुलगाने लगा।

हवा धीमी और उदास थी, अंधेरे में घोड़े हिनहिना रहे थे और जिप्सियों के कैम्प से एक गीत के कोमल, अनुराग भरे स्वर वातावरण में तैर रहे थे। मकर की अतीव सुन्दर बेटी नोन्का गा रही थी। कंठ की गहराई से निकली उसकी मधुर आवाज़ मैं पहचानता था और बड़ी अजीब-सी बात थी कि वह चाहे कोई गीत गाती होती या सिर्फ़ "सलाम" कहती, हमेशा उसमें असंतोष और आदेश का पुट मिला रहता था। उसके सांवले चेहरे पर रानी जैसी अहम्मन्यता का भाव चस्पां हो गया था और उसकी गहरी भूरी आंखों की परछाइयों में उसके अपने असीम सौन्दर्य की चेतना और अपने से भिन्न हर चीज़ के प्रति घृणा की एक भावना थिरकती रहती थी।

मकर ने अपना पाइप मेरे हाथ में थमा दिया।

"यह लो, पियो। ख़ूब गाती है न लौंडिया? हां, हां! चाहोगे कि कोई ऐसी ही तुमसे प्रेम करने लगे? नहीं? बहुत ठीक। ऐसा ही होना चाहिये—लड़कियों पर कभी भरोसा न करो और उनसे दूर रहो। लड़कियों को पुरुष का मुंह चूमने में जितना आनन्द आता है, उतना मुझे अपने पाइप पीने में भी नहीं आता। लेकिन जैसे ही तुमने किसी लड़की का मुंह चूमा कि तुम्हारी आज़ादी सदा के लिये ख़त्म हो गई। अदृश्य बन्धनों में वह तुम्हें जकड़ लेगी, जो तोड़े नहीं टूटेंगे, और तुम हृदय और आत्मा से उसके होकर रह जाओगे। ठीक बात है! लड़कियों से ख़बरदार रहना! सदा झूठ बोलती हैं! कहेंगी कि तुमपर ही जान देती हैं, लेकिन अगर कहीं तुम ने उन्हें पिन भी चुभो दिया, तो वे तुम्हारा दिल चीर निकालेंगी। सब जानता हूं मैं! ओह, कितना कुछ जानता हूं मैं! कहो तो तुम्हें एक सच्ची कहानी सुनाऊं, मेरे सूरमा? इसे तुम अपने हृदय में गांठ-बांधकर रखना—ऐसा करोगे तो जीवन भर आज़ाद पंछी रहोगे।

"बहुत दिनों की बात है। ज़ोबार—एक युवक जिप्सी लोइको ज़ोबार था इस दुनिया में। हंगरी और बोहेमिया, स्लावोनिया और समुद्र के इर्द-गिर्द के सभी प्रदेशों में लोग उसे जानते थे। बड़ा ही दिलेर था वह नौजवान! उन इलाक़ों में एक भी तो ऐसा गांव नहीं था, जहां चार-पांच लोग ज़ोबार की जान लेने की क़सम न खाये बैठे हों, लेकिन वह मज़े से जिये जाता था। कोई घोड़ा उसकी नज़र में चढ़ना चाहिये, फिर तो पूरी पलटन भी अगर उसकी रखवाली करती, तो भी वह उसकी पीठ पर अठखेलियां करता दिखाई देता। अरे! वह और किसी से डरे? ख़ूब

शैतान भी अगर अपने पूरे दल-बल के साथ आ जाता, तो वह उसके सीने में अगर खंजर न उतारता, तो कम से कम इतना तो निश्चित समझो कि वह उसे ख़ूब मोटी-मोटी गालियां देता और राक्षसों के थूथनों पर लातें जमाता।

"जिप्सियों के हर ख़ेमे में लोग ज़ोबार को जानते थे या उन्होंने उसके बारे में सुना था। सिर्फ़ घोड़ों से ही प्यार था उसे — सो भी किसी एक घोड़े से अधिक दिन प्यार न करता। कुछ दिन सवारी करता और बेच डालता और पैसे, जो भी हाथ फैलाता, उसे ही दे डालता। उसे किसी भी चीज़ का मोह नहीं था। तुम्हें उसका दिल चाहिये, ख़ुद छाती चीरकर तुम्हें दे देता। ऐसा आदमी था वह, मेरे सूरमा।

"उन दिनों, — कोई दस वर्ष पहले — हमने बुकोविना में डेरा डाल रखा था। बसन्त के दिन थे। एक रात हम लोग बैठे हुए थे — मैं, सैनिक दानिलो, जो कोशूत की कमान में लड़ चुका था, बूढ़ा नूर, दानिलो की लड़की राद्दा और कई दूसरे लोग।

"मेरी नोन्का को तो तुम जानते हो न? बला की ख़ूबसूरत है! राद्दा से उसकी तुलना करना उसे आसमान पर चढ़ाना होगा। राद्दा इतनी सुन्दर थी कि बयान से बाहर। शायद उसके सौन्दर्य को वायोलिन के स्वरों में व्यक्त किया जा सके और वह भी तभी, जब वादक वायोलिन को अपनी आत्मा की तरह जानता हो।

"बहुत-से जवान राद्दा के प्रेम में घुल चुके थे, बहुत-से! एक बार मोराविया के एक धनिक वृद्ध ने उसे देखा और स्तब्ध रह गया। वह अपने घोड़े पर बैठा बस उसे ताकता ही रहा। उसका समूचा बदन ऐसे कांप रहा था मानो उसे जूड़ी आ गई हो। ऐसे सजा-धजा था मानो शैतान जश्न मनाने निकला हो। उसका उक्रइनी कोट ज़री के काम से अटा था, बग़ल में लटकती तलवार बहुमूल्य रत्नों से जड़ी थी, जिनसे घोड़े के ज़रा-सा भी हिलने पर बिजली की भांति चमक निकलती थी, नीले रंग की उसकी मख़मली टोपी तो मानो नीले आकाश का टुकड़ा ही हो। बहुत ही बड़ा आदमी था वह खूसट। राद्दा को देखता रहा, देखता रहा और फिर बोला — 'एक चुम्बन के लिए सोने की यह थैली न्यौछावर कर दूंगा!' राद्दा ने अपना मुंह फेर लिया, और बस। खूसट धनिक ने अब अपना स्वर बदला — 'अगर मैंने तुम्हारा अपमान किया हो तो माफ़ी चाहता हूं। प्यार से एक नज़र देख ही लो,' और यह कहते हुए थैली उसके पांवों के पास फेंक दी।

थैली काफ़ी भारी थी, मेरे दोस्त! लेकिन उसने, मानो अनजाने ही, उसे ठुकराकर धूल में धकेल दिया और बस, क़िस्सा ख़त्म।

"'वाह री, छोकरी!' उसने आह भरी, घोड़े पर चाबुक फटकारा और धूल का बादल उड़ाता चला गया।

"अगले दिन वह फिर आया। 'इसका बाप कौन है?' उसने घन-गर्जन करते हुए पूछा। दानिलो आगे बढ़ आया। 'अपनी लड़की मुझे बेच दो। मुंह-मांगे दाम ले लो।' मगर दानिलो ने जवाब दिया–'बेचते तो सब कुछ बड़े लोग ही हैं–सुअरों से लेकर अपनी आत्मा तक। और मैं, जो कोशूत की कमान में लड़ चुका हूं, बेचने-बेचने का धंधा नहीं करता!' धनिक ख़ूब गरजा और उसने अपनी तलवार खींच ली। लेकिन तभी किसी ने एक जलती हुई खपची घोड़े के कान से छुवा दी और वह मय अपने मालिक के हवा हो गया। हमने भी अपना डंडा-डेरा उठाया और सड़क की राह ली। एक दिन गुज़रा, फिर दूसरा, देखा कि वह फिर आ धमका है। 'अरे! सुनो तो,' वह चिल्लाकर बोला–'तुम्हें और ख़ुदा को हाज़िर-नाज़िर मानकर कहता हूं कि मेरी नीयत में बदी नहीं है। मैं इस लड़की को अपनी बीवी बनाना चाहता हूं। अपना सब कुछ तुम्हारे साथ बांट लूंगा और दौलत मेरे पास बेशुमार है!' उसका अंग-अंग तमतमा रहा था और वह इस तरह हिल रहा था जैसे हवा में सूखी घास। हम सोचने लगे।

"'बोल बेटी,' दानिलो मूंछों के बीच से बुदबुदाया।

"राद्दा ने हम से पूछा, 'अगर मादा-उक़ाब अपनी मर्ज़ी से किसी कौवे के घोंसले में चली जाए तो वह क्या होकर रह जायेगी?'

"दानिलो हंसा और उसके साथ ही हम सब भी।

"'वाह, बेटी! सुना, हुज़ूर? यहां दाल नहीं गलेगी। किसी कबूतरी पर डोरे डालो, वह सहज फंस जायेगी।' और हम आगे चल दिये।

"इसपर उस धनी ने अपनी टोपी उतारकर ज़मीन पर पटक दी और घोड़े को ऐसे सरपट उड़ा ले चला कि धरती हिल उठी। देख तो, मेरे सूरमा, ऐसी थी वह राद्दा!

"हां, तो एक रात हम बैठे हुए थे कि एकाएक मैदानों में संगीत तैरता सुनाई दी। बड़ा ही प्यारा संगीत! ऐसा कि रगों में रक्त थिरकने लगा, और ऐसा मालूम हुआ जैसे किसी अज्ञात लोक की ओर वह हमें खींचे लिये जा रहा हो। हम सब ने महसूस किया कि इस संगीत से हमारे

दिलों में कुछ ऐसी चाह पैदा कर दी है, जिसकी पूर्ति के बाद जीने की आवश्यकता ही नहीं रह जायेगी, और अगर जीवित रहे भी, तो समूचे विश्व के स्वामी बनकर, मेरे सूरमा!

"तभी अंधकार में से एक घोड़ा प्रकट हुआ, और उसपर बैठा एक आदमी हमारी तरफ़ बढ़ता हुआ चिकारा बजा रहा था। अलाव के पास आकर उसने घोड़ा रोका, चिकारा बजाना बन्द कर दिया और मुस्कराता हुआ हमें देखने लगा।

"'अरे जोबार, तुम हो!' दानिलो ने उछाह से चिल्लाकर कहा। तो यह है लोइको जोबार! मूंछें कंधों को छूती हुई घुंघराले बालों के साथ घुल-मिल गई थीं। आंखें, जैसे दो उजले सितारे, चमकती हुईं और मुस्कान जैसे सूरज की खिली धूप, क़सम ख़ुदा की! ऐसा मालूम होता था मानो वह और उसका घोड़ा एक ही धातु-खंड से काटकर बनाए गये हों। अलाव की रोशनी में रक्त की भांति लाल था वह और जब हंसता तो उसके दांत चमक उठते। सच, बुरा हो मेरा अगर मैं झूठ बोलूं, कि इससे पहले कि उसने मुझसे बात की, या इतना ध्यान ही दिया कि इस धरती पर मैं भी सांस लेता हूं, मैं उसे वैसे ही प्यार करने लगा जैसे ख़ुद को करता हूं!

"देखा, मेरे सूरमा, कैसे-कैसे लोग होते हैं! उसने तुम्हारी आंखों में देखा ही कि तुम उसके हो गये हो और इससे तुम्हें शर्म नहीं आयेगी, बल्कि गर्व होगा। ऐसे आदमी का साथ होने पर तुम ख़ुद ऊंचे हो जाते हो। बहुत थोड़े हैं ऐसे लोग, मेरे दोस्त! यह अच्छा ही है कि वे कम हैं। अगर दुनिया में अच्छी चीज़ों की भरमार होती तो उनकी अच्छों में गिनती न होती। तो ख़ैर, आगे सुनो।

"राद्दा ने उससे कहा—'बहुत अच्छा चिकारा बजाते हो तुम, लोइको। इतनी सुरीली आवाज़ वाला चिकारा तुम्हें किसने बनाकर दिया है?' वह हंसा और बोला—'मैंने ख़ुद बनाया है! और सो भी लकड़ी से नहीं, उस युवती की छाती से जिसे मैं जी-जान से प्यार करता था,—इसके तार उसके दिल से बनाये गये हैं। अब भी कभी-कभी इससे बेसुरी आवाज़ें निकलती हैं, लेकिन कमानी को अपने इशारों से चलाना मैं जानता हूं।'

"यह तो जानी हुई बात है कि मर्द हमेशा अपने प्रति चाह जगाकर लड़की की आंखों को धुंधलाने की कोशिश करते हैं ताकि उसके नेत्र-बाणों से अपने हृदय की रक्षा कर सकें। और लोइको ने भी ऐसा ही किया।

2*

लेकिन वह यह नहीं जानता था कि इस बार किससे उसका पाला पड़ा है। राद्दा ने बस मुंह फेर लिया और जमुहाई लेते हुए कहा—'मैंने तो सुना था कि जोवार समझदार और चतुर है। एकदम ग़लत!' और यह कहकर वह चली गई।

"'अरी, वाह री हसीना, बड़ी तेज़ ज़बान है तुम्हारी!' उसकी आंखें चमक उठीं। 'हां, तो साथियो, सलाम! तुम लोगों के पास आया हूं।'

"'बहुत ख़ुशी हुई!' दानिलो ने जवाब दिया।

"हम गले मिले, बातचीत हुई और फिर सो रहे... ख़ूब गहरी नींद सोए। सुबह उठे तो देखा कि जोवार के सिर पर पट्टी बंधी है। यह क्या मामला है? मालूम हुआ कि रात को सोते समय घोड़े ने लात दे मारी।

"हा, हा, हा! हम समझ गये कि वह घोड़ा कौनसा है और हम सभी मुस्करा दिये, दानिलो भी। तो क्या जोवार भी राद्दा के लायक़ नहीं था? हटाओ भी, कैसी बेतुकी बात है! लड़की ख़ूबसूरत चाहे कितनी ही हो, लेकिन आत्मा उसकी छोटी है और दुनिया भर के सोने से लद जाने पर भी छोटी ही बनी रहेगी। पर ख़ैर, हटाओ इस बात को!

"हां, तो हम उसी जगह पर पड़ाव डाले रहे। सभी कुछ मजे से चल रहा था, और लोइको जोवार भी हमारे साथ ही टिका हुआ था। बढ़िया साथी था वह! बड़े-बूढ़ों सा समझदार, सभी बातों का जानकार और पढ़ा-लिखा भी। रूसी भी जानता था और मगयारी भी। और उसकी बातें—रात बीत जाए फिर भी जी न ऊबे। और चिकारा क्या ख़ूब बजाता था—अगर उसकी टक्कर का कोई दूसरा बजानेवाला मिल जाये, तो मैं अपनी जान की बाजी हारने को तैयार हूं। वह कमानी को तारों से छुआता, तो दिल फड़क उठता, कमानी को फिर से तारों पर खींचता तो दम साधकर आदमी सुनता ही रह जाता और वह बजाता और मुस्कराता रहता। उसका चिकारा सुनते हुए रोने को भी जी करता और हंसने को भी। कभी ऐसा मालूम होता कि कोई ज़ार-ज़ार रो रहा है, मदद की याचना कर रहा है और दिल को जैसे चाकू से चीरा जा रहा है। कभी लगता कि स्तेपी आकाश को कथाएं सुना रही है—दर्दभरी कथाएं! कभी लगता कि कोई युवती अपने प्रेमी को विदा करते समय विलाप कर रही है। फिर मालूम होता कि उसका प्रेमी उसे स्तेपी से पुकार रहा है। और फिर अचानक ख़ुशी और मस्ती भरे गीत का घन-गर्जन होने लगता और प्रतीत होता कि आकाश

में सूर्य तक उसे सुनकर थिरकने लगा है। ऐसा चिकारा बजाता था वह, मेरे सूरमा!

"उस संगीत के स्वर रोम-रोम में समा जाते थे श्रौर हमारा कोई स्वतंत्र श्रस्तित्व ही न रह जाता था। श्रगर उस समय ज़ोबार चिल्लाकर कहता – 'साथियो, श्रपने चाकू निकाल लो!' तो हम में से प्रत्येक श्रपना चाकू निकाल लेता, श्रौर जिसकी श्रोर वह इशारा करता, उसी पर टूट पड़ता। श्रपने इशारों पर नचा सकता था वह इन्सान को। श्रौर सभी उसे प्यार करते थे, बेहद प्यार करते थे। एक राद्दा ही ऐसी थी, जो उससे कोई वास्ता नहीं रखती थी। श्रगर इतना ही होता, तो भी कोई बात न थी, वह उसका मज़ाक भी उड़ाती। वह उसके दिल में उतर गयी थी, बहुत गहरी उतर गयी थी। वह दांत पीसता, मूंछों के बाल खींचता, उसकी श्रांखों में श्रतल गहराई की सी कालिमा छा जाती श्रौर कभी-कभी उनमें से ऐसी बिजली-सी कौंधती कि दिल सहमकर रह जाता। रात को वह दूर घास के मैदानों की गहराइयों में चला जाता श्रौर उसका चिकारा सुबह होने तक विलाप करता रहता – श्रपनी खोई हुई श्राजादी का मातम मनाता रहता। श्रौर हम उसके इस विलाप को सुनते श्रौर मन ही मन सोचते – 'क्या किया जाये?' श्रौर हम जानते थे कि जब दो पत्थर एक दूसरे की श्रोर लुढ़कते हैं तो उनके रास्ते में जो भी श्राता है, उसे कुचल डालते हैं। तो ऐसे ही यह क़िस्सा चलता रहा।

"एक रात श्रलाव के पास बैठे बहुत देर तक हम श्रपने मामलों पर बातचीत करते रहे श्रौर जब बातें करते-करते थक चले तो दानिलो ने ज़ोबार से कहा – 'ज़ोबार, कोई ऐसा गीत सुनाश्रो, जिससे दिल को ख़ुशी मिले।' ज़ोबार ने एक नज़र राद्दा पर डाली, जो कुछ ही दूर धरती पर पड़ी श्रासमान की श्रोर देख रही थी श्रौर कमानी को चिकारे के तारों पर घुमाया। चिकारा ऐसे बज उठा मानो उसमें सचमुच ही किसी युवती का दिल धड़क रहा हो। श्रौर उसने गाया –

हे, हे, हे! सीने में है श्राग,
दहकता श्रंगारा
स्तेपी का तो श्रोर न छोर!
करे हवा से बातें, यह घोड़ा प्यारा
बहुत हाथ में मेरे ज़ोर।

"राद्दा ने अपना सिर घुमाया, कुहनियों के बल उचकी और उसकी ओर देखकर व्यंग्यपूर्वक मुस्करा दी। ज़ोबार का चेहरा उषा की भांति लाल हो उठा –

हे, हे, हे! कहो, कहो, तो, मुझसे तुम साथी मेरे!
सरपट आगे अभी बढ़ें?
घना अंधेरा स्तेपी को है अब घेरे
किरणें स्वागत वहां करें।
हे, हे, हे! वहां करें दिन का स्वागत, हम उड़ें-उड़ें
ऊंचाइयां पर चढ़ें-चढ़ें!
पर अयाल को हाथ नहीं लगने पाये
चन्दा नभ में मुस्काये।

"ऐसा बढ़िया गाया! अब कोई ऐसे नहीं गाता! लेकिन राद्दा दबे स्वर में कह उठी –

"'इतना ऊंचा नहीं उड़ना चाहिए तुम्हें, लोइको। ध्यान रखना कहीं मुंह के बल डबरे में जा गिरोगे और तुम्हारी ये सुन्दर मूंछें ख़राब हो जाएंगी।'

"ज़ोबार ने दरिन्दे की तरह उसकी ओर देखा, लेकिन कहा कुछ नहीं, सह गया और गाना जारी रखा –

हे, हे, हे! अगर अचानक यहीं कहीं जो दिन निकले
कहीं अंधेरी रात ढले।
हम-तुम दोनों साथ यहां, लेकिन सोते
पानी-पानी हम होते।

"'यह हुआ गीत!' दानिलो ने कहा – 'ऐसा गीत पहले कभी नहीं सुना, – अगर मैं झूठ बोलूं तो बेशक शैतान मेरे बदन से अपना पाइप बना डाले।'

"बूढ़ा नूर अपनी मूंछों को हिला रहा था, कंधे झटक रहा था, – हम सभी को बहुत अच्छा लगा था ज़ोबार का यह उमंग भरा गीत! सिर्फ़ राद्दा को ही पसन्द नहीं आया था।

"'ऐसे ही एक बार एक मच्छर भनभनाया था, उक़ाब की आवाज़ की नक़ल करते हुए,' उसने कहा और हम सभी पर मानो बर्फ़ का पानी उंडेल दिया।

"दानिलो बड़बड़ा उठा–'कोड़े का मुंह देखे शायद बहुत दिन हो गये हैं, राद्दा!' लेकिन ज़ोबार ने, जिसका चेहरा धरती की भांति काला पड़ गया था, अपनी टोपी उतारकर नीचे फेंक दी और बोला–

"'ठहरो, दानिलो! तेज़ घोड़े के लिये इस्पाती लगाम की ज़रूरत होती है! अपनी बेटी की मुझसे शादी कर दो!'

"'यह भी ख़ूब कही,' दानिलो मुस्कराया–'कर लो शादी, अगर कर सकते हो।'

"'अच्छी बात है,' ज़ोबार ने कहा और फिर राद्दा से बोला–'तो लड़की, अब ज़रा मेरी सुन लो, हां, और बहुत घमंड न करो! बहुत लड़कियों से मेरा पाला पड़ा है, ओह, बहुत से! लेकिन एक भी तुम्हारी तरह मेरे दिल में न उतर सकी। आह, राद्दा, बन्दी बना लिया है तुमने मेरी आत्मा को! मगर हो ही क्या सकता है? जो होना है सो होकर रहेगा, और... ऐसा घोड़ा तो कहीं नहीं है जिसपर सवार होकर ख़ुद अपने से दूर भागा जा सके। ख़ुदा, अपने ईमान, तुम्हारे पिता और इन सब लोगों को गवाह मानते हुए मैं तुम्हें अपनी बीवी बनाता हूं। लेकिन याद रखना, मेरी आज़ादी में ख़लल न डालना,–मैं आज़ाद आदमी हूं और जैसे चाहूंगा, वैसे ही रहूंगा।'

"दांत पीसते और आंखों से चिंगारियां बरसाते हुए वह उसके पास जा पहुंचा। हम देख रहे थे, उसने राद्दा की तरफ़ हाथ बढ़ाया–हमने सोचा–'आख़िर राद्दा ने इस बनैले घोड़े के मुंह में लगाम डाल ही दी।' लेकिन तभी क्या हुआ, कि एकाएक, ज़ोबार की बांहें फैल गईं और उसका सिर धरती से जा टकराया!

"यह क्या हो गया? जैसे गोली ने उसका सीना छलनी कर डाला हो। लेकिन यह तो राद्दा का चाबुक था, जिसने उसकी टांगों में फंदा डालकर अपनी ओर झटका दिया था–तो इसलिये गिरा था लोइको।

"और वह छोकरी अब फिर, पहले की भांति, निश्चल लेट गई थी, व्यंग्य से मुस्कराती हुई। हम देख रहे थे, अब क्या होगा, लेकिन ज़ोबार ज़मीन पर बैठे था, हाथों में कसकर सिर थामे हुए, मानो डर रहा हो

कि कहीं वह फट न जाए। कुछ देर बाद वह चुपचाप उठा ग्रौर किसी की ग्रोर भी देखे बिना, मैदानों की ग्रोर चल दिया। नूर ने फुसफुसाकर मुझसे कहा– 'इसपर नज़र रखो।' सो रात के ग्रंधेरे में मैं भी रेंग चला उसके पीछे-पीछे स्तेपी की ग्रोर। तो यह बात है मेरे सूरमा!"

मकर ने ग्रपने पाइप में से राख झाड़-खुरचकर बाहर फेंकी ग्रौर उसे फिर से भरने लगा। मैंने कोट के पल्लों को ग्रपने बदन के साथ कसकर सटा लिया ग्रौर लेटे-लेटे धूप तथा हवा से स्याह हुग्रा उसका वृद्ध चेहरा देखता रहा। वह खीझ ग्रौर कठोरता से सिर हिलाता हुग्रा मन ही मन कुछ बड़बड़ा रहा था। उसकी पकी मूंछें हिल रही थीं ग्रौर हवा उसके बालों से खिलवाड़ कर रही थी। वह बिजली से जल गये ऐसे पुराने बलूत के समान लग रहा था, जो ग्रभी भी मज़बूत ग्रौर शक्तिशाली हो ग्रौर जिसे ग्रपनी शक्ति पर गर्व हो। सागर पहले की भांति ग्रब भी तट से खुसुर-फुसुर कर रहा था ग्रौर हवा इस फुसफुसाहट को उसी भांति घास के मैदानों में ला रही थी। नोन्का ने गाना बन्द कर दिया था ग्रौर ग्राकाश में घिर ग्राए बादलों ने शरद् की इस रात को ग्रौर भी ग्रन्धकारमय बना दिया था।

"लोइको ज़ोबार के डग बड़ी मुश्किल से उठ रहे थे, उसकी गरदन झुकी थी ग्रौर बांहें चाबुक की डोरियों की भांति बेजान-सी झूल रही थीं। एक पतली-सी धारा के क़रीब पहुंचकर वह एक पत्थर पर बैठ गया ग्रौर उसने एक गहरी ग्राह भरी। ऐसी ग्राह भरी कि मेरा दिल दर्द से ख़ून के ग्रांसू रो दिया, लेकिन फिर भी मैं उसके पास नहीं गया। शब्दों से दुःख थोड़े ही दूर होता है–ठीक है न? यही तो बात है! एक घंटा बीत गया, दूसरा ग्रौर इसके बाद तीसरा, मगर वह ऐसे ही बैठा रहा, न हिला, न डुला।

"मैं पास ही में लेटा हुग्रा था। रात चांदनी थी, दूज के चांद ने सारी स्तेपी में चांदी बिखरा दी थी ग्रौर दूर-दूर तक सब कुछ नज़र ग्रा रहा था। ग्रचानक मैंने क्या देखा कि ख़ेमे की ग्रोर से राद्दा तेज़ क़दम बढ़ाती ग्रा रही है।

"मैं खिल उठा! 'बहुत ख़ूब, राद्दा, बड़ी बहादुर लड़की हो!' मैंने सोचा। वह उसके पास जा खड़ी हुई, मगर उसे कुछ पता नहीं चला। उसने उसके कंधे पर हाथ रखा, लोइको चौंका, ग्रपने हाथ मुक्त किये ग्रौर सिर

उठाकर देखा। वह उछलकर खड़ा हुआ और उसने चाकू निकाल लिया। 'ओह, सीना चीर डालेगा वह लड़की का,' मैंने सोचा और उछलकर मदद के लिये पुकारना ही चाहता था, उनकी ओर भागना ही चाहता था कि तभी मुझे सुनाई दिया—

"'फेंक दो इसे! सिर उड़ा दूंगी!'

"देखा कि राद्दा के हाथ में पिस्तौल है और वह लोइको के सिर का निशाना साधे है। लड़की नहीं, शैतान की खाला थी! 'अरे, हां,' मैंने सोचा, 'अब दोनों बराबर की चोट हैं। देखें, आगे क्या होता है?'

"'सुनो!' पिस्तौल को अपनी पेटी में खोंसते हुए राद्दा ने कहा, 'मैं तुम्हें मारने नहीं आई, सुलह करने आई हूं, चाकू फेंक दो।' उसने चाकू फेंक दिया और त्योरी चढ़ाकर उसकी आंखों में देखने लगा। यह भी एक नज़ारा ही था, मेरे भाई! दो इन्सान खड़े थे, दरिन्दों की भांति एक दूसरे पर नज़र गड़ाए थे, और दोनों ही इतने सुन्दर थे, इतने बहादुर थे! उन्हें देख रहा था उजला चांद और मैं—बस।

"'मेरी बात सुनो, लोइको, मैं तुम्हें प्यार करती हूं,' राद्दा बोली। वह केवल कंधे झटककर रह गया—उस आदमी की तरह, जिसके हाथ-पांव बंधे हों।

"'बहुत लोग देखे हैं मैंने, लेकिन तुम उन सबसे बहादुर हो, दिल और शक्ल-सूरत में भी बढ़-चढ़कर हो। अगर मैं चाहती, तो मेरे इशारा करते ही उनमें से हरेक अपनी मूंछें मुंड़ाने के लिये तैयार हो जाता, मेरे पांव की धूल तक चाटने में भी आनाकानी न करता। लेकिन किसलिये? मर्द तो वे यों ही कुछ ख़ास नहीं थे और मैं उन्हें नकेल डालकर नचाती। बहुत कम बहादुर जिप्सी रह गये हैं, लोइको, बहुत कम। कभी, किसी से प्यार नहीं कर पाई। लेकिन तुम्हें प्यार करती हूं, लोइको। और आज़ादी भी मुझे प्यारी है। आज़ादी को तो मैं तुमसे भी ज्यादा प्यार करती हूं, लोइको। मगर तुम्हारे बिना भी जी नहीं सकती, जैसे तुम मेरे बिना नहीं जी सकते। इसलिये मैं चाहती हूं कि तुम मेरे बनो—तन से भी, मन से भी। सुना तुमने?'

"ज़ोबार ज़रा हंसा। 'सुन रहा हूं! तुम्हारी बातें बड़ी अच्छी लग रही हैं! कहे जाओ!'

"'इतना ही और कहना है मुझे, लोइको, कि तुम चाहे कितना ही छटपटाओ, मैं तुम्हें अपनी गिरिफ़्त से न निकलने दूंगी, तुम्हें मेरा बनना

ही होगा। तो व्यर्थ समय न गंवाओ। मेरे चुम्बन और आलिंगन तुम्हारी बाट जोह रहे हैं,—और अपने चुम्बनों में मैं अपने प्राण उंडेलकर रख दूंगी, लोइको! उनके सामने तुम अपनी सारी मस्ती भूल जाओगे... और जिन्दगी से छलछलाते हुए तुम्हारे गीत, जिन्हें जिप्सी इतने चाव से सुनते हैं, अब मैदानों में नहीं गूंजेंगे, अब तुम गाओगे प्रेम के कोमल गीत केवल मेरे लिये—राद्दा के लिये... तो तुम व्यर्थ समय न गंवाओ—कह दिया मैंने तुम से। यह कि कल से तुम ऐसे ही मेरे सामने सिर झुकाओगे, जैसे अपने से बड़ों के सामने। सभी की मौजूदगी में कल तुम मेरे पांव छूकर दाहिना हाथ चूमोगे,—तब मैं तुम्हारी बीवी बन जाऊंगी।'

"देखा, तो क्या चाहा था इस शैतान की ख़ाला ने! ऐसी बात तो किसी ने देखी-सुनी ही नहीं थी। बड़े-बूढ़ों से यह जरूर सुना था कि पुराने ज़माने में मोन्टेनेग्रिन लोगों में ऐसा होता था, लेकिन जिप्सियों में नहीं। मेरे सूरमा, तुम्हीं इससे अधिक ओछेपन की कोई बात सोचो तो? साल भर दिमाग़ कुरेदने पर भी ऐसी बात नहीं सूझेगी!

"लोइको एक तरफ़ को हटा और ऐसे ज़ोर से चीख़ा जैसे किसी ने उसके दिल में छुरा भोंक दिया हो। समूचे मैदान में उसकी आवाज़ गूंज उठी। राद्दा कांपी, लेकिन अपने भाव छिपा गयी।

"'अच्छा तो कल तक के लिये विदा और कल तुम वह सब करोगे, जो मैंने तुमसे कहा है। सुन रहे हो, लोइको!'

"'सुन रहा हूं! जो कहती हो, करूंगा,' ज़ोबार ने कराहते हुए कहा और अपनी बांहें उसकी ओर बढ़ा दीं। राद्दा ने तो नज़र घुमाकर भी उसकी ओर नहीं देखा, मगर वह आंधी से उखाड़े गये पेड़ की तरह लड़खड़ाया और सिसकता तथा हंसता हुआ धरती पर जा गिरा।

"ऐसा बुरा हाल कर दिया था, शैतान राद्दा ने उस बांके नौजवान का। बड़ी मुश्किल से मैं उसे होश में लाया।

"ओह, किसे भला इसकी जरूरत है कि लोग ऐसे दुःख में घुलें? किसे दुःख से फटे जाते इन्सानी दिल की कराहें अच्छी लग सकती हैं?

"ग़ौर करो अब इस पर! खेमे में लौटकर मैंने बड़े-बूढ़ों को सब कुछ कह सुनाया। हमने मामले पर विचार कर तय किया कि देखें, आगे क्या होता है। और हुआ यह। शाम को हम लोग जब अलाव के गिर्द जमा हुए तो ज़ोबार भी आ बैठा। वह उदासी में डूबा था, एक ही रात में

झटक गया था और उसकी आंखें गढ़ों में धंसी थीं। उसने नजर झुका ली और एक बार भी उसे ऊपर उठाये बिना बोला—

"'साथियो, तो मामला अब यों है—सारी रात मैं अपने दिल को टटोलता रहा और वहां मुझे अपनी पुरानी आज़ादी की ज़िन्दगी के लिये कोई जगह दिखाई नहीं दी। वहां बस, राद्दा ही राद्दा है। यही राद्दा, जो बेहद सुन्दर है और जिसके होंठों पर शाही मुस्कान खेल रही है! वह अपनी आज़ादी को मुझसे ज्यादा प्यार करती है, लेकिन मैं अपनी आज़ादी से ज्यादा प्यार उसे करता हूं और इसलिये मैंने राद्दा के पैरों पर अपना सिर रखने का फ़ैसला किया है। ऐसा ही उसका हुक्म है ताकि सब लोग देखें कि कैसे उसके सौन्दर्य ने उस बहादुर जोबार को अपना गुलाम बना लिया है, जो उससे पहले लड़कियों से ऐसे खेलता था, जैसे बिल्ली चूहे से। तब वह मेरी बीवी बन जायेगी, अपने चुम्बन और प्यार-दुलार मुझपर लुटायेगी, तुम्हें अपने गीत सुनाने को मेरा मन नहीं रहेगा और अपनी आज़ादी पर मुझे तरस नहीं आयेगा। ऐसा ही है न, राद्दा?' उसने अपनी आंखें उठाईं और राद्दा पर प्रचंड दृष्टि जमा दी। राद्दा ने चुपचाप और दृढ़ता से सिर हिलाकर हामी भरी और हाथ से अपने पैरों की ओर इशारा किया। हम देख रहे थे और कुछ भी तो हमारी समझ में नहीं आ रहा था। वहां से उठकर चले जाने तक को मन हुआ ताकि लोइको जोबार को एक छोकरी के—वह चाहे राद्दा ही क्यों न हो—पांवों पर गिरते न देखना पड़े। हमें शर्म भी आ रही थी, दया भी, और दुःख भी हो रहा था।

"'तो!' राद्दा ने जोबार से चिल्लाकर कहा।

"'अरे, ऐसी जल्दी नहीं करो, बहुत वक़्त मौजूद है—इतना ज्यादा कि मुझसे उकता भी जाओ,' जोबार हंस दिया। इस्पात की सी टनक थी उसकी हंसी में!

"'तो साथियो, बस इतनी ही बात है। अब बाक़ी क्या रह गया है? अब सिर्फ़ यही देखना बाक़ी रह गया है कि राद्दा का दिल सचमुच वैसा ही मजबूत है, जैसा उसने मुझे दिखाया है। मैं यह देख लेना चाहता हूं—माफ़ करना मुझे भाइयो!'

"हम तो यह भांप तक नहीं पाये कि जोबार का इरादा क्या है, कि राद्दा को धरती पर पड़ी पाया और जोबार का चाकू मूठ तक उसकी छाती में धंसा हुआ था। हमें तो जैसे काठ मार गया।

"लेकिन राद्दा ने खींचकर चाकू बाहर निकाला, उसे एक ओर फेंक दिया और अपने काले बालों की एक लट से घाव को दबाकर मुस्कराते हुए साफ़ और ज़ोरदार आवाज़ में कहा—

"'अच्छा तो विदा, लोइको। मैं जानती थी कि तुम ऐसा ही करोगे!' और इन शब्दों के साथ उसके प्राण-पखेरू उड़ गये।

"देखा तुमने, मेरे सूरमा, कैसी लड़की थी वह? ऐसी शैतान की ख़ाला कि ढूंढ़े न मिले!

"'अरे हां, अब मैं तेरे पांवों की धूल लूंगा, मेरी गर्वीली रानी।' ज़ोबार ने ऐसे ज़ोर से कहा कि मैदानों में उसकी आवाज़ गूंज उठी। और धरती पर गिरकर उसने मृत राद्दा के पांवों से अपने होंठ सटा दिये और ऐसे ही निश्चल पड़ा रहा। हमने अपनी टोपियां उतार लीं और मौन खड़े रहे।

"ऐसे क्षणों में कोई कह ही क्या सकता है, मेरे दोस्त? नहीं, कुछ भी तो नहीं! नूर बड़बड़ाया, 'इसकी मुश्कें कस लो।' लेकिन लोइको को बांधने के लिये हाथ नहीं बढ़ सकते थे, किसी के भी हाथ नहीं बढ़ सकते थे। और नूर यह जानता था। सो उसने हाथ झटका और वहां से टल गया। दानिलो ने वह चाकू उठाया, जिसे राद्दा ने दूर फेंक दिया था और देर तक उसे एकटक देखता रहा। उसके पके गलमुच्छे बल खा रहे थे। चाकू के पैने और टेढ़े फल पर राद्दा के ख़ून के धब्बे अभी भी मौजूद थे। चाकू हाथ में लिए वह ज़ोबार के पास गया और उसकी पीठ में दिल के सामने भोंक दिया। आख़िर वह भी तो राद्दा का पिता था—वह बूढ़ा सैनिक दानिलो!

"'बस यही कसर रह गयी थी!' दानिलो की ओर मुड़ते हुए ज़ोबार ने एकदम साफ़ आवाज़ में कहा और उसके प्राण-पखेरू भी राद्दा से मिलने उड़ चले।

"हम एकटक देख रहे थे। बालों की लट से सीने को दबाए राद्दा पड़ी थी, उसकी खुली आंखें नीले आकाश की थाह ले रही थीं और बहादुर लोइको ज़ोबार उसके पांवों के पास पड़ा था। घुंघराले बाल उसके चेहरे पर छाये हुए थे, चेहरा दिखाई नहीं दे रहा था।

"हम खड़े-खड़े सोच रहे थे। वृद्ध दानिलो के गलमुच्छे कांप रहे थे और उसकी घनी भौंहें खिंची हुई थीं। वह चुपचाप आकाश को ताके जा

रहा था। लेकिन चांदनी से सफ़ेद बालों वाला बूढ़ा नूर ज़मीन पर पड़ा था और उसका समूचा शरीर सुबकियों से हिल रहा था।

"रोने की तो बात ही थी, मेरे सूरमा!

"...तुम चले जा रहो, चलते जाओ अपने रास्ते पर, उसे न छोड़ो! – सीधे आगे बढ़ते जाओ। शायद तब तुम्हें बुरे अन्त का मुंह न देखना पड़े। बस इतनी ही बात है, मेरे सूरमा!"

मकर चुप हो गया, अपने पाइप को उसने तम्बाकू की थैली में डाला और कोट के पल्लों को छाती पर खींच लिया। बूंदा-बांदी हो रही थी और हवा तेज़ हो गई थी। सागर ग़ुस्से से गंभीर गर्जन कर रहा था। घोड़े एक-एक करके बुझती हुई आग के पास सिमट आए, अपनी बड़ी-बड़ी समझदार आंखों से हमें देखा और फिर हमारे चारों ओर घेरा बनाकर निश्चल खड़े हो गए।

"एइहो!" मकर ने दुलार से उन्हें पुकारा और अपने प्रिय मुश्की घोड़े की गर्दन थपथपाकर उसने मेरी ओर मुड़ते हुए कहा – "अब सोना चाहिये।" और अपने कोट को सिर से पांव तक लपेटकर वह ज़मीन पर लम्बा पसर गया और ख़ामोश हो गया।

मेरी आंखों में नींद नहीं थी। मैं वहीं बैठा मैदान के अंधकार की थाह लेता रहा और मेरी आंखों के सामने सुन्दर और गर्वीली राद्दा की आकृति तैरती रही। काले बालों की लट से वह अपने सीने के घाव को दबाये थी और उसकी पतली-पतली सांवली उंगलियों के बीच से रक्त की बूंदें चू रही थीं, अग्निमय चिंगारियों की भांति धरती पर गिर रही थीं।

उसके पीछे-पीछे बहादुर लोइको ज़ोबार तैर रहा था। काले, घुंघराले बालों के लच्छे उसके चेहरे पर छाए थे और उनके बीच से बड़े-बड़े ठंडे-ठंडे आंसुओं की धारा बह रही थी...

बारिश तेज़ हो गई और समुद्र इन दो सुन्दर जिप्सियों के – लोइको ज़ोबार और वृद्ध सैनिक दानिलो की लड़की राद्दा के – शोक में गम्भीर निनाद करने लगा।

रात के अंधेरे में वे दोनों चुपचाप और बहुत सुन्दर ढंग से तैरते हुए चक्कर काटते जा रहे थे और ख़ूबसूरत लोइको किसी भी तरह गर्वीली राद्दा को पकड़ नहीं पा रहा था।

नमकसार में

१

"नमकसार में आओ, मेरे भाई! वहां हमेशा काम मिल जाता है। हमेशा ही... असल में वह काम इतना जानलेवा और कमरतोड़ है कि अधिक दिनों तक वहां कोई टिक ही नहीं सकता। सब भाग जाते हैं वहां से... बरदाश्त नहीं कर पाते। सो तुम भी वहां जाकर दो-चार दिन काम कर देखो। फ़ी ठेला शायद सात कोपेक मजदूरी मिलती है। इतने में एक दिन का ख़र्च तो चल ही जायेगा।"

यह सलाह देने वाले मछियारे ने एक तरफ़ को थूका, दूर तक समुद्र की हल्की नीलिमा पर नजर डाली और मन ही मन कोई धुन गुनगुनाने लगा। हम झोंपड़े के साये में बैठे थे। वह अपने कनवास के पतलून की मरम्मत कर रहा था, रह-रहकर जमुहाई लेता और काफ़ी काम न मिलने तथा काम की खोज में दुनिया भर की धूल छानने के बारे में निराशा भरी बातें बुदबुदाता जाता था।

"जब लगे कि और नहीं सहा जाता तो यहां आराम करने चले आना, सब कुछ सुनाना... जगह ज्यादा दूर भी नहीं है – कोई तीनेक मील होगी... तो यह मामला है!"

मैंने उससे विदा ली, सलाह के लिये धन्यवाद दिया और समुद्र के किनारे-किनारे नमकसार की ओर चल दिया। अगस्त मास की गर्म सुबह थी। आकाश उजला और साफ़ था, समुद्र शांत तथा सुनसान। उदासी भरी हल्की छलछलाहट करती हुई हरी लहरें, एक दूसरी के पीछे तट के बालू पर दौड़ रही थीं। सामने, बहुत दूर, नील कुहासे के बीच, पीले तट पर सफ़ेद धब्बे नज़र आ रहे थे – यह ओचाकोव नगर था। पीछे, समुद्र की नील-हरित आभा लिये रेत के चटक पीले टीलों में झोंपड़ा जैसे डूब गया था...

झोंपड़े में, जहां मैंने रात बिताई थी, दुनिया भर की ऐसी-ऐसी होनी-अनहोनी बातें और कहानियां मैंने सुनी थीं कि मेरा जी भारी हो गया था। लहरों की ध्वनि भी जैसे मेरे इस भारीपन का साथ दे रही थी और उसे और भी बढ़ा रही थी।

नमकसार शीघ्र ही दिखाई देने लगा। क़रीब चार-चार सौ मीटर के तीन वर्गाकार भू-खण्ड थे। नीची-नीची मेड़ें और संकरी खाइयां उन्हें एक दूसरे से अलग करती थीं। ये तीनों खण्ड नमक निकालने की तीन मंजिलों के सूचक थे। पहला खण्ड समुद्र के पानी से भरा था। इस पानी के भाप बनकर उड़ जाने पर गुलाबी झलक लिये पीले-भूरे नमक की एक पतली तह रह जाती थी। दूसरे खण्ड में नमक के ढेर जमा किये जाते थे। यह काम करनेवाली स्त्रियां हाथों में फावड़े लिये घुटनों तक काले चमचमाते कीच में, जिसे "रापा" कहते हैं, खड़ी थीं। वे न तो बोल-बतिया रही थीं, न किसी तरह का शोर-गुल ही कर रही थीं। केवल इस घनी, लोनी और क्षारक "रापा" की पृष्ठभूमि में उनकी उदास मटमैली आकृतियां बेजान-सी हरकत करती नज़र आ रही थीं। तीसरे खण्ड से नमक लादा जा रहा था। अपने ठेलों पर झुके, मूक और भावहीन मज़दूर कसमसा रहे थे। ठेलों के पहिये रगड़ खाते, चीं-चरर करते, और ऐसे लगता मानो यह आवाज़ मानवीय पीठों की लंबी पांत द्वारा आसमान के नाम भेजी गई एक शोकपूर्ण अपील हो। और आसमान था कि धरती पर असहनीय गर्मी उंडेल रहा था, जिसने लोनी लाल-भूरी घासों और चमचमाते नमककणों से युक्त पपड़ी-जमी धरती को झुलस डाला था। फ़ोरमैन की भारी आवाज़ ठेलों की नीरस चरमर को बेध रही थी। वह अपने-अपने ठेलों को उसके पांव के पास ख़ाली करनेवाले मज़दूरों पर गालियों की ख़ूब बौछार कर रहा था और नमक के ढेर पर बाल्टी में से पानी डालकर उसे एक लम्बे पिरामिड की शक्ल में जमाता जाता था। नीली कमीज़ तथा सफ़ेद पतलून पहने लम्बा और कोयले-सा काला यह आदमी नमक के एक ढेर पर खड़ा अपने हाथ के बेलचे को हवा में हिलाता हुआ तख़्ते के ऊपर से ठेले खींचकर लाते मज़दूरों को पूरे ज़ोर से चिल्लाकर हुक्म देता—

"ऐ, इसे बाईं ओर ख़ाली करो! बाईं ओर, शैतान की दुम! तेरा बेड़ा ग़र्क हो! दीदे फूट जायें तेरे! उधर कहां मरा जा रहा है, उल्लू कहीं का?"

फिर कमीज के छोर से वह चेहरे का पसीना पोंछता, कांखता और, अपनी बदजबानी की बौछार को घड़ी भर के लिये भी रोके बिना, अपनी पूरी ताक़त से बेलचा मारता हुआ नमक की सतह को समतल बनाने में जुट जाता। मजदूर यंत्रवत् अपने ठेलों को खींचकर ऊपर लाते और उसके फ़रमान के मुताबिक़ उसी तरह यंत्रवत् – उन्हें "दायें! बायें!" ख़ाली कर देते। इसके बाद, खींच-तानकर, वे कमर सीधी करते और अगला बोझ लाने के लिये थके-थके और धीमी चूं-चर्र करते अपने ठेलों को घसीटते हुए भारी और लड़खड़ाते क़दमों से घनी काली दलदल में आधे धंसे और डगमगाते तख़्ते पर वापिस लौट पड़ते।

"क्या टांगें टूट गई हैं, हरामी पिल्लो?" फ़ोरमैन पीछे से चिल्लाता।

पर वे उसी दब्बू ख़ामोशी से काम में जुते रहते, लेकिन कभी-कभी उनके धूल और पसीने से चिपचिपाते, कसकर भिंचे होंठोंवाले, त्यौरियां चढ़े, थके-हारे और निःसत्व चेहरों पर ग़ुस्सा और खीझ झलक उठते। कभी कोई ठेला तख़्ते पर से खिसककर दलदल में फंस जाता, आगे वाले ठेले बढ़ जाते, पीछे वाले रुक जाते और मैले-कुचैले तथा गंदे आवारे, अपने ठेलों को थामे, पथराई-सी आंखों तथा उदास भाव से अपने उस साथी की ओर देखने लगते, जो अपने सौ एक किलोग्राम वाले ठेले को उठाने और फिर से तख़्ते पर लाने के लिये एड़ी-चोटी का पसीना एक करता होता।

तपती धुंध से ढके मेघहीन आकाश से दहकता दक्षिणी सूरज अधिकाधिक आग बरसा रहा था और ऐसा मालूम होता था मानो धरती के प्रति अपना गहरा लगाव सिद्ध करने की उसने आज ही ठान ली थी।

एक तरफ़ खड़े रहकर यह सब देखने के बाद, काम पाने के लिये मैंने भी अपना भाग्य आज़माने का निश्चय किया। लापरवाही का चोला धारण कर, मैं उस तख़्ते की ओर बढ़ा जिसके ऊपर से मजदूर अपने ख़ाली ठेलों को ला रहे थे।

"सलाम, भाइयो! ख़ुदा मदद करे!"

इसकी सर्वथा अप्रत्याशित प्रतिक्रिया हुई। पहला – मजबूत काठी और पके बालों वाला एक बूढ़ा, जो अपने पतलून को घुटनों तक और आस्तीनों को कंधों तक चढ़ाये था, जिससे ताम्बे के रंग का उसका कड़ियल बदन दिखाई दे रहा था, मानो कुछ भी सुने और मेरी ओर ज़रा भी ध्यान दिये बिना सामने से निकल गया। दूसरा – सुनहरे बालों और क्रुद्ध भूरी आंखों

वाले युवक ने शत्रु भाव से घूरकर मुझे देखा, चिढ़कर मुंह बनाया और एक गंदी गाली देता हुआ आगे बढ़ गया। तीसरे ने – जो एकदम काला और घुंघराले बालों वाला ग्रीक मालूम होता था – मेरे पास आने पर अफ़सोस के साथ कहा कि अगर उसके हाथ ख़ाली होते तो वह मेरी नाक को अपने मुक्के का जरूर परिचय देता। उसने जिस उदासीनता से यह कहा, वह उसकी इच्छा से मेल नहीं खाती थी। चौथा गला फाड़कर चिल्लाया – "सलाम, कांच की आंख!" और उसने टंगड़ी मारने की कोशिश की।

अगर मैं ग़लती नहीं करता तो यह सब वही था, जिसे सभ्य समाज में "ठंडा स्वागत" कहते हैं। ऐसे उग्र रूप में मेरे साथ जीवन में ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। सकपकाहट में मैंने अनजाने ही अपना चश्मा उतारकर जेब में रख लिया और यह जानने के लिये कि मुझे भी काम मिल सकता है या नहीं, फ़ोरमैन की ओर बढ़ चला। मैं उसके पास पहुंचा भी नहीं था कि वह दूर से ही चिल्लाया –

"ऐ, तुम क्या चाहते हो? क्या काम की तलाश है?"

मैंने हामी भरी।

"ठेला खींचने का काम करते हो?"

मैंने बताया कि मिट्टी ढोता रहा हूं।

"मिट्टी? तब काम नहीं चलेगा! वह एकदम दूसरी चीज़ है। यहां नमक ढोया जाता है, मिट्टी नहीं। जहन्नुम का रास्ता नापो! ऐ अष्टावक्र, यहां, पांव के पास ख़ाली करो!"

अष्टावक्र ने, जो फटेहाल, चिथड़े पहने भीमकाय और लम्बी मूंछों तथा मुंहासों से बैंगनी नाक वाला आदमी था, ज़ोर से आह भरकर अपना ठेला ख़ाली कर दिया। नमक बाहर आ गिरा। अष्टावक्र ने कोसा, फ़ोरमैन ने उससे बाजी मारी, फिर दोनों संतुष्ट होकर मुस्कराए और मेरी ओर मुख़ातिब हुए।

"तो तुम्हें क्या चाहिये?" फ़ोरमैन ने पूछा।

"शायद साग-भाजी में डालने के लिये नमक की बुकनी लेने आये हो?" फ़ोरमैन को आंख मारते हुए अष्टावक्र ने कहा।

मैंने फ़ोरमैन से काम देने के लिये बिनती की, उसे विश्वास दिलाया कि मैं जल्दी ही काम का आदी हो जाऊंगा और अन्य किसी से पीछे नहीं रहूंगा।

"शादी होने से पहले ही तुम्हारी कमर टूट जायेगी। लेकिन मेरी बला से, जुट जाओ काम में! पर पहले दिन पचास कोपेक से ज्यादा नहीं दूंगा। ऐ, इसे एक ठेला दे दो!"

जाने कहां से एक अध-नंगा लड़का प्रकट हो गया। उसकी नंगी टांगें घुटनों तक चिथड़ों में लिपटी थीं।

"मेरे साथ आओ," सन्देह भरी नजर से मुझे देखने के बाद वह बुदबुदाया।

मैं उसके पीछे-पीछे एक दूसरे के ऊपर पड़े हुए ठेलों के अम्बार की ओर चल दिया और वहां पहुंचकर अपने लिये एक हल्का-सा ठेला खोजने लगा। लड़का वहीं खड़ा-खड़ा अपनी टांगें खुजलाता हुआ चुपचाप मेरी ओर देख रहा था।

जब मैंने अपनी पसन्द का ठेला खोज लिया तो वह बोला—"यह क्या चुना है तुमने! इतना भी नहीं देखा कि इसका पहिया टेढ़ा है?" यह कह वह कुछ हटकर जमीन पर लेट गया।

मैंने दूसरा ठेला छांट लिया और अन्य मजदूरों के साथ जा मिला, जो नमक लादने जा रहे थे। लेकिन मेरा जी एक अजीब बेचैनी से दबा था, जो मुझे अपने अन्य साथी मजदूरों के साथ घुलने-मिलने से रोक रही थी। उस थकान के बावजूद, जिससे उनके चहेरे विकृत हो रहे थे, उनपर दबी-घुटी और अभी तक अप्रकट खीझ भी साफ़ झलक रही थी। थकान ने उन्हें चूर चूर कर दिया था और वे बुरी तरह ख़ार खाए हुए थे—वे नाराज थे उस सूरज से, जो इतनी बेरहमी से उनकी चमड़ी को झुलसा रहा था, वे नाराज थे उन तख़्तों से, जो उनके ठेलों के नीचे डगमगाते थे, और वे नाराज थे "रापा" से, उस कुत्सित दलदल से, जो घनी, खारी और ऐसे चुभते कणों से भरपूर थी, जो उनके पांवों को खरोंच डालते थे और फिर खरोंचों में घुसकर वे उन्हें रिसते हुए नासूर बना देते थे। ग़रज यह कि वे नाराज थे हर उस चीज से, जो उनके इर्द-गिर्द मौजूद थी और जिससे उनका वास्ता पड़ता था। यह नाराजगी दिखाई देती थी उनकी कनखियों से एक दूसरे को देखनेवाली नजरों में और गालियों की उस बौछार में, जो जब-तब उनके सूखे गलों से निकलती रहती थी। मेरी ओर किसी ने ध्यान तक नहीं दिया। लेकिन समकोण खण्ड में पहुंचने पर जैसे ही मैं

तख़्ताबन्दी पर से नमक के ढूहों की ओर बढ़ा कि किसी ने पीछे से टांग मारी और मेरे मुड़ते ही गुस्से से भरे शब्दों की फुंकार सुनाई दी –

"औघर, डग बढ़ाओ!"

मैंने सकपकाकर तेजी से डग भरे और ठेले को खड़ा करके फावड़े से उसमें नमक भरने लगा।

"ऐ, पूरी तरह भर!" उस भीमकाय उक्रइनी अष्टावक्र ने कहा, जो मेरे पास ही खड़ा था।

मैंने, जितना भी हो सका, ठेले को नमक से भर लिया। तभी आगे वाले मजदूरों से कहा गया – "बढ़ाओ ठेले!" उन्होंने हथेलियों पर थूककर उन्हें मसला, कांखकर ठेलों को उठाया और एकदम दोहरे होकर अपनी गरदनों को आगे की ओर ताने हुए – मानो ऐसा करने से बोझ कुछ हल्का हो जायेगा – ठेलों को खींचते हुए बढ़ चले।

उनके तरीक़ों की नक़ल करते हुए अपनी सकत के मुताबिक़ मैं भी एकदम दोहरा होकर आगे की ओर तन गया। ठेला हिला-डुला, पहिया चरमराया, लगा कि हंसली तड़कना चाहती है और मेरी बांहों के पूरी तरह खिंचे हुए पुट्ठे कांप उठे। मैंने लड़खड़ाता-सा एक डग भरा, फिर दूसरा – दाहिनी ओर को डोला, फिर बाईं ओर, धचके खाता आगे बढ़ चला... ठेले का पहिया तख़्ते पर से उतर गया और उसके साथ-साथ मैं भी औंधे मुंह कीचड़ में जा गिरा। ठेले का हत्था मानो चेतावनी देते हुए मेरी गुद्दी पर लगा और इसके बाद ठेला धीरे से उलट गया। मेरे गिरते ही कान-वेधी सीटियां, चीख़-पुकारें और ठहाके फूट पड़े और उन्होंने जैसे मुझे गाढ़े और गर्म कीचड़ में और भी अधिक लथेड़ दिया और उस समय, जब मैं कीचड़ में फंसे ठेले को उठाने की बेकार कोशिश में लथपथ हो रहा था, मुझे लगा मानो कोई निर्मम और पैनी चीज़ मेरे सीने को चीर रही है।

"ज़रा सहारा तो देना, मित्र!" मैंने उक्रइनी से कहा, जो मेरे पास ही खड़ा था और अपना पेट पकड़े हंसी के मारे दोहरा हुआ जा रहा था।

"ओ, कीचड़-सोख हरामी! औंधे मुंह जा गिरा न? इसे फिर तख़्ताबंदी पर ले आ! बायें बाज़ू नीचे की ओर धकेल! हुंह! दलदल तुझे निगल जाये!" यह कह वह फिर हंसने लगा, यहां तक कि उसकी आंखों में आंसू आ गये और वह कमर पर हाथ रखकर हांफने लगा।

सफ़ेद बालों वाले वृद्ध ने, जो मेरे आगे था, मेरी ओर देखा और निराशा से हाथ हिलाकर कहा –

"आख़िर तख़्ताबन्दी क्या काटती थी, जो कीचड़ में कूद पड़ा?" और कांखता हुआ अपने ठेले के साथ आगे बढ़ गया।

आगे वाले नहीं रुके, पीछे वाले मुझे कीचड़ से लथपथ और अपने ठेले से जूझते तथा उसे निकालने का प्रयत्न करते हुए भौंहें सिकोड़े देखते रहे। मेरी मदद के लिये कोई आगे नहीं बढ़ा। नमक के ढेर से फ़ोरमैन को आवाज़ सुनाई दी –

"शैतान के बच्चो, क्या वहीं मर गये? कुत्तो, सुअर के बच्चो! नजर चूकी कि हरामीपन करने लगे! शैतान कहीं के! ख़ुदा तुम्हें ग़ारत करे!"

"ऐ, रास्ता दो!" मेरे पीछे से उक्रइनो भौंक उठा और अपने ठेले का हत्था क़रीब-क़रीब मेरे सिर से टकराता खटाक से आगे निकल गया।

मैं अकेला ही रह गया। जैसे-तैसे मैंने ठेले को बाहर निकाला और चूंकि ठेला अब ख़ाली और बुरी तरह कीचड़ में सना था, इसलिये मैं उसे खण्ड से बाहर ले भागा ताकि उसके बदले कोई दूसरा ठेला ले आऊं।

"गिर गये क्या, भाई! कोई बात नहीं, शुरू में सभी के साथ ऐसा होता है!"

मैंने मुड़कर देखा तो बीसेक साल का एक नौजवान को खड़े पाया। वह नमक के ढूह के पास, कीचड़ में बिछे एक तख़्ते पर पड़ा था और अपनी हथेली को चूस रहा था। उंगलियों के बीच से झांकती हुई उसकी आंखों में सहृदयता और मुसकराहट की चमक थी।

"कोई बात नहीं, दोस्त," मैंने कहा, "शीघ्र ही मैं भी सब सीख जाऊंगा। तुम्हारे हाथ में क्या हो गया है?"

"मामूली-सी खरोंच आ गयी थी, लेकिन नमक उसे काटता जाता है। सो नमक को चूसकर बाहर निकाल रहा हूं। अगर ऐसा न करूं तो धंधे से हाथ धोना पड़े – यह हाथ बिल्कुल बेकाम हो जाये। ख़ैर, तुम भागो काम पर, नहीं तो फ़ोरमैन तुम्हें डांटे-डपटेगा!"

मैं अपने काम में जुट गया। दूसरी ढुलाई में कोई दुर्घटना नहीं हुई। तीसरी, फिर चौथी और इसके बाद दो बार और मैंने ढुलाई की। मेरी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया और इस उपेक्षा से, – जो आम तौर से अखरनेवाली चीज़ होती है, – मैं बहुत ख़ुश था।

"बस, खाने का समय हो गया," किसी ने चिल्लाकर कहा।

लोगों ने ग्राराम की सांस ली ग्रौर खाना खाने चल दिये, लेकिन ग्रब भी उनमें उत्साह की कोई झलक नहीं थी, विश्राम का ग्रवसर पाकर भी वे ख़ुशी से नहीं छलछलाये। उनके हर काम में एक ग्रनमनापन झलकता था, दबा हुग्रा गुस्सा ग्रौर ग्रसन्तोष दिखाई देता था। ऐसा मालूम होता था कि श्रम द्वारा झंझोड़ी गई उनकी हड्डियों ग्रौर गर्मी से निःसत्व उनकी मांस-पेशियों को विश्राम में कोई ख़ुशी ग्रनुभव नहीं हो रही थी। मेरी पीठ दर्द कर रही थी, मेरी टांगों ग्रौर कंधों का भी यही हाल था, लेकिन मैंने कोशिश की कि यह बात जाहिर न होने पाये ग्रौर फुर्ती से डग भरता शोरबे के देग़ के पास पहुंच गया।

"जरा रुको तो!" एक बूढ़े तलछटी मजदूर ने मुझे टोका। वह नीले रंग का फटा पुराना कुरता पहने था। उसका चेहरा भी, नशे की वजह से, उसके कुरते की भांति नीला मालूम होता था। उसकी झबरीली भारी भौंहों के नीचे—जो सदा तनी रहती थीं—उसकी सूजी हुई लाल ग्रांखें भयानक तथा उपहासपूर्ण ढंग से चमक रही थीं।

"रुको तो! तुम्हारा नाम क्या है?"

मैंने उसे नाम बताया।

"हूंह! बड़ा मूर्ख था तुम्हारा बाप, जो उसने तुम्हारा यह नाम रखा। मक्सिमों को पहले दिन शोरबे के देग़ के पास नहीं फटकने दिया जाता। मक्सिम पहले दिन ग्रपने ही भोजन पर गुजर करते हैं। समझे न! ग्रगर तुम्हारा नाम इवान या ऐसा ही कुछ ग्रौर होता, तब दूसरी बात होती। मिसाल के तौर पर मुझे लो। मेरा नाम मात्वेई है, इसलिये मुझे खाना मिलेगा, लेकिन मक्सिम मुंह ताकेगा। सो देग़ के पास से दफ़ा हो जाग्रो!"

मैंने उसे ग्रचरज से देखा ग्रौर वहां से हटकर जमीन पर बैठ गया। इस व्यवहार ने मुझे स्तब्ध कर दिया। जीवन में पहले कभी ऐसा ग्रनुभव नहीं हुग्रा था ग्रौर ऐसा कोई काम भी मैंने नहीं किया था, जिसके बदले में मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया जाता। इससे पहले ग्रौर बाद में भी बीसियों बार मजदूरों की टुकड़ियों के साथ उठने-बैठने का मुझे मौक़ा मिला था ग्रौर हमारे सम्बन्ध शुरू से ही हमेशा सीधे-सादे ग्रौर बिरादराना होते थे। मगर यहां का समूचा व्यवहार ही कुछ इतना ग्रजीब था कि मानसिक पीड़ा ग्रौर ग्रपमान की ग्रटपटी स्थिति के बावजूद उत्सुकता ने मुझे घेर

लिया। मैंने अपने लिये इस अत्यधिक दिलचस्प भेद का पता लगाने का इरादा कर लिया और यह निश्चय किया कि काम शुरू होने तक प्रत्यक्षतः शांत भाव से उन्हें खाना खाते हुए देखता रहूं... यह मालूम करना आवश्यक था कि उन्होंने मेरे साथ ऐसा व्यवहार क्यों किया।

२

आखिर उनका खाना-डकारना ख़त्म हुआ और देग़ से हटकर वे धूम्रपान करने लगे। उक्रइनी भीम और वह लड़का, जिसके पांवों पर पट्टियां बंधी थीं, मेरे सामने आकर बैठ गये। उनकी ओट के कारण तख़्ताबंदी पर छोड़े गये ठेलों की पांत मेरी आंखों से ओझल हो गयी थी।

"कहो, मित्र, धूम्रपान करोगे?" उक्रइनी ने पूछा।

"लाओ, कर लेता हूं," मैंने जवाब दिया।

"क्या तुम्हारे पास अपना तम्बाकू नहीं है?"

"अगर होता, तो मांगता ही क्यों?"

"हां, यह तो सही है। यह लो," और उसने मुझे अपना पाइप दे दिया। तो क्या ढुलाई करोगे?"

"जब तक बनेगा, करूंगा।"

"तो यह बात है! कहां के रहनेवाले हो?"

मैंने उसे बताया।

"यह जगह यहां से दूर है क्या?"

"कोई ढाई हज़ार मील होगी।"

"ओह, यह तो काफ़ी दूर है। तुम यहां किस फेर में चले आये?"

"उसी फेर में, जिसमें तुम।"

"अच्छा! सो गांववालों ने तुम्हें भी चोरी के कारण वहां से खदेड़ दिया?"

"यह कैसे?" मैंने यह अनुभव करते हुए कि उसके जाल में फंस गया, उससे पूछा।

"मैं तो यहां इसलिये आया कि चोरी करने पर मुझे गांव से खदेड़ दिया गया था। तुम कहते हो कि तुम भी इसी कारण से यहां आये, जिस कारण से मैं," यह कह वह अपनी चतुराई पर खिलखिलाकर हंसा।

उसका साथी चुपचाप बैठा था और वह उसकी ओर आंख मारकर शरारत से मुस्करा दिया।

"ज़रा रुको..." मैंने कहना शुरू किया।

"रुकने का समय नहीं है, मित्र! काम पर वापिस जाना है। आओ, चलें। तुम मेरा ठेला ले लेना और ठीक मेरे पीछे ही लग जाना। मेरा ठेला अच्छा है, भरोसे लायक़। चलो, उठो!"

हम चल दिये। मैं उसका ठेला उठाने ही वाला था कि उसने तुरन्त टोका—"ठहरो, मैं ख़ुद इसे ले चलूंगा। तुम अपना ठेला मुझे दे दो। अपना ठेला मैं उसपर रख दूंगा। वह भी सवारी और कुछ देर आराम कर लेगा।"

उसकी यह बात सुन मेरे हृदय में सन्देह ने सिर उठाया। मैं उसके साथ-साथ चल रहा था और लगे हाथ उसके ठेले का भी जायज़ा लेता जाता था, जिसे औंधा कर मेरे ठेले में रखा गया था। मैं यह निश्चय करना चाहता था कि मेरे साथ कहीं कोई चाल तो नहीं चली जा रही है। लेकिन मुझे कोई ऐसी चीज़ नज़र नहीं आई, सिवा इसके कि एकाएक मैं सब के आकर्षण का केन्द्र बन गया था। इसे छिपाने की कोशिश ज़रूर की जा रही थी, लेकिन भद्दे ढंग से मुझे साफ़ नज़र आ रहा था कि रह-रहकर कनखियों से मेरी ओर देखा जा रहा है, गर्दनें हिलाकर इशारे किये जा रहे हैं और शंका पैदा करनेवाली खुसुर-फुसुर चल रही है। मैं समझ गया कि मुझे अपने दीदे खुले रखने चाहिये और उस चीज़ के लिये पूरी तरह चौकस हो गया, जो आरंभ को देखते हुए अत्यन्त मौलिक होनी चाहिये थी।

"तो पहुंच गये," मेरे ठेले में से अपना ठेला निकालकर उसे मेरी ओर धकेलते हुए उक्रइनी ने कहा—"इसमें नमक लाद लो, दोस्त!"

मैंने चारों ओर देखा। सभी अपने काम में डूबे हुए थे। सो मैं भी नमक लादने लगा। बेलचे पर से नमक के गिरने की सरसराहट के सिवा अन्य कोई आवाज़ नहीं आ रही थी और यह निस्तब्धता मुझे बड़ी बोझिल मालूम हो रही थी। मैंने सोचा कि मेरे यहां से हट जाने में ही भलाई है।

"हद हो गई! क्या तुम लोग ऊंघ रहे हो? आगे बढ़ो!" नीले मास्त्येई ने फ़रमान जारी किया।

मैंने ठेले के हत्थों को पकड़ा और पूरा ज़ोर लगाकर उसे धकेलने

लगा... तभी मैं दर्द से चीख़ उठा और ठेले के हत्थे से हाथों को जोर से अपनी तरफ़ खींचा। इससे और भी ज्यादा, पहले से दुगुना दर्द हुआ। मेरी दोनों हथेलियों की खाल छिल गई थी। दर्द और गुस्से से दांतों को भींचकर मैंने ठेले के हत्थों की जांच की और देखा कि उनके बाहरी सिरों को चीरकर दरारों को खुला रखने के लिये उनमें लकड़ी-खपचियां खोंसी हुई हैं। यह सब इतनी होशियारी से किया गया था कि उसे आसानी से जानना मुश्किल था। सोचा यह गया था कि जब मैं हत्थों को मजबूती से पकड़ूंगा तो खपचियां छिटककर निकल जायेंगी और मेरी खाल हत्थों की दरारों की पकड़ में आ जायेगी। ऐसा ही हुआ भी। सिर उठाकर मैंने अपने इर्द-गिर्द देखा। शोर-गुल, आवाज़ाकशी और उपहास का एक तमाचा-सा मेरे मुंह पर पड़ा। सब के चेहरों पर भोंड़ी और कुत्सित मुस्कराहट थी। नमक के ढेर से फ़ोरमैन की भद्दी गालियों की बौछार आ रही थी, जिसका लोगों पर कोई असर नहीं हो रहा था — इस हद तक मेरा तमाशा देखने में वे डूबे थे। हतप्रभ और चकराई-सी आंखों से मैंने अपने चारों ओर देखा और अनुभव किया कि मेरा हृदय, भीतर ही भीतर, अपमान की भावना से, इन लोगों के प्रति घृणा और बदला लेने की इच्छा से उबल रहा है। वे मेरे सामने जमघट लगाये थे, हंस रहे थे, गालियों की बौछार कर रहे थे और मैं उन्हें नीचा दिखाने, जी भरकर उनका अपमान करने के लिये बुरी तरह छटपटा रहा था।

"वहशी!" मैं चीखा और उन्हें वैसी ही कुत्सित गालियां देता हुआ, जैसी कि वे मुझे दे रहे थे, मुक्का तानकर उनकी ओर लपका। वे मानो सिहरे और सकपकाकर पीछे हट गये। लेकिन उक्रइनी भीम और नीला मात्वेई अपनी जगह से नहीं डिगे और चुपचाप अपनी आस्तीनें चढ़ाने लगे।

"जाओ, जाओ, यहां से... जाओ भी!" उक्रइनी चटखारे लेता हुआ धीमे से बुदबुदाया और अपनी आंखें बराबर मुझपर जमाए रहा।

"इसे ज़रा मज़ा चखा दो, गवीला," मात्वेई ने उसे उकसाया।

"किसलिये तुमने मेरे साथ ऐसा बुरा बर्ताव किया है?" मैंने चिल्लाकर कहा — "क्या बिगाड़ा था मैंने तुम्हारा? किसलिये तुमने ऐसा किया? क्या मैं भी तुम सब जैसा इन्सान नहीं हूं?"

इसी तरह के कितने ही अन्य दयनीय, बेमानी, कटु और ऊटपटांग शब्द मैंने दागे। गुस्से से मेरा सारा बदन कांप रहा था। साथ ही इस बारे में

भी मैं ख़ूब चौकस और चौकन्ना था कि वे मेरे साथ कोई और नयी हरकत न कर बैठें।

लेकिन जड़ और भावशून्य चेहरे, जो मेरी ओर मुड़े थे, अब सहानुभूति, संवेदन से एकदम शून्य नहीं थे और उनमें से कुछ तो क़रीब-क़रीब अपराधी जैसा भाव धारण किये थे। मात्वेई और उक्रइनी भी सकपकाकर कुछ पीछे हट गये। मात्वेई अपना कुरता नोच रहा था और उक्रइनी जेब में डुबकी लगा रहा था।

"आख़िर क्यों तुमने यह हरकत की? क्यों?" मैंने फिर पूछा।

वे चकराये-से चुप्पी साधे थे। उक्रइनी एक सिगरेट से खेल रहा था और उसकी आंखें जमीन में गड़ी थीं। मात्वेई अचानक सब से पीछे जा खड़ा हुआ। बाक़ी सब, उदास भाव से चुपचाप सिर खुजलाते, अपने-अपने ठेलों की ओर चल दिये। चीख़ता-चिल्लाता और मुक्का दिखाता फ़ोरमैन जमघट की तरफ़ बढ़ा आ रहा था। यह सब इतनी जल्दी से हो गया कि बीसेक क़दम दूर नमक रोलने का काम करनेवाली स्त्रियां, जिन्होंने मेरी चीख़ सुनकर अपना काम रोक दिया था, केवल तभी हमारे पास पहुंचीं, जब मजदूर अपने-अपने ठेलों पर वापिस जा चुके थे। मैं वहां अकेला खड़ा रह गया और यह कटु अनुभूति मेरे मन को सालती रही कि मेरा अकारण अपमान हुआ और मैं उसका बदला तक नहीं ले सकता। इससे मेरी कटुता और पीड़ा और भी दुस्सह हो गयी। मैं अपने सवाल का जवाब चाहता था, मैं बदला चाहता था। इसलिये मैं चिल्लाया –

"ज़रा ठहरो, भाइयो!"

वे उदासी से मेरी ओर देखते हुए ठहर गये।

"बोलो तो, किसलिये तुम लोगों ने मुझे सताया? आत्मा तो होनी चाहिये तुम में!"

वे चुप थे और यह चुप्पी ही मानो उनका जवाब थी। तब कुछ शान्त होकर मैं उनसे अपने दिल की बातें कहने लगा। मैंने शुरू ऐसे किया कि देखो, मैं भी तुम्हारे ही जैसा इन्सान हूं, तुम्हारी ही तरह मेरे भी पेट है, इसलिये मुझे भी काम करना है, कि मैं बराबर की हैसियत से तुम्हारे साथ शामिल हुआ था, क्योंकि हम सब की स्थिति एक जैसी ही है और यह कि मैं तुम्हें अपने से किसी तरह नीचा या कम नहीं समझता...

"हम सब बराबर हैं," मैंने कहा, "और हमें एक दूसरे को समझना तथा, जैसे भी हो, एक दूसरे की मदद करनी चाहिये।"

वे वहीं, अपनी-अपनी जगह पर खड़े, ध्यान से सुन रहे थे, लेकिन नज़र बचाते हुए। मैंने देखा कि मेरे शब्दों का उनपर असर हो रहा है और इस तथ्य ने मुझे बढ़ावा दिया। अपने इर्द-गिर्द नज़र डालने पर मुझे इसका विश्वास हो गया। मैं एक तीव्र और छलछलाते आनन्द से विभोर हो उठा और नमक के एक ढेर पर गिरकर रो पड़ा। रोये बिना कोई रह ही कैसे सकता था!

जब मैंने सिर उठाया तो देखा कि मेरे सिवा वहां और कोई नहीं है। दिन का काम ख़त्म हो चुका था और मज़दूर, पांच-पांच या छः-छः की टुकड़ियों में, नमक के ढेर के पास बैठे थे। डूबते सूरज की किरणों से रंजित नमक की गुलाबी पृष्ठभूमि में उनकी आकृतियां बड़े-बड़े, भोंडे और मैले धब्बों सी मालूम होती थीं। ख़ामोशी छायी थी। समुद्री हवा के ठंडे झोंके आ रहे थे। छोटा-सा दूधिया बादल धीरे-धीरे आकाश में तैर रहा था। कुहासे के छोटे-छोटे, पारदर्शी गाले उससे अलग होते और नीले विस्तार में घुल जाते। वातावरण उदासी में डूबा हुआ था...

मैं उठा और नमक के ढेर की ओर चला। यहां से विदा ले मछियारों के झोंपड़े में जाने का मेरा निश्चय पक्का हो चुका था। मुझे निकट आता देख मात्वेई, उक्रइनी और अन्य तीन गम्भीर बुज़ुर्ग लोग उठे और मेरी ओर बढ़ आये। इससे पहले कि मैं मुंह खोल पाता, मात्वेई ने हाथ बढ़ाया और मेरी ओर देखे बिना बोला—

"सुनो, मित्र! तुम्हारा यहां रहना ठीक नहीं। अच्छा हो कि तुम अपनी राह लो। तुम्हारी मदद के लिये हमने ये कुछ पैसे जमा किये हैं। इन्हें ले लो।"

उसकी हथेली पर ताम्बे के कुछ सिक्के पड़े थे। मेरी ओर फैला हुआ उसका हाथ कांप रहा था। मैं भौचक्का और हतप्रभ-सा उनकी ओर ताकता रह गया। वे सिर लटकाए, मूढ़वत अपने चिथड़ों को खींचते हुए चुपचाप खड़े थे, पांव बदल रहे थे, छिपी नज़रों से इधर-उधर देख रहे थे और उनकी प्रत्येक हरकत, उनके प्रत्येक संकेत में झेंप तथा जहां तक हो सके, मुझसे जल्दी से जल्दी छुटकारा पाने की इच्छा प्रकट हो रही थी।

"मैं यह नहीं लूंगा," मात्वेई के हाथ को हटाते हुए मैंने कहा।

"ले लो, हमारा दिल न दुखाओ। हम वास्तव में कुछ इतने बुरे नहीं हैं... हम समझते हैं कि हमने तुम्हारी भावनाओं को चोट पहुंचाई, लेकिन अगर तुम ज़रा ढंग से सोचो तो क्या इसके लिये वास्तव में हम ही दोषी हैं? नहीं, ऐसी बात नहीं है। इसके लिये मुख्यतः जीवन ही ज़िम्मेदार है! किस तरह का जीवन हम बिताते हैं? कुत्ते का जीवन! छः-सात मनिया ठेले, पांवों को चाट जानेवाली कीचड़, दिन भर पीठ की चमड़ी झुलसनेवाली धूप, और—पचास कोपेक प्रति दिन। यह हर आदमी को जानवर बना देने के लिये क्या काफ़ी नहीं? काम, काम, काम, पगार को ठर्रे में उड़ा दो और फिर काम! आदि भी यही और अन्त भी यही! कोई पांचेक साल तक ऐसे काम किया और... आदमी जानवर हुआ, बस! तुम्हारे साथ हमने जो कुछ किया, हम ख़ुद एक दूसरे के साथ तो इससे भी कहीं बुरी बातें करते हैं, बावजूद इसके कि हम एक दूसरे को जानते-पहचानते हैं और तुम तो एकदम पराये आदमी हो... फिर तुम पर हम रहम क्यों करें? समझ गये न? तुमने यहां तरह-तरह की बहुत-सी बातें हमसे कहीं, मगर उनसे हासिल क्या है? यों तुमने जो कुछ कहा, ठीक कहा—वह सब सच है—लेकिन वह हम पर फ़िट नहीं बैठता। तुम्हें इतना बुरा नहीं मानना चाहिये... हम तो केवल मज़ाक़ कर रहे थे... आख़िर हमारे पास भी तो हृदय है... लेकिन अच्छा यही है कि तुम अपनी सचाई के साथ अपना रास्ता लो और हम अपनी सचाई के साथ यहीं बने रहेंगे। हमारी यह छोटी-सी भेंट संभालो और विदा हो जाओ। न तो हम ही तुम्हारे सामने अपराधी हैं और न तुम हमारे सामने। यह सच है कि कुछ अच्छा नहीं किया हमने, लेकिन हटाओ उसे! हम तो अच्छाई के लायक़ ही नहीं हैं। मगर तुम्हारे यहां बने रहने में कोई तुक नहीं है। तुम यहां फ़िट नहीं बैठते। हम लोग तो घी-खिचड़ी हो चुके हैं और तुम—तुम न जाने कहां से हमारे बीच आ टपके हो। यहां रहने से कुछ भला नहीं होगा। सो तुम रास्ता नापो! अपनी राह लो! अच्छा तो विदा!"

मैंने उन सब पर नज़र डाली। स्पष्ट ही वे सब मात्वेई से सहमत थे। सो मैंने अपना थैला कंधे पर डाला और विदा होने ही वाला था कि तभी, मेरे कंधे पर अपना हाथ रखते हुए, उक्रइनी ने कहा—

"ज़रा ठहरो, दो शब्द मैं भी कहना चाहता हूं। तुम्हारी जगह अगर कोई दूसरा होता, तो बतौर निशानी मैं उसका जबड़ा ढीला कर देता।

समझे? लेकिन तुम मजे से चले जा रहे हो और हम तुम्हें कुछ भेंट भी दे रहे हैं। इसके लिये हमें दुआएं दो!"

यह कह उसने ज़मीन पर थूका और कुछ इस अन्दाज से अपने तम्बाकू के बटुवे को घुमाने लगा मानो कह रहा हो—"देखा, मैं कितना चतुर हूं!"

इन सब बातों से चोट खाया हुआ मैं जल्दी से विदा हुआ और एक बार फिर, समुद्र के किनारे-किनारे मछियारों के उसी झोंपड़े की ओर चल दिया, जहां मैंने रात बिताई थी। आसमान साफ़ और तप्त था, समुद्र सूना और गर्वीला। छलछलाती हुई हरी लहरें पांवों को छू रही थीं... मैं बेहद दुःखी और लज्जित था। गर्म रेत पर भारी डग उठाता मैं धीरे-धीरे चल रहा था। समुद्र शान्त भाव से धूप में चमक रहा था, लहरें कोई उदासी भरी और अनबूझ चर्चा कर रही थीं...

जब मैं झोंपड़े के क़रीब पहुंचा तो मेरी जान-पहचान का मछियारा आगे बढ़ आया।

"क्यों, पसन्द नहीं आया न, वह नमक?" उसने सन्तोष की एक ऐसी भावना के साथ कहा, जो अपनी भविष्यवाणियों के सदा सच सिद्ध होने पर प्रकट होती है।

मैंने, चुपचाप उसकी ओर देखा।

"नमक, और जरूरत से ज्यादा!"—उसने दृढ़ता से कहा। "भूखे हो? जाओ और थोड़ा दलिया पेट में डाल लो। कम्बख्तों ने जाने किस फ़िराक़ में इतना अधिक बना डाला, आधा बच गया है। जाओ और मजे से चमचा चलाओ! बहुत बढ़िया दलिया है—फ्लांडर और स्टर्जन मछली वाला..."

दो-एक मिनट बाद बहुत ही गंदा, बहुत ही थका-टूटा और बहुत ही भूखा मैं झोंपड़े के बाहर छांव में बैठा हुआ फ्लांडर और स्टर्जन वाला दलिया टीसते और भारी मन से गले के नीचे उतार रहा था।

१८६५

बाज का गीत

सीमाहीन सागर, तट-रेखा के निकट अलस भाव से छलछलाता और तट से दूर निश्चल, नींद में डूबा, नीली चांदनी में सराबोर था। क्षितिज के निकट दक्षिणी आकाश की मुलायम और रुपहली नीलिमा में विलीन होता हुआ वह मीठी नींद सो रहा था—रूई जैसे बादलों के पारदर्शी ताने-बाने को प्रतिबिम्बित करता हुआ, जो उसकी ही भांति आकाश में निश्चल लटके थे—तारों के सुनहरे बेलबूटों पर अपना आवरण डाले, लेकिन उन्हें छिपाये हुए नहीं। ऐसा लगता था, मानो आकाश सागर पर झुका पड़ रहा हो, मानो वह कान लगाकर यह सुनने को उत्सुक हो कि उसकी बेचैन लहरें, जो अलस भाव से तट को पखार रही थीं, फुसफुसाकर क्या कह रही हैं।

आंधी से झुके पेड़ों से आच्छादित पहाड़, अपनी खुरदरी कगारदार चोटियों से ऊपर के नीले शून्य को छू रहे थे, जहां दक्खिनी रात का सुहाना और दुलार-भरा अंधेरा अपने स्पर्श से उनके खुरदरे कठोर कगारों को मुलायम बना रहा था।

पहाड़ गम्भीर चिन्तन में लीन थे। उनके काले साये, उमड़ती हुई हरी लहरों पर अवरोधी आवरणों की भांति पड़ रहे थे, मानों वे ज्वार को रोकना चाहते हों, पानी की निरन्तर छलछलाहट झागों की सिसकारियों और उन तमाम आवाजों को शांत करना चाहते हों जो अभी तक पहाड़ की चोटियों के पीछे छिपे चांद की रुपहली नीली आभा की भांति समूचे दृश्यपट को प्लावित करनेवाली रहस्यमयी निस्तब्धता का उल्लंघन कर रही थीं।

"अल्लाह ओ अकबर!" नादिर रहीम ओगली ने धीमे से कहा। वह क्रीमिया का रहनेवाला एक वृद्ध गड़रिया था – लम्बा क़द, सफ़ेद बाल, दक्षिणी धूप में तपा, दुबला-पतला, समझदार बुज़ुर्ग।

हम रेत पर पड़े थे – साये में लिपटी और काई जमी एक भीमाकार, उदास और खिन्न चट्टान की बग़ल में, जो अपने मूल-पहाड़ से टूटकर अलग हो गई थी। उसके समुद्र वाले पहलू पर समुद्री सरकंडों और जल-पौधों की बन्दनवार थी जो उसे सागर तथा पहाड़ों के बीच रेत की संकरी पट्टी से जकड़े मालूम होती थी। हमारे अलाव की लपटें पहाड़ों वाले पहलू को आलोकित कर रही थीं और उनकी कांपती हुई लौ की परछाइयां उसकी प्राचीन सतह पर, जो गहरी दरारों से क्षत-विक्षत हो गई थी, नाच रही थीं।

रहीम और मैं कुछ मछलियां उबाल रहे थे, जिन्हें हमने अभी पकड़ा था, और हम दोनों ऐसे मूड में थे जिसमें हर चीज़ स्पष्ट, अनुप्राणित और बोधगम्य मालूम होती है, जब हृदय बेहद हल्का और निर्मल होता है – और चिन्तन में डूबने के सिवा मन में और कोई इच्छा नहीं होती।

सागर तट पर छपछपा रहा था। लहरों की आवाज़ ऐसी प्यार भरी थी मानो वे हमारे अलाव से अपने आपको गरमाने की याचना कर रही हों। लहरों के एकरस नर्त्तन में रह-रहकर एक अधिक ऊंचा और अधिक आह्लादपूर्ण स्वर सुनाई दे जाता – यह अधिक साहसी लहरों में से किसी एक का स्वर होता जो हमारे पांवों के अधिक निकट रेंग आती थी।

रहीम सागर की ओर मुंह किये पड़ा था। उसकी कोहनियां रेत में धंसी थीं, उसका सिर उसके हाथों पर टिका था और वह विचारों में डूबा दूर धुंधलके को ताक रहा था। उसकी भेड़ की खाल की टोपी खिसककर उसकी गुद्दी पर पहुंच गई थी और समुद्र की ताज़ा हवा झुर्रियों की महीन रेखाओं से ढके उसके ऊंचे मस्तक पर पंखा झल रही थी। उसके मुंह से दार्शनिकी उद्‌गार प्रकट हो रहे थे – इस बात की चिन्ता किये बिना कि मैं उन्हें सुन भी रहा हूं या नहीं। ऐसा लगता था जैसे वह समुद्र से बातें कर रहा हो।

"जो आदमी ख़ुदा में अपना ईमान बनाये रखता है, उसे बहिश्त नसीब होता है। और वह, जो ख़ुदा या पैग़म्बर को याद नहीं करता? शायद वह वहां है, उस झाग में... पानी की सतह पर वे रुपहले धब्बे शायद उसी के हों, कौन जाने!"

विस्तारहीन काला सागर अधिक उजला हो चला था और उसकी सतह पर लापरवाही से जहां-तहां बिखेर दिये गये चांदनी के धब्बे दिखाई दे रहे थे। चांद पहाड़ों की कगारदार झबरीली चोटियों के पीछे से बाहर खिसक आया था और तट पर, उस चट्टान पर, जिसकी बग़ल में हम लेटे हुए थे, और सागर पर, जो उससे मिलने के लिए हल्की उसांसें भर रहा था, उनींदा सा अपनी आभा बिखेर रहा था।

"रहीम, कोई क़िस्सा सुनाओ," मैंने वृद्ध से कहा।

"किसलिए?" अपने सिर को मेरी ओर मोड़े बिना ही उसने पूछा।

"यों ही! तुम्हारे क़िस्से मुझे बहुत अच्छे लगते हैं।"

"मैं तुम्हें सब सुना चुका। और याद नहीं..."

वह चाहता था कि उसकी ख़ुशामद की जाये, और मैंने उसकी ख़ुशामद की।

"अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें एक गीत सुना सकता हूं," उसने राज़ी होते हुए कहा।

मैं ख़ुशी से एक पुराना गीत सुनना चाहता था और उसने मौलिक धुन को क़ायम रखते हुए एकरस स्वर में गीत सुनाना शुरू कर दिया।

१

"ऊंचे पहाड़ों पर एक सांप रेंग रहा था और एक सीलन भरे दर्रे में जाकर उसने कुंडली मारी और समुद्र की ओर देखने लगा।

"ऊंचे आसमान में सूरज चमक रहा था, पहाड़ों की गर्म सांस आसमान में उठ रही थी और नीचे लहरें चट्टानों से टकरा रही थीं...

"दर्रे के बीच से, अंधेरे और धुंध में लिपटी, एक नदी तेज़ी से बह रही थी – समुद्र से मिलने की उतावली में राह के पत्थरों को उलटती-पलटती...

"झागों का ताज पहने, सफ़ेद और शक्तिशाली, वह चट्टानों को काटती, गुस्से में उबलती-उफनती, गरज के साथ समुद्र में छलांग मार रही थी।

"अचानक उसी दर्रे में, जहां सांप कुंडली मारे पड़ा था, एक बाज़, जिसके पंख ख़ून में रंगे थे और जिसके सीने में एक घाव था, आकाश से वहां आ गिरा...

"धरती से टकराते ही उसके मुंह से एक चीख़ निकली और हताश क्रोध में चट्टान पर छाती पटकने लगा...

"सांप डर गया, तेज़ी से रेंगता हुआ भागा, लेकिन शीघ्र ही समझ गया कि पक्षी पल-दो पल का मेहमान है।

"सो रेंगकर वह घायल पक्षी के पास लौटा और उसके मुंह के पास फुंकार छोड़ी—

"—मर रहे हो क्या?"

"—हां, मर रहा हूं!" गहरी उसांस लेते हुए बाज़ ने जवाब दिया। "ख़ूब जीवन बिताया है मैंने! बहुत सुख देखा है मैंने! जमकर लड़ाइयां लड़ी हैं। आकाश की ऊंचाइयां मैंने नापी हैं। तुम उसे कभी इतने निकट से नहीं देख सकोगे! तुम बेचारे!"

"—आकाश? वह क्या है? निरा शून्य... मैं वहां कैसे रेंग सकता हूं? मैं यहां बहुत मजे में हूं... गरमाई भी है और तरी भी!"

"इस प्रकार सांप ने आज़ाद पंछी को जवाब दिया और बाज़ के बेतुकेपन पर मन ही मन हंसने लगा।

"और उसने अपने मन में सोचा—'चाहे रेंगो, चाहे उड़ो, अन्त सब का एक ही है—सब को इसी धरती पर मरना है, धूल बनना है।'

"मगर निर्भीक बाज़ ने एकाएक पंख फड़फड़ाये और दर्रे पर नज़र डाली।

"भूरी चट्टानों से पानी रिस रहा था और अंधेरे दर्रे में घुटन और सड़ांध थी।

"बाज़ ने अपनी समूची शक्ति बटोरी और तड़प तथा वेदना से चीख़ उठा—

"—काश, कि एक बार फिर आकाश में उड़ सकता! दुश्मन को भींच लेता, अपने सीने के घावों के साथ... मेरे रक्त की धारा से उसका दम घुट जाता! ओह, कितना सुख है संघर्ष में!

"सांप ने अब सोचा—'अगर वह इतनी वेदना से चीख़ रहा है, तो आकाश में रहना वास्तव में ही इतना अच्छा होगा!"

"और उसने आज़ादी के प्रेमी बाज़ से कहा—'रेंगकर चोटी के सिरे पर आ जाओ और लुढ़ककर नीचे गिरो। शायद तुम्हारे पंख अब भी काम दे जायें और तुम अपने अभ्यस्त आकाश में कुछ क्षण और जी लो।'

"बाज ख़ुशी से थरथरा उठा, उसके मुंह से गर्व भरी हुंकार निकली और काई जमी चट्टान पर पंजों के बल फिसलते हुए कगार की ओर बढ़ा।

"कगार पर पहुंचकर उसने अपने पंख फैला दिये, गहरी सांस ली और आंखों से एक चमक सी छोड़ता हुआ शून्य में कूद गया।

"और बाज भी, पत्थर की भांति, चट्टानों पर लुढ़कता हुआ तेजी से नीचे गिरने लगा, उसके पंख टूट रहे थे, रोयें बिखर रहे थे...

"नदी ने उसे लपक लिया, उसका रक्त धोकर झागों में उसे लपेटा और उसे दूर समुद्र में बहा ले गई।

"और समुद्र की लहरें, शोक से सिर धुनती, चट्टान की सतह से टकरा रही थीं... पक्षी की लाश समुद्र के व्यापक विस्तारों में ओझल हो गयी थी...

२

"सांप, बहुत देर तक, कुंडली मारे दर्रे में पड़ा हुआ सोचता रहा—पक्षी की मौत के बारे में, आकाश के प्रति उसके प्रेम के बारे में।

"उसने उस विस्तार में आंखें जमा दीं जो निरन्तर सुख के सपने से आंखों को सहलाते हैं।

"'क्या देखा उसने,—उस मृत बाज ने—इस शून्य में, इस अन्तहीन आकाश में? क्यों उसके जैसे आकाश में उड़ान भरने के अपने प्रेम से दूसरों की आत्मा को परेशान करते हैं? क्या पाते हैं वे आकाश में? मैं भी तो, बेशक थोड़ा-सा उड़कर ही, यह जान सकता हूं।' उसने ऐसा सोचा और कर डाला।

"कसकर कुंडली मारी, हवा में उछला और सूरज की धूप में एक काली धारी-सी कौंध गई।

"धरती पर रेंगने के लिये जो जन्मे हैं, वे उड़ नहीं सकते! इसे भूल सांप नीचे चट्टानों पर जा गिरा, लेकिन गिरकर मरा नहीं और हंसा—

"'सो यही है आकाश में उड़ने का आनन्द! नीचे गिरने में! हास्यास्पद पक्षी! जिस धरती को वे नहीं जानते उसपर ऊबकर, आकाश में चढ़ते हैं और उसके स्पन्दित विस्तारों में ख़ुशी खोजते हैं। लेकिन वहां तो केवल शून्य है। प्रकाश तो बहुत है, लेकिन वहां न तो खाने को कुछ

है और न शरीर को सहारा देने के लिए ही कोई चीज। तब फिर इतना गर्व किसलिए? धिक्कार-तिरस्कार क्यों? दुनिया की नजरों से अपनी पागल आकांक्षाओं को छिपाने के लिये, जीवन के व्यापार में अपनी विफलता पर पर्दा डालने के लिये ही न? हास्यास्पद पक्षी! तुम्हारे शब्द मुझे फिर कभी धोखा नहीं दे सकते! अब मुझे सारा भेद मालूम है! मैंने आकाश को देख लिया है... उसमें उड़ लिया, मैंने उसको नाप लिया और गिर कर भी देख लिया, हालांकि मैं गिरकर मरा नहीं, उल्टे अपने में मेरा विश्वास अब और भी दृढ़ हो गया है। बेशक वे अपने भ्रमों में डूबे रहें, वे, जो धरती को प्यार नहीं करते। मैंने सत्य का पता लगा लिया है। पक्षियों की ललकार अब कभी मुझपर असर नहीं करेगी। धरती से जन्मा हूं और धरती का ही मैं हूं।

"ऐसा कहकर, एक पत्थर पर गर्व से कुंडली मारकर, वह जम गया।

"सागर, चौंधिया देनेवाले प्रकाश का पुंज बना, चमचमा रहा था और लहरें पूरे ज़ोर-शोर से तट से टकरा रही थीं।

"उनकी सिंह जैसी गरज में गर्वीले पक्षी का गीत गूंज रहा था। चट्टानें कांप रही थीं समुद्र के आघातों से और आसमान कांप रहा था दिलेरी के गीत से—

"'साहस के उन्मादियों की हम गौरव-गाथा गाते हैं! उनके यश का गीत!'

"'साहस का उन्माद—यही है जीवन का मूलमंत्र! ओह, दिलेर बाज! दुश्मन से लड़कर तूने रक्त बहाया... लेकिन वह समय आयेगा जब तेरा यह रक्त जीवन के अंधकार में चिनगारी बनकर चमकेगा और अनेक साहसी हृदयों को आजादी तथा प्रकाश के उन्माद से अनुप्राणित करेगा!'

"'बेशक मर गया!.. लेकिन दिल के दिलेरों और बहादुरों के गीतों में तू सदा जीवित रहेगा, आजादी और प्रकाश के लिए संघर्ष की गर्वीली ललकार बनकर गूंजता रहेगा!'

"'हम साहस के उन्मादियों का गीत गाते हैं!'"

...सागर के पारदर्शी विस्तार निस्तब्ध हैं, तट से छलछलाती लहरें धीमे स्वरों में गुनगुना रही हैं और दूर समुद्र के विस्तार को देखता हुआ मैं भी चुप हूं। पानी की सतह पर चांदनी के रुपहले धब्बे

अब पहले से कहीं अधिक हो गये हैं... हमारी केतली धीमे से भुनभुना रही है।

एक लहर खिलवाड़ करती आगे बढ़ आई और मानो चुनौती का शोर मचाती हुई रहीम के सिर को छूने का प्रयत्न करने लगी।

"भाग यहां से! क्या सिर पर चढ़ेगी?" हाथ हिलाकर उसे दूर करते हुए रहीम चिल्लाया और वह, उसका कहना मान, तुरंत लौट गई।

लहर को सजीव मानकर रहीम के इस तरह उसे झिड़कने में, मुझे हंसने या चौंक उठनेवाली कोई बात नहीं मालूम हुई। हमारे चारों ओर की हर चीज़ असाधारण रूप से सजीव, कोमल और सुहावनी थी। समुद्र शान्त था और उसकी शीतल सांसों में, जिन्हें वह दिन की तपन से अभी तक तप्त पहाड़ों की चोटियों की ओर प्रवाहित कर रहा था, बड़ी सचित्र शक्ति मालूम होती थी। आकाश की गहरी नीली पृष्ठभूमि पर सुनहरे बेल-बूटों के रूप में तारों ने कुछ ऐसा गम्भीर चित्र अंकित कर दिया था जो आत्मा को मंत्र-मुग्ध करता था और हृदय को किसी नये आत्मबोध की मधुर आशा से विचलित करता प्रतीत होता था।

हर चीज़ उनींदी थी, लेकिन जागरूकता की गहरी चेतना अपने हृदय में सहेजे, मानो अगले ही क्षण वे सभी नींद की अपनी चादर उतारकर अवर्णनीय मधुर स्वर में समवेत गान शुरू कर देंगी। उनका यह समवेत गान जीवन के रहस्यों को प्रकट करेगा, उन्हें मस्तिष्क को समझायेगा और फिर उसे छलावे की अग्नि-शिखा की भांति ठंडा कर देगा और आत्मा को गहरे नीले विस्तारों में उड़ा ले जायेगा, जहां तारों के कोमल बेल-बूटे भी आत्मबोध का दैवी गीत गाते होंगे...

१८९५

चेल्काश

नीला दक्षिणी ग्राकाश धूल के कारण धुंधलाया हुग्रा था, दहकता सूरज मानो पतले से भूरे नक़ाब के भीतर से हरे सागर की ग्रोर झांक रहा था। वह पानी में लगभग प्रतिबिम्बित नहीं हो रहा था, क्योंकि उसे चप्पुग्रों की चोटों, स्टीमरों के पंखों, दो-मस्तूली तुर्की जहाजों की पैनी बल्लियों ग्रौर बहुत ही तंग बन्दरगाह पर सभी दिशाग्रों से ग्राते-जाते ग्रन्य प्रकार के जहाजों ने मथ डाला था। ग्रेनाइट पत्थर के बांध में जकड़ी, भारी बोझों से दबी-दबायी ग्रौर तरह-तरह के कूड़े-करकट से गन्दी हुई सागर की लहरें तट ग्रौर जहाजों के पहलुग्रों से टकरा रही थीं, फनफनाती ग्रौर झाग उगलती हुई।

लंगरों की जंजीरों की खनखनाहट, मालगाड़ियों के कांटों की खड़खड़, लोहे की चादरों की विलाप-ध्वनि, जिन्हें उतारकर फ़र्श के पत्थरों पर पटका जा रहा था, लकड़ी की धीमी, मंद ठकठक, घोड़ा-गाड़ियों की खड़खड़, जहाजों के भोंपुग्रों की घुटी-घुटी ग्रौर कर्कश ग्रावाजें, घाट-मजदूरों, जहाजियों ग्रौर चुंगीघर के सिपाहियों की चीख़-चिल्लाहट – उन सब ध्वनियों के सम्मिश्रण से कार्यरत दिन के उस रौद्र संगीत की सृष्टि हो रही थी, जो बन्दरगाह के ऊपरी वातावरण में व्याघात उपस्थित करता हुग्रा उमड़-घुमड़ रहा था। ग्रौर नीचे धरती पर से ग्रावाजों की नयी लहरें उसमें शामिल होने के लिये निरन्तर ग्राकाश की ग्रोर बढ़ती रहतीं – कभी धरती को कंपा देनेवाली गड़गड़ाहट के रूप में ग्रौर कभी ऊमस-भरी वायु को तार-तार कर देनेवाले धमाके के रूप में, जैसे कोई भारी चीज टूटकर चकनाचूर हो गई हो।

ग्रेनाइट पत्थर, लोहा, लकड़ी, फ़र्श के पत्थर, जहाज़ ग्रौर लोग-बाग—हर चीज़ मरकरी* की वन्दना के सबल स्वरों में डूबी हुई थी। इसमें मानवीय ग्रावाज़ें मुश्किल से ही सुनाई देती थीं, क्षीण ग्रौर हास्यास्पद थीं वे। ग्रौर ख़ुद लोग भी—जिन्होंने इस शोर-गुल को जन्म दिया था, निरीह ग्रौर हास्यास्पद थे। धूल से लथपथ तथा चिथड़ों में लिपटे उनके फुरतीले शरीर कमर पर लदे बोझ से दोहरे होते हुए, धूल, तपन ग्रौर शोरगुल के बीच इधर से उधर ग्रा-जा रहे थे ग्रौर ग्रजगरों से भी बड़े लौह भीमों, मालों के ग्रम्बारों, खड़खड़ करते रेल के डिब्बों तथा ग्रन्य तमाम चीज़ों की तुलना में—जिनका ख़ुद उन्होंने ही निर्माण किया था—वे नगण्य मालूम होते थे। उन्हीं के हाथों से बनी चीज़ों ने उन्हें ग्रपना ग़ुलाम बना लिया था ग्रौर उन्हें व्यक्तित्वहीन कर दिया था।

भाप गरमाते हुए भारी-भरकम ग्रौर लम्बे-चौड़े जहाज़ सीटियों की सिसकार ग्रौर फुंकार छोड़ रहे थे, भारी उसांसें ले रहे थे ग्रौर उनसे निकलनेवाली प्रत्येक ध्वनि उन गंदे ग्रौर मटमैले जीवों का घृणा से उपहास करती प्रतीत होती थी जो उनके गहरे तहख़ानों में दास्य श्रम से तैयार हुग्रा माल लादने के लिये उनके डेकों पर रेंग रहे थे। ग्रपने पेट में डालने के लिये दो मुट्ठी ग्रनाज पाने की ख़ातिर घाट-मज़दूरों की ये लम्बी क़तारें जब जहाज़ का लौह पेट भरने के लिए हज़ारों मन ग्रनाज ग्रपनी कमर पर लादकर चलतीं तो ऐसी हास्यास्पद लगतीं कि हंसते-हंसते ग्रांखों में ग्रांसू ग्रा जायें। चिथड़ों में लिपटे, पसीने से तर ग्रौर गर्मी, शोर तथा हाड़तोड़ मेहनत के कारण मूढ़ बने लोग ग्रौर उन्हीं द्वारा निर्मित शक्तिशाली एवं सूर्य की किरनों में चमकती हुई बढ़िया मशीनें—जिन्हें ग्रन्ततः भाप ने नहीं, बल्कि उनके बनानेवालों के रक्त ग्रौर मांसपेशियों ने चालू किया था—मानो एक ग्रत्यधिक कटु व्यंगपूर्ण कविता की तुलना प्रस्तुत करते थे।

ग्रावाज़ों का यह ऊहापोह बड़ा बोझिल मालूम होता था। धूल नाक ग्रौर ग्रांखों में घुसी जाती थी। तपन इतनी थी कि शरीर झुलसा ग्रौर बेदम हुग्रा जाता था। हर चीज़ में एक कसाव ग्रौर तनाव था, मानो धीरज का बांध टूटना चाहता हो, कोई प्रलयंकर घटना सिर पर मंडरा रही हो—एक भीषण विस्फोट होनेवाला हो जो इस समूचे दमघोट वातावरण को ख़त्म कर देगा ग्रौर लोग उन्मुक्त ग्रौर सहज भाव से सांस ले सकेंगे। तब

---

*प्राचीन रोमनों का वाणिज्य देवता। सं०

एक शांत निस्तब्धता दुनिया पर छा जायेगी और लोगों को बहरा, चिड़चिड़ा तथा पागल बना देनेवाली यह धूल-धूसरित चिल्लपों सदा के लिये विदा हो जायेगी, और यह नगर, सागर और आकाश शान्त, ताज़ा और सुन्दर हो उठेंगे...

एक के बाद एक गूंजदार और सधे हुए बारह घण्टे बजे। जब तांबे की आख़िरी गूंज विलीन हो गयी तो श्रम के बर्बर संगीत ने भी विराम ग्रहण किया और अगले ही क्षण केवल असन्तोष की भुनभुनाहट बनकर रह गया। अब लोगों की आवाज़ें और सागर की मर्मर-ध्वनि अधिक स्पष्टता से सुनाई देने लगी।

यह खाने का समय था।

१

अपना काम बन्द करने के बाद जब घाट-मजदूर शोर मचाती छोटी-छोटी टोलियों में घाट पर इधर-उधर फैलकर और खोमचेवालों से खाने की चीज़ें खरीदकर छायादार कोनों-कोनों की खोज कर रहे थे जहां फ़र्श पर आराम से बैठकर वे अपना भोजन कर सकें, तब पुराने घाघ ग्रीश्का चेल्काश ने वहां अपनी सूरत दिखाई। सभी घाट-मजदूर उसे ख़ूब अच्छी तरह जानते थे। वह पक्का पियक्कड़, साहसी और बहुत ही दक्ष चोर था। वह नंगे पांव और नंगे सिर था। वह तार-तार हुआ मख़मली पतलून और छींट की मैली-कुचैली क़मीज पहने था जिसका कालर फटा हुआ था और जिसके भीतर से सांवली चमड़ी चढ़ी उसकी हड़ियल छाती दिखाई पड़ रही थी। उसके काले और पके अस्त-व्यस्त बालों, अलसाये, लम्बोतरे तथा लुटेरों जैसे चेहरे से यह पता चल रहा था कि वह अभी-अभी सोकर उठा है। एक तिनका उसकी भूरी मूंछों में और दूसरा बाएं गाल पर उगी खूंटी में उलझा हुआ था तथा अपने कान के ऊपर उसने लीपा वृक्ष की एक छोटी-सी टहनी तोड़कर खोंस ली थी। दुबला-पतला और लम्बा, कंधे कुछ झुके हुए, पत्थर-जड़ी सड़क पर सामने से वह आ रहा था – अलस गति से झूमता-झामता, हुकदार नाक से वायु को सूंघता और अपनी चमकदार भूरी आंखों से घाट-मजदूरों की टोह लेता, मानो वह उनमें से किसी की खोज कर रहा हो। उसकी लम्बी भूरी मूंछें, बिल्ली की मूंछों की भांति, बराबर

फरफरा रही थीं, अपने हाथों को वह कमर के पीछे बांधे था और उन्हें बराबर आपस में ऐंठता हुआ अपनी टेढ़ी-मेढ़ी फुर्तीली उंगलियों को चटखा रहा था। यहां भी, जहां उसके जैसे अन्य सैकड़ों तलछटी लोग मौजूद थे, वह तुरंत ध्यान आकर्षित करता था, क्योंकि अपने बहुत ही दुबले-पतले शरीर और घात में लगी चाल के कारण वह स्तेपी के बाज़ जैसा लगता था। उसकी चाल में बाज़ की उड़ान की भांति सधी हुई शांति के चोले में झपट्टा मारने की सन्नद्धता छिपी थी।

कोयले की टोकरियों के ढेर की छाया में बैठे मज़दूरों के एक दल के पास जब वह पहुंचा तो मज़बूत काठी का एक युवक, जिसके बुद्धू-से चेहरे पर चकत्ते उभर आये थे और गर्दन की खरोंचें यह बता रही थीं कि हाल ही में उसकी ख़ूब मरम्मत की गई है, उससे मिलने के लिये उठ खड़ा हुआ। चेल्काश के साथ-साथ चलते हुए उसने धीमी आवाज़ में कहा –

"जहाज़ियों को पता चला है कि कपड़े की दो गांठें ग़ायब हैं। वे खोज कर रहे हैं।"

"तो?" शांत भाव से ऊपर से नीचे तक उसका जायज़ा लेते हुए चेल्काश ने कहा।

"तो क्या? बस खोज कर रहे हैं, और कुछ नहीं।"

"क्या मुझे भी उनका हाथ बंटाना चाहिये इस खोज में?" गोदाम की ओर देखते हुए चेल्काश ने मुस्कराकर कहा।

"भाड़ में जाओ!"

और वह लौट चला।

"रुको! यह तो बताओ कि तुम्हारे चेहरे का यह सिंगार किसने किया है? क्या हुलिया बना डाला है... मीश्का को तो यहां कहीं नहीं देखा?"

"नहीं, उसे काफ़ी देर से नहीं देखा," युवक ने अपने साथियों के निकट पहुंचते हुए मुड़कर कहा।

चेल्काश को जो भी देखता, पुराने परिचित की भांति उसका अभिनन्दन करता। लेकिन वह, जो हमेशा बहुत ख़ुशमिज़ाज रहता था और शब्दों के तीखे बाण चलाता था, आज अपने रंग में नहीं था, और नपे-तुले तथा झल्लाये हुए जवाब देता था।

सहसा माल के एक अम्बार के पीछे से चुंगी-गारद का एक सिपाही नमूदार हो गया – गहरे हरे रंग की वर्दी पहने, धूल-धूसरित, सीधा-सतर,

झपटने के लिए तैयार। वह चेल्काश की राह रोककर चुनौती की मुद्रा में खड़ा हो गया। उसका एक हाथ कटार की मूठ पर था और दूसरा चेल्काश की गर्दन की ओर बढ़ रहा था।

"ठहरो, कहां जा रहे हो?"

चेल्काश एक डग पीछे हटा, नज़र उठाकर उसने गारद के सिपाही की ओर देखा और एक फीकी सी मुस्कान उसके होंठों पर दौड़ गई।

सिपाही के लाल, धूर्त्त-दयालु चेहरे ने भयानक मुद्रा धारण करने का प्रयत्न किया। इसके लिए उसने अपने गालों को फुलाया और सुर्ख़ कर लिया, भौंहों को सिकोड़ा और आंखों को तरेरा—लेकिन इससे, कुल मिलाकर, उसका चेहरा अत्यन्त हास्यास्पद हो उठा।

"तुम्हें आगाह किया जा चुका है कि अगर अपनी हड्डी-पसलियों की ख़ैर चाहते हो तो घाट के पास तक न फटकना, लेकिन तुम फिर यहां चले आये?" उसने गरजकर कहा।

"कहो, सेम्योनिच, मजे में तो हो?" चेल्काश ने शांत भाव से अपना हाथ बढ़ाते हुए कहा, "आज बहुत दिनों के बाद दिखाई दिये।"

"अच्छा होता कि तुम कभी भी दिखाई न देते! जाओ, जाओ यहां से!"

लेकिन फिर भी उसने बढ़े हुए हाथ से हाथ मिलाया।

"मैं तुमसे पूछना चाहता था," गारद के सिपाही के हाथ को अपनी इस्पाती उंगलियों में थामे और घनिष्ठता के अन्दाज़ में उसे हिलाते हुए चेल्काश ने कहा, "मीश्का को तो कहीं नहीं देखा?"

"कौन मीश्का? मैं किसी मीश्का को नहीं जानता! यहां से चलते बनो, भाई, अगर गोदामघर के सिपाही ने तुम्हें देख लिया तो..."

"वही लाल बालों वाला, जिसके साथ पिछली बार मैं 'कोस्त्रोमा' पर काम करता था," चेल्काश ने अपनी ही बात दोहरायी।

"जिसके साथ मिलकर तुम चोरी करते हो, वही न? वह अस्पताल में है, तुम्हारा वह मीश्का। उसके ऊपर लोहे का ढांचा आ गिरा और उसकी टांग कुचल गई। लेकिन मैं तुमसे शराफ़त से कह रहा हूं, कि भाई यहां से चलते बनो, नहीं तो मुझे गर्दन पकड़कर धकियाना पड़ेगा।"

"अरे, वाह! और तुम कहते थे कि मीश्का को नहीं जानते... तुम इतने नाराज़ क्यों हो, सेम्योनिच?"

"बहुत बक-बक नहीं करो! जाओ यहां से!"

गारद का सिपाही झुंझला उठा। उसने अपने चारों ओर देखा और हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगा। लेकिन चेल्काश ने उसका हाथ नहीं छोड़ा, शान्त भाव से अपनी झाड़ीनुमा भौंहों के नीचे से उसे देखा और कहता गया—

"तुम मुझे ऐसे खदेड़ो नहीं। मैं तुम्हारे साथ थोड़ी गपशप करके चल दूंगा। हां, तो कैसा हाल-चाल है? तुम्हारी बीबी और बच्चे तो मजे में हैं न?" और फिर, अपनी आंखों को मिचमिचाते तथा व्यंगपूर्ण हंसी में अपनी बत्तीसी झलकाते हुए उसने कहा, "बहुत दिनों से तुमसे मिलने को जी चाह रहा था, लेकिन आ ही नहीं सका। इस कम्बख़्त शराब के मारे..."

"बस, बस, रहने दो! मजाक-बजाक से काम नहीं चलेगा, हड़ीले शैतान! मैं बहुत संजीदगी से कह रहा हूं... या फिर तुमने अब घरों में सेंध लगाना और राहगीरों को लूटना शुरू कर दिया है?"

"इसकी क्या जरूरत है? यहां घाट पर ही इतनी दौलत है कि हम और तुम जिन्दगी भर व्यस्त रह सकते हैं। सच, सेम्योनिच, बड़ी दौलत है यहां। हां, सुना है कि तुमने कपड़े की दो और गांठें तिड़ी कर दी हैं। जरा संभलकर चलो, नहीं तो मुसीबत में फंसे नजर आओगे!"

गुस्से से आग-बबूला होकर सेम्योनिच कांपने लगा और लारें गिराते हुए कुछ कहने की कोशिश करने लगा। चेल्काश ने उसका हाथ छोड़ दिया और शांत भाव से लम्बे डग भरता घाट के फाटक की ओर चल दिया। गारद का सिपाही भी ख़ूब गालियां देता हुआ उसके पीछे-पीछे हो लिया।

चेल्काश अब चहक उठा था। अपने दांतों के बीच से वह धीमे-धीमे सीटी बजाने लगा, दोनों हाथ पतलून की जेबों में डालकर धीरे-धीरे चला जा रहा था और दायें-बायें चुटकियां लेता और हंसी-मज़ाक़ भी करता जाता था। जवाब भी उसे उतने ही करारे मिलते थे।

"तुम्हारे भी ख़ूब ठाठ हैं, ग्रीश्का! साथ में मालिकों ने एक टहलुवा भी लगा दिया है!" एक घाट-मजदूर ने, जो अपने साथियों के साथ जमीन पर पांव पसारे भोजन के बाद सुस्ता रहा था, चिल्लाकर कहा।

"सेम्योनिच को इस बात का बड़ा ख़याल है कि मेरे नंगे पांवों में कहीं कोई कील-कांटा न गड़ जाए!" चेल्काश ने जवाब दिया।

वे दरवाज़े पर पहुंच गए। दो सिपाहियों ने चेल्काश के कपड़ों को टटोल-टटोलकर उसकी तलाशी ली और फिर उसे धीरे से बाहर सड़क पर धकेल दिया।

वह सड़क पार कर, शराबख़ाने के दरवाज़े के सामने, एक पेटी पर बैठ गया। माल से लदी घोड़ा-गाड़ियों की एक पांत खड़खड़ करती घाट के दरवाज़े में से बाहर निकल रही थी और ख़ाली गाड़ियों की एक दूसरी पांत दूसरी ओर से भीतर प्रवेश कर रही थी। उनके गाड़ीवान, अपनी गद्दियों पर बैठे, धचकोले खाकर उछल रहे थे। घाट से बेहद शोर-गुल सुनाई दे रहा था और दमघोट धूल के गुब्बारे दिखाई दे रहे थे...

इस भयानक शोर-शराबे में चेल्काश अपने को ख़ूब रंग में महसूस कर रहा था। वह किसी भारी माल पर हाथ साफ़ करने की कल्पना में मगन था। इसमें उसे थोड़ी सी मेहनत, लेकिन बड़ी फुर्ती की जरूरत होगी। उसे यक़ीन था कि चुस्ती-फुर्ती की उस में कमी नहीं है। यह सोचकर उसने ख़ुशी से अपनी आंखें सिकोड़ीं कि नोटों की उन तमाम गड्डियों को वह अगली सुबह किस प्रकार ख़र्च करेगा... उसे अपने साथी मीश्का का ख़याल आया। उसकी उसे सख़्त जरूरत थी, लेकिन वह अपनी टांग तोड़े बैठा था। चेल्काश ने मन ही मन उसे कोसा—उसे डर था कि वह अकेला इस काम को सिरे नहीं चढ़ा सकेगा। रात को मौसम का जाने क्या रंग होगा? सिर उठाकर उसने आकाश पर नजर डाली, फिर सामने फैली सड़क को नापा।

कोई छः एक डग दूर, खम्भे से कमर टिकाए एक लड़का, पटरी पर बैठा था। वह गाढ़े की नीली कमीज और पतलून, पांवों में वक्कल की चप्पलें और सिर पर फटी हुई छज्जेदार भूरी टोपी पहने था। उसकी बगल में एक छोटा-सा थैला, सूखी घास में लिपटा और ढंग से रस्सी से बंधा हुआ बिना हत्थे का एक हंसिया पड़ा था। लड़का हट्टा-कट्टा और चौड़े कंधों वाला था। उसके बाल सुनहरे थे और उसका चेहरा हवा और धूप से सांवला पड़ गया था। अपनी बड़ी-बड़ी नीली आंखों से वह चेल्काश की ओर सहज विश्वास और मित्र-भाव से देख रहा था।

चेल्काश ने अपनी बत्तीसी चमकाई, जीभ बाहर निकाली, और मुंह बनाकर तथा दीदे निकालकर उसकी ओर ताकने लगा।

लड़के ने, अचरज में भरकर, पहले तो आंखें मिचमिचाईं, फिर जोरों

से हंसने लगा और हंसते हुए ही चिल्लाकर कहा, "ओह, बड़े मौजी हो!" फिर उठे बिना ही, फ़र्श के पत्थरों पर से खिसकता, वह चेल्काश की ओर बढ़ चला। उसका थैला भी उसके साथ-साथ धूल में घिसट रहा था और उसके हंसिये की नोक पत्थरों से टकराकर खनखना रही थी।

"लगता है कि बहुत पी गए हो भाई?" चेल्काश के पतलून को जरा खींचते हुए उसने पूछा।

"तुमने ठीक कहा, मेरे छौने, ठीक ही कहा है तुमने," चेल्काश ने मुस्कराते हुए स्वीकार किया। इस स्वस्थ, भले हृदय और बच्चों जैसी निश्छल आंखों वाले लड़के ने तुरत उसके हृदय में घर कर लिया। "और तुम क्या घास काटकर आ रहे हो?" उसने पूछा।

"कुछ न पूछो! डेढ़ मील तक घास काटी और मिली कौड़ियां। बुरे दिन आ गए हैं। लोगों की भरमार है! अकाल के मारे ढेरों लोग चले आये हैं, मजूरी बहुत कम रह गयी। जरा सोचो तो, कुबान प्रदेश में अब साठ कोपेक मिलते हैं। कहते हैं कि पहले तीन या चार, बल्कि पांच रूबल तक, मिल जाते थे!"

"पहले की बात करते हो! पहले तो किसी रूसी की शक्ल देखकर ही वे तीन-तीन रूबल तक दे डालते थे। दसेक साल पहले मैं इसी तरह रोजी कमाता था। किसी गांव में चला जाता और कहता—'देखो, लोगो, मैं रूसी हूं!' फिर वे मेरे चारों ओर जमा हो जाते, ऊपर से नीचे तक मुझे देखते, मेरे बदन में उंगलियां गड़ाते और चुटकियां काटते, ओह-आह करते और तीन रूबल मेरी भेंट कर देते। इसके अलावा, ख़ूब खिलाते-पिलाते और जब तक जी चाहे गांव में रहने का बुलावा देते।"

लड़का पहले तो मुंह बाए और अपने गोल चेहरे पर अचरज-भरी प्रशंसा के भाव लिये सुनता रहा, लेकिन जब उसने अनुभव किया कि चेल्काश डून की हांक रहा है तो उसने सटाक से अपना मुंह बन्द कर लिया और हंस पड़ा। चेल्काश अपने चेहरे पर संजीदगी बनाये रहा और अपनी मुस्कराहट को उसने मूंछों के भीतर छिपाए रखा।

"तुम भी अजीब पंछी हो, बातें ऐसे करते हो मानो सच बोल रहे हो और मैं विश्वास करता जाता हूं... लेकिन, ईमान से कहता हूं, पहले वहां..."

"और मैं क्या कह रहा था? यही कि पहले वहां..."

"ओह, हटाओ इसे!" लड़के ने हाथ झटकते हुए कहा, "यह बताओ कि तुम हो कौन – मोची या दर्जी क्या?"

"मैं?" चेल्काश ने एक क्षण कुछ सोचा और फिर बोला, "मैं मछियारा हूं..."

"मछियारा? अरे, वाह! तो तुम मछलियां पकड़ते हो?"

"मछलियां ही क्यों? यहां के मछियारे केवल मछलियां नहीं पकड़ते। ज्यादातर डूबे लोगों, पुराने लंगरों और डूबी हुई नावों को पकड़ते हैं। इसके लिए ख़ास क़िस्म के कांटे होते हैं..."

"फिर बेपर की उड़ानें लगे! शायद तुम उन मछियारों में से हो जिनका यह गीत है –

हम डालते हैं अपने जाल
सूखे-सूखे तटों पर,
बाज़ार की दुकानों
और खुले तहख़ानों पर!"

"ऐसे मछियारों से कभी मिले हो?" चेल्काश ने मुस्कराकर पूछा।

"मिला तो नहीं, लेकिन सुना है..."

"अच्छे लगते हैं?"

"कौन, वे लोग? अच्छे क्यों न लगते? भले लोग हैं, आजाद हैं, अपनी मौज जीते हैं..."

"तुम्हारे लिए आजादी का क्या मतलब है? क्या तुम्हें भी आजादी पसन्द है?"

"बेशक। इससे अच्छी बात भला और क्या होगी कि आदमी ख़ुद ही अपना मालिक हो – जहां जी चाहे जाए, जो मन में आए करे... केवल अपना दामन बेदाग़ रखे, ऐसा न हो कि गले में चक्की के पाट बंध जाएं। ख़ुदा को न भूले और ख़ूब मजे से जिन्दगी बिताए..."

चेल्काश ने घिन से थूका और मुंह मोड़ लिया।

"अब मुझे ही ले लो..." लड़का कहता गया, "मेरा बाप बिना कुछ छोड़े मर गया, मेरी मां बूढ़ी है और जमीन में कुछ पैदा नहीं होता। ऐसी हालत में मैं क्या करूं? जीना तो है ही। मगर कैसे? मालूम नहीं। भले घर की एक लड़की से मेरी शादी हो सकती है। मुझे कोई एतराज

नहीं, अगर घर वाले उसका हिस्सा उसके नाम कर दें। लेकिन वे नहीं करेंगे। उसका खूसट बाप उसे एक इंच भी जमीन नहीं देगा। सो मुझे उसका दास बनकर काम करना पड़ेगा... बहुत दिनों तक... बल्कि सालों तक! देखा तुमने, कैसी मुसीबत है! अधिक नहीं, अगर सौ डेढ़ सौ रूबल भी मेरे हाथ लग जाते तो मैं अपने पैरों पर खड़ा हो जाता और उसके बाप के सामने गर्दन तानकर कह सकता–'तुम अपनी जायदाद का हिस्सा मारफ़ा के नाम कर देना चाहते हो या नहीं? नहीं करना चाहते? तुम्हारी मर्जी! गांव में अकेली वही नहीं है, और लड़कियां भी हैं, भला हो भगवान का!' और मैं, देखा तुमने, आजाद हो जाऊंगा, जो चाहूंगा कर सकूंगा!"

लड़के ने आह भरी और फिर कहता गया–

"लेकिन ऐसा मालूम होता है कि बन्धक घर-जमाई बनने के सिवा मेरे लिये और कोई चारा नहीं है। मैंने सोचा था कि कुबान में मजदूरी से सौ दो सौ रूबल कमा लूंगा और बस, मैं भी भला आदमी बन जाऊंगा! लेकिन वहां कुछ पल्ले नहीं पड़ा। मेरे भाग्य में तो खेत मजदूर बनना ही बदा है... मैं कभी निजी खेत का मालिक नहीं बन सकूंगा, देखा तुमने?"

बन्धक घर-जमाई बनने की कल्पना उसे इतनी अप्रिय थी कि कहते-कहते उसके बदन में बल पड़ गए और उसका चेहरा उदास हो गया।

"अब कहां जाओगे?" चेल्काश ने पूछा।

"घर। और कहां जा सकता हूं?"

"यह मैं क्या जानूं? हो सकता है कि तुम तुर्की जाने की सोच रहे हो..."

"तुर्की?" वह चकित हो उठा, "क्या कोई ईसाई कभी तुर्की जाता है? तुम भी क्या बात करते हो!"

"तुम्हारे भेजे में निरा गोबर भरा है!" चेल्काश बुदबुदाया और उसने अपना मुंह फेर लिया। गांव के इस स्वस्थ लड़के ने उसके हृदय में एक खलबली मचा दी थी...

भीतर ही भीतर असन्तोष की एक भावना आकार ग्रहण कर रही थी जिसकी वजह से रात की मुहिम पर वह अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर पा रहा था।

चेल्काश के शब्दों से आहत होकर लड़का मन ही मन कुछ कुछ भुनभुनाया और कनखियों से उसकी ओर देखा। उसके गाल फूलकर कुप्पा बन गये थे, उसके होंठ बाहर को निकले हुए थे और वह तेजी से अपनी सिकुड़ी

हुई आंखों को विचित्र ढंग से मिचमिचा रहा था। स्पष्ट ही उसे यह उम्मीद नहीं थी कि मूंछों वाले इस आवारा जीव के साथ उसकी बातों का इतने अचानक और इतने असन्तोषजनक रूप में अन्त हो जायेगा।

इस आवारा आदमी ने अब उसकी ओर कोई ध्यान न दिया। पेटी पर बैठा वह सोच में डूबा हुआ सीटी बजा रहा था और अपने पांव के गंदे अंगूठे से ताल दे रहा था।

लड़के का हृदय उससे सुलटने के लिये कुड़मुड़ा रहा था।

"ऐ मछियारे, क्या तुम अक्सर इसी प्रकार नशे में धुत्त रहते हो?" उसने यह कहना ही चाहा था कि वह मछियारा अनायास उसकी ओर मुड़ते हुए बोला—

"सुनो, छौने, क्या आज रात मेरे साथ काम करना चाहोगे? जल्दी से तय करके बताओ!"

"कैसा काम है?" लड़के ने दुविधा में पड़ते हुए पूछा।

"कैसा क्या! जो भी काम मैं तुम्हें दूं... हम मछली पकड़ने जा रहे हैं। तुम डांड़ चलाना..."

"हुंह... इसमें क्या है? यह तो कर सकता हूं। केवल... ऐसा न हो, तुम किसी मुसीबत में फंसा दो। तुम बहुत अजीब जीव हो... तुमसे कोई पार नहीं पा सकता..." चेल्काश अपने हृदय में जल-भुन उठा और निर्मम झल्लाहट से बोला—

"जब तुम कुछ जानते नहीं, तो यों ही बक-बक नहीं करो। अभी इस थूथनी पर एकाध जड़ दूं तो अक़्ल ठिकाने आ जाये।"

वह उछलकर खड़ा हो गया। उसकी आंखें चिनगारियां छोड़ रही थीं। उसका बायां हाथ मूंछ ऐंठ रहा था और दायां हाथ ख़ूब कसा हुआ गंठीला मुक्का बना हुआ था।

लड़का कांप उठा। उसने जल्दी से अपने अग़ल-बग़ल देखा फिर, घबराहट में आंखें मिचमिचाता, ख़ुद भी उछलकर खड़ा हो गया। दोनों चुपचाप खड़े आंखों ही आंखों में एक दूसरे को तौल रहे थे।

"हां तो?" चेल्काश ने कठोर आवाज़ में पूछा। इस ज़रा-से पिल्ले ने उसका अपमान किया था। अब तक यों ही उपेक्षा के साथ वह उससे खिलवाड़ करता रहा था, लेकिन अब उसकी समूची आत्मा घृणा से उबल रही थी, क्योंकि उसकी नीली आंखें इतनी निश्छल थीं, उसका संवलाया

हुआ चेहरा इतना स्वस्थ था, उसकी छोटी-छोटी बांहें इतनी पुष्ट थीं, क्योंकि उसका कहीं कोई गांव था और उस गांव में उसका एक घर था, और एक धनी किसान उसे अपना घर-जमाई बनाने को तैयार था। उसे घृणा थी जीवन के उस ढंग से, जिसे वह अतीत में बिता चुका था और जिसे वह भविष्य में बिताना चाहता था, और सबसे अधिक घृणा थी उसे इस बात से कि उसमें – चेल्काश की तुलना में एक निरा बच्चा होते हुए भी – आज़ादी से जीवन बिताने की एक ऐसी भावना मौजूद थी जिसका न तो वह मूल्य जानता था और न ही जिसकी उसे ज़रूरत थी। यह बात कभी अच्छी नहीं लगती कि वह आदमी भी, जिसे हम अपने से नीचा समझते हैं, ठीक उन्हीं चीज़ों से प्यार अथवा घृणा करे जिनसे कि हम करते हैं, क्योंकि ऐसा करके वह एक प्रकार से हमारे साथ अपनी समानता की स्थापना करता मालूम होता है।

लड़के ने चेल्काश की ओर देखा और उसे अपने स्वामी के रूप में अनुभव किया।

"यों तो मुझे... कोई एतराज़ नहीं," उसने कहा, आख़िर मुझे काम चाहिये। इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है कि मैं तुम्हारे लिये काम करता हूं अथवा अन्य किसी के लिये? मेरे मुंह से वह बात कुछ यों ही... इसलिये निकल गई कि तुम कुछ कामकाजी आदमी नहीं दिखाई पड़े–तुम... ख़ासे फटेहाल हो। लेकिन सो कुछ नहीं। मैं जानता हूं, ऐसा किसी के भी साथ हो सकता है। नशे में धुत्त लोग क्या मैंने पहले नहीं देखे? देखे हैं, बहुत देखे हैं, तुमसे भी बढ़-चढ़कर।"

"ठीक है, ठीक है! तो तुम राज़ी हो?" चेल्काश ने नर्म पड़ते हुए कहा।

"मैं? हां! ख़ुशी से! बोलो, क्या दोगे?"

"यह तो काम पर निर्भर करता है। इस बात पर कि कितना हमारे हाथ लगता है। हो सकता है कि तुम पांच रूबल तक पा जाओ, समझे?"

बात अब पैसे की हो रही थी। इसलिये किसान का वह बच्चा पक्की बात कर लेना चाहता था – अपनी ओर से भी और उस आदमी की ओर से भी, जोकि उसे ठेके पर रख रहा था। सो एक बार फिर सन्देह और आशंकाओं ने उसे घेर लिया।

"नहीं, भाई, ऐसे काम नहीं चलेगा!"

चेल्काश ने भी अपना पांसा फेंका।

"अभी इस बारे में बात न करो। आओ, शराबख़ाने में चलें।"

और वे साथ-साथ चल दिए। चेल्काश स्वामी के अन्दाज़ में अपनी मूंछें ऐंठता हुआ और लड़का हुक्म बजाने को तैयार, किन्तु फिर भी सहमा-सा और हृदय में अविश्वास लिए।

"तुम्हारा नाम क्या है?" चेल्काश ने पूछा।

"गाव्रीला!" लड़के ने जवाब दिया।

धुंधले और धुवें से काले पड़े शराबख़ाने में प्रवेश करने के बाद चेल्काश कलवार के पास पहुंचा और पुराने ग्राहक के अन्दाज़ में उसने एक बोतल वोद्‌का, गोभी के शोरबे, भुने मांस और चाय का आर्डर दिया। इसके बाद इतना और कह दिया—"टांक लेना!" जवाब में कलवार ने चुपचाप सिर हिला दिया। यह देखकर गाव्रीला का हृदय तुरंत अपने मालिक के प्रति सम्मान से भर गया, जो अपने इस आवारा रंग-ढंग के बावजूद, प्रत्यक्षतः इतनी अधिक जान-पहचान और साख रखता था।

"अब कुछ खाने-पीने के साथ-साथ बातें भी कर लेंगे। तुम यहीं बैठो, मैं अभी आता हूं।"

यह कहकर वह चला गया। गाव्रीला ने अपने चारों ओर नज़र डाली। शराबख़ाना तहख़ाने में था—अंधेरा और सीलन भरा। वोद्‌का, तम्बाकू के धुवें, राल तथा ऐसी ही अन्य किसी तेज़ गंध से दम घुटता था। नशे में धुत्त लाल दाढ़ी वाला जहाज़ी, कोयले की धूल और राल में लिथड़ा, गाव्रीला के सामने वाली मेज़ पर दोहरा हो गया था। हिचकियों के बीच वह किसी गीत के असम्बद्ध और टूटे-फूटे शब्द बड़बड़ा रहा था, जो कभी तो सिसकारियों से मालूम होते और कभी गले की घरघर जैसे। स्पष्टतः वह रूसी नहीं था।

उसके पीछे मोल्दाविया की दो स्त्रियां बैठी थीं। तपे ताम्बे-सा रंग, काले बाल, चिथड़ों में लिपटी। नशे में धुत्त वे भी कोई गीत भुनभुना रही थीं।

धुंधले वातावरण में और भी शक्लें तैरती नज़र आ रही थीं—सब की सब हल्ला करती हुई, बेचैन, अस्त-व्यस्त और नशे में धुत्त...

गाव्रीला को भय ने दबोच लिया। उसने चाहा कि मालिक शीघ्र ही आ जाये। शराबख़ाने की सभी आवाज़ें मिलकर एक आवाज़ बन गई थीं।

ऐसा मालूम होता था जैसे बहुत-सी आवाजोंवाला कोई भीमाकार जन्तु, पत्थरों की इस खोह से बच निकलने का प्रयत्न असफल होने पर, गरज और गुर्रा रहा हो... गाव्रीला को ऐसा मालूम हुआ जैसे एक बोझिल नशा-सा उसके बदन में सरसरा रहा हो जिससे उसका सिर चकरा रहा था और आंखों में, जो भयभीत उत्सुकता से शराबख़ाने में चारों ओर देख रही थीं, एक धुंध-सी छा गई थी।

आख़िर चेल्काश आया और दोनों खाने-पीने तथा बातें करने लगे। तीसरा गिलास पीने के बाद गाव्रीला पर वोद्का का रंग जम गया। वह बहुत प्रसन्न था और अपने मालिक को ख़ुश करने के लिये—जिसने उसे इतना बढ़िया खाना खिलाया था—कोई बहुत ही अच्छी बात कहना चाहता था। लेकिन, जाने क्यों, शब्द उसके गले में ही उमड़-घुमड़कर रह जाते थे, मुंह से बाहर न निकल पाते थे—एकाएक उसकी जीभ कुछ इतनी भारी हो गयी थी कि संभाले नहीं संभलती थी।

चेल्काश, होंठों पर एक व्यंगपूर्ण मुस्कराहट लिये, उसकी ओर देख रहा था—

"चित हो गए? बिल्कुल चिथड़ा हो तुम! लगे हवा में उड़ने और केवल पांच जाम पीकर! काम कैसे करोगे?"

"भाई!" गाव्रीला बुदबुदाया, "कोई चिन्ता न करो! मैं तुम्हारी बड़ी इज़्ज़त करता हूं! लाओ, तुम्हारा मुंह चूम लूं... लाओ न?"

"बस-बस, रहने दो! लो, और चढ़ाओ!"

गाव्रीला पीता गया और आख़िर उसकी ऐसी हालत हो गयी जब उसे अपने आस-पास की हर चीज़ लयबद्ध लहरों की भांति हिलोरें लेती और डोलती नजर आने लगी। इससे सिर चकरा गया और जी मतलाने लगा। उसके चेहरे पर मूर्खतापूर्ण उत्साह झलक रहा था। जब भी वह कुछ कहने की कोशिश करता, उसके होंठ हास्यास्पद ढंग से एक दूसरे से जुड़ जाते और उनसे अस्पष्ट स्वर निकलने लगते। चेल्काश एकटक—मानो वह कुछ याद कर रहा हो—उसकी ओर देखता हुआ अपनी मूंछों को ऐंठ रहा था और कटुता से मुस्करा रहा था।

शराबख़ाना अब भी मदमस्त आवाजों से गूंज रहा था। लाल बालों वाला जहाजी मेज पर सिर टिकाकर सो रहा था।

"चलो, अब चलें," चेल्काश ने उठते हुए कहा।

गाव्रीला ने उसके साथ चलने का प्रयत्न किया, लेकिन सफल नहीं हो सका। उसके मुंह से एक बेहूदा-सी गाली निकली और वह नशे में धुत्त आदमी की तरह बेमतलब की हंसी हंसने लगा।

"ढेर हो गया!" चेल्काश बुदबुदाया और फिर अपनी जगह पर बैठ गया।

गाव्रीला हंसता हुआ चौंधियाई आंखों से अपने मालिक की ओर देखता रहा। चेल्काश ने अपनी पैनी और गम्भीर नज़र से उसका जायज़ा लिया। एक ऐसे आदमी का उसने जायज़ा लिया जिसका भाग्य वह अपने भेड़ियों-जैसे पंजों में दबोचे था। उसने अनुभव किया कि वह उसके साथ जो भी चाहे कर सकता है। वह चाहे तो उसे ताश के पत्ते की भांति तोड़-मरोड़ सकता है अथवा सहारा देकर उसे उसके ठोस किसानी जीवन में पहुंचा सकता है। उसपर अपना प्रभुत्व अनुभव करते हुए उसने सोचा कि इस लड़के को वह प्याला कभी न पीना पड़े जो ख़ुद उसे–चेल्काश को–पीना पड़ा है... लड़के से उसे ईर्ष्या भी हो रही थी और उसपर दया भी आ रही थी। वह उसका मज़ाक भी उड़ाता था और साथ ही यह सोचकर उसका हृदय कसकता भी था कि अगर वह उसके जैसे हाथों में पड़ गया तो क्या होगा। अन्त में चेल्काश के हृदय को मथनेवाले इन विभिन्न भावों ने मिलकर एक भाव का रूप धारण कर लिया–एक ऐसे भाव का, जिसमें पिता का स्नेह भी था और व्यावहारिकता भी थी। इस लड़के की उसे ज़रूरत भी थी और उसे उसपर तरस भी आ रहा था। सो उसने गाव्रीला को अपनी बांहों का सहारा दिया, उसे उठा लिया और अपने घुटनों से धीरे-धीरे धकेलता हुआ उसे शराबख़ाने के आंगन में बाहर ले गया। वहां पहुंचकर लकड़ियों के एक ढेर के साये में उसने उसे लेटा दिया और ख़ुद उसके पास बैठकर पाइप पीने लगा। गाव्रीला कुछ देर छटपटाया और दो-चार बार गुर्रा-कांखकर सो गया।

२

"तैयार हो?" चेल्काश ने फुसफुसाकर गाव्रीला से कहा जो डांड़ों से उलझ रहा था।

"अभी। डांड़ों का कुन्दा ढीला है। डांड़ से उसे ठोक लूं?"

"नहीं, आवाज़ बिल्कुल नहीं होनी चाहिए! उसे हाथों से दबा दो। वह अपनी जगह पर बैठ जाएगा।"

दोनों के दोनों, किसी तरह की आहट किये बिना एक नाव के साथ जूझ रहे थे जो ओक वृक्ष के तनों से लदे बजरों और खजूर, चन्दन की लकड़ी तथा सरो के मोटे लट्ठों से लदे तुर्की मस्तूली जहाज़ों के समूचे बेड़े में से एक के साथ बंधी थी।

रात अंधेरी थी। छितरे-फटे बादलों के भारी झुंड आकाश में तैर रहे थे। समुद्र शांत, काला और तेल की भांति गाढ़ा था। उसमें से नम, लोनी गंध निकल रही थी। उसकी लहरें तट और जहाज़ों के बाजुओं से टकराकर हल्की छपछप की आवाज़ें कर रही थीं और चेल्काश की नाव को धीरे-धीरे डोला रही थीं। तट से कुछ दूर आकाश की पृष्ठभूमि में जहाज़ों की काली रेखाएं नज़र आ रही थीं और उनके मस्तूलों की चोटियां रंग-बिरंगी रोशनियों से चमक रही थीं। सागर में इन रोशनियों का अक्स पड़ रहा था। पानी की काली मख़मली सतह पर रोशनियों के अनगिनत पीले धब्बे कांपते और थिरकते हुए बड़े सुन्दर मालूम होते थे। समुद्र दिन भर काम करने के बाद थके हुए मजदूर की भांति गहरी नींद सो रहा था।

"चलो," डांड़ को पानी में डालते हुए गाव्रीला ने कहा।

"चल दिये," चेल्काश ने कहा और चालक-पहिये को ज़ोर से घुमाता हुआ नाव को बजरों के बीच में से निकाला और वह तेज़ी से तैर चली। जब डांड़ पानी से टकराते, तो लहरों पर फ़ास्फ़ोरसी नीली चमक की एक गोट-सी चढ़ जाती। नाव आगे निकल जाती और यह गोट, चमकदार फ़ीते की भांति, लहराती हुई नाव का पीछा करती मालूम होती।

"तबीयत अब कैसी है? सिर दर्द तो नहीं कर रहा?" चेल्काश ने हार्दिकता से पूछा।

"बुरी तरह भन्ना रहा है और सीसे की भांति भारी हो गया है... सोचता हूं, पानी से तर कर लूं।"

"किसलिये? सिर नहीं, अपना अन्तर तर करो। उससे जल्दी ठीक हो जाओगे," चेल्काश ने बोतल बढ़ाते हुए कहा।

"भाई वाह, परमात्मा भला करे!"

गटगट की आवाज़ आई।

"ऐ, बस करो!" चेल्काश ने उसे रोका।

नाव फिर आगे बढ़ चली – अन्य जहाजों के बीच से, बिना शब्द किए और तेजी से अपना रास्ता बनाती हुई... अनायास ही, सब को पीछे छोड़, वह आगे निकल आई। सागर, शक्तिशाली और सीमाहीन, दूर काले-नीले क्षितिज तक उसके सामने फैला था। वहां, क्षितिज पर, बादलों के पहाड़ के पहाड़ लहरों की भांति उठ और बढ़ रहे थे – भूरे और बैंगनी, जिनके किनारों पर रुई के गालों जैसी पीले रंग की गोट लगी हुई थी, और जो समुद्र के पानी के हरे रंग और सीसे जैसे रंग की भारी और डरावनी परछाइयां डाल रहे थे। बादल धीरे-धीरे आकाश में बढ़ रहे थे। कभी वे एक दूसरे में विलीन हो जाते, कभी होड़ करते हुए दौड़ने लगते, उनके रूप और रंग का विलय हो जाता, एक दूसरे को हड़प जाते और फिर से नये रूपों में प्रकट होते – धीर-गम्भीर और बड़ी भव्यता के साथ... इन प्राणहीन पिंडों की धीमी गति एक अजीब से आतंक का संचार करती। ऐसा मालूम होता जैसे वे अनगिनत संख्या में वहां मौजूद हों और इसी प्रकार अनन्त काल तक उठकर आकाश में रेंगते रहेंगे, इस दुर्भावना से प्रेरित होकर कि आकाश अपनी असंख्य सुनहरी आंखों, जीवित और स्वप्निल ज्योति से टिमटिमाते हुए बहुरंगी सितारों के साथ, जो लोगों के हृदयों में ऊंची आकांक्षाओं का संचार करते हैं और जिनके लिये उनकी स्वच्छ चमक ही एकमात्र बहुमूल्य सम्बल होती है, कभी भी ऊंघते सागर के ऊपर न चमक पाये।

"सागर अद्भुत है न?" चेल्काश ने पूछा।

"है तो, लेकिन मेरे हृदय में यह भय का संचार करता है," अपने डांड़ों को पूरा जोर लगाकर और समगति से चलाते हुए गाव्रीला ने कहा। जब डांड़ पानी से टकराते तो उसमें एक हल्की-सी गूंज, छनक और छपछपाहट पैदा होती और नीली फ़ास्फ़ोरसी चमक की एक गोट भी उसमें लहराने लगती।

"डर लगता है? तुम भी निरे बुद्धू हो!" चेल्काश मज़ाकिया ढंग से बुदबुदाया।

वह – एक चोर – समुद्र को प्यार करता था। उसका प्राणवान संवेदनशील स्वभाव, जो हमेशा नये अनुभवों के लिये अकुलाता रहता था, अंधकार में डूबे उसके विस्तारों को – उन्मुक्त, सशक्त और सीमाहीन विस्तारों को –

देखते कभी नहीं अघाता था। तो जिस चीज़ को वह इतना प्यार करता था, उसके सौन्दर्य के प्रति उदासीन उछाह का यह प्रदर्शन उसे अच्छा नहीं मालूम हुआ। नाव के पिछले भाग में बैठा वह चालक-पहिये से पानी को काट रहा था और शान्त भाव से एकटक सामने की ओर देख रहा था। उसका हृदय इस समय एक ही इच्छा से भरा था कि सागर की इस मखमली सतह पर अनन्त काल तक वह इसी प्रकार बढ़ता रहे।

सागर उसमें सदा हार्दिकता की एक प्रशस्त भावना का संचार करता था। यह भावना उसके रोम-रोम में समा जाती और आए दिन के जीवन की कीच को धोकर साफ़ कर देती। उसे यह अच्छा लगता और यहां—लहरों के बीच और खुली हवा में, जहां जीवन सम्बन्धी विचारों का तीखापन तिरोहित हो जाता और ख़ुद जीवन का भी कोई मूल्य न रहता—वह अपने आपको एक अच्छे आदमी के रूप में देखना पसन्द करता था। रात को सोते हुए सागर की सांसों की कोमल और निर्लिप्त ध्वनि पानी की सतह पर धीमे-धीमे प्रवाहित होती, मानव के हृदय में शान्ति का संचार करती, उसकी कुत्सित भावनाओं को दूर भगाती और महान सपनों को जन्म देती है...

"मछली पकड़ने का सामान कहां है?" अचानक गाव्रीला ने पूछा और व्यग्र भाव से नाव के कोनों-कोनों की टोह लेने लगा।

चेल्काश यह सुनकर चौंका।

"सामान? यहां मेरे पास है, नाव के पिछले हिस्से में।"

इस लड़के के सामने झूठ बोलने से उसे दुःख हुआ और साथ ही उसके सवाल से अपने विचारों तथा भावनाओं का ऐसे अचानक भंग हो जाना उसे अच्छा नहीं लगा। वह झुंझला उठा। अपने गले और हृदय में उसने फिर एक जलन का अनुभव किया और कठोर तथा कटु आवाज़ में गाव्रीला से कहा—

"सुनो, जहां तुम हो वहीं जमकर बैठे रहो और अपने काम से काम रखो। डांड़ चलाने के लिये मैंने तुम्हें रखा है, सो चलाए जाओ। अगर बक-बक करोगे, तो बुरा नतीजा होगा। समझ गए न?"

क्षण भर के लिए नाव डोली और रुक गई। डांड़ पानी में घिसटने और भंवर पैदा करने लगे। गाव्रीला अपनी जगह पर बेचैनी से हिला-डुला।

"डांड़ चलाओ!"

एक गंदी गाली से हवा कांप उठी। गाव्रीला ने डांड़ों को उठाया और नाव, मानो डरकर उछली और झटके खाती तथा पानी को छलछलाती तेज़ी से बढ़ चली।

"ढंग से!"

चालक-पहिया थामे हुए ही चेल्काश कुछ उठा और उसने अपनी निष्ठुर दृष्टि गाव्रीला के सफ़ेद पड़ गये चेहरे पर जमा दी। आगे की ओर झुका वह इस तरह खड़ा था जैसे बिल्ली अभी झपट्टा मारनेवाली हो। उसके दांत पीसने तथा भयभीत गाव्रीला के दांतों के बजने की आवाज़ सुनाई दे रही थी।

"ऐ, वहां कौन चिल्ला रहा है?" समुद्र के विस्तार में से किसी की कड़ी आवाज़ सुनाई दी।

"डांड़ चला, हरामी पिल्ले! चला डांड़ कम्बख़्त! एक, दो! ख़बरदार, जो ज़रा भी आवाज़ की तो! बोटी-बोटी नोच लूंगा!" चेल्काश फुंकार उठा।

"मां मरियम... हे भगवान!" गाव्रीला बुदबुदाया। वह भय और थकान से कांप रहा था।

नाव घूम गई और बन्दरगाह की ओर वापिस लौट चली जहां जहाज़ों की रंग-बिरंगी रोशनियों की बंदनवार सी झलक रही थीं और उनके मस्तूल स्पष्ट दिखाई दे रहे थे।

"ऐ, उधर कौन चिल्ला रहा है?" वह आवाज़ फिर सुनाई दी। लेकिन अब वह पहले से अधिक दूर थी। चेल्काश का ढारस बंधा।

"तुम ख़ुद ही चिल्ला रहे हो!" उसने पलटकर जवाब दिया। फिर वह गाव्रीला की ओर मुड़ा, जो अब भी मां मरियम को याद कर रहा था।

"तुम भाग्यवान हो, लड़के! अगर उन शैतानों ने पीछा किया होता तो तुम्हारा पत्ता कट जाता। मैं तुम्हें समुद्र में झोंककर मछलियों का कलेवा बना देता!"

अब, जब चेल्काश शान्ति से और कुछ नर्मी से भी बात कर रहा था गाव्रीला ने कांपते हुए उससे विनती की–

"मुझे जाने दो, भगवान के लिये मुझे जाने दो! यहीं कहीं उतार दो। ओह-ओह-ओह, मैं बुरा फंसा! भगवान के लिये मुझे जाने दो! तुम

मुझसे क्या चाहते हो? मैं यह काम नहीं कर सकता! मैं कभी ऐसे काम में शामिल नहीं हुआ... यह पहला ही मौक़ा है... हे भगवान, मैं तो सदा के लिये मारा जाऊंगा! तुमने मेरे साथ ऐसा क्यों किया? यह गुनाह है! आत्मा का ख़ून कर रहे हो। ओह, यह भी कोई धंधा है?"

"धंधा?" चेल्काश ने पूछा, "कैसा धंधा?"

लड़के को इतना आतंकित देख उसे मजा आया। वह उसके बारे में सोचता हुआ रस लेने लगा और यह कल्पना करने में भी उसे कुछ कम आनन्द नहीं मिला कि वह ख़ुद किस हद तक एक भयानक जीव बन सकता है।

"यह बुरा धंधा है, भाई, बुरा धंधा... मुझे जाने दो, ख़ुदा के लिये मेरी जान बख़्शो! तुम्हें भला मेरी क्या जरूरत हो सकती है? सुनो, मुझपर एहसान करो, भले आदमी..."

"चुप रहो! अगर मुझे तुम्हारी जरूरत न होती तो अपने साथ यहां लाता ही क्यों, समझे? बस, अब अपनी जबान बन्द रखो!"

"हे भगवान!" गाव्रीला बुदबुदाया।

"ऐ, यह बुदबुदाना बन्द करो!" चेल्काश ने उसे बीच में ही काट दिया।

लेकिन गाव्रीला में अब इतनी सामर्थ्य नहीं थी कि अपने आपको क़ाबू में रख सके। वह दबी आवाज में भुनभुनाता, खांसता-खंखारता, ऐंठता और बल खाता हुआ भी निराशा से उत्पन्न शक्ति से डांड़ चलाता रहा। नाव तीर की भांति उड़ चली। वे अब जहाजों के काले आकारों के बीच पहुंच गए। पानी की संकरी गलियों में से मुड़ती और बल खाती हुई उनकी नाव जहाजों के बीच खो गई।

"ऐ, कान खोलकर सुन लो! अगर तुमसे सवाल पूछे जाएं तो अपना मुंह बन्द रखना। इसी में तुम्हारी जान की ख़ैर है, समझे?"

"हे भगवान!" गाव्रीला ने उसांस छोड़ी और फिर तीखे स्वर में कहा—"मेरी क़िस्मत फूट गई!"

"फिर बुदबुदाने लगे?" चेल्काश ने फुंकार छोड़ी।

इस फुंकार ने गाव्रीला की सुध-बुध छीन ली। आसन्न मुसीबत की भयानक आशंका से वह सुन्न हो गया। उसने यंत्रवत् डांड़ पानी में डाले, अपने बदन को पीछे की ओर हटाते हुए डांड़ों को खींचा, उन्हें उठाया, फिर पानी में डाला और टकटकी बांधकर अपनी बक्कल की चप्पलों को देखता रहा।

लहरों की अलसायी छप-छप भय और आतंक का संचार कर रही थी। वे घाट-क्षेत्र में पहुंच गए थे... पत्थर की दीवार के उधर से आदमियों के बोलने की, गाने और सीटी बजाने की और लहरों के टकराने-छितराने की आवाजें आ रही थीं।

"रुको," चेल्काश फुसफुसाया, "डांड़ों को छोड़ दो! दीवार के सहारे हाथों से धकेलो। आवाज न करो, कम्बख़्त!"

गाव्रीला नाव को काई जमी दीवार के साथ-साथ ले चला। नाव बिना आवाज किए फिसल रही थी।

"ठहरो! डांड़ मुझे दे दो। इधर दो! तुम्हारा पासपोर्ट कहां है? थैले में? थैला भी दे दो! जल्दी! यह इसलिये कि कहीं तुम तिड़ी न हो जाओ... अब कोई डर नहीं। डांड़ों के बिना तुम भाग सकते हो, लेकिन पासपोर्ट के बिना नहीं। बस, यहीं रहना। और देखो, अगर कुछ भी जबान से उगला तो बच नहीं पाओगे—समुद्र तल से भी मैं तुम्हें पकड़ लाऊंगा।"

फिर किसी चीज पर हाथ टिकाकर वह दीवार पर चढ़ा और उसके दूसरी ओर ग़ायब हो गया।

गाव्रीला चौंका... पलक झपकते में ही यह सब हो गया। उसने महसूस किया कि वह घबराहट और भय, जो वह उस मूंछों वाले दुबले-पतले चोर की उपस्थिति में अनुभव कर रहा था, दूर हो रहा है... अब भागना चाहिए! उसने खुलकर सांस ली और अपने अग़ल-बग़ल देखा। बाईं ओर एक मस्तूलहीन जहाज की काली काया उठती-उभरती जा रही थी। ऐसा मालूम होता था जैसे वह कोई भीमाकार ताबूत हो—सूना और परित्यक्त... हर बार, जब भी लहरें उससे टकरातीं, एक खोखली-सी आवाज उसमें से निकलती और लगता, जैसे वह कराह रहा हो। दाहिनी ओर बांध की काई जमी दीवार थी जो एक ठंडे, भारी-भरकम अजगर की भांति सागर की सतह पर फैली थी। उसके पीछे अन्य काले ढांचे तैर रहे थे और आगे की ओर, दीवार और उस ताबूत के बीच खुली जगह में से, सूने सागर की झलक मिल रही थी। ऊपर काले बादल घिरे थे। बोझिल और भीमाकार, वे आकाश में धीमे-धीमे बढ़ रहे थे, अंधकार में भय और आतंक का संचार करते हुए। ऐसा मालूम होता था जैसे वे अपने भारी बोझ से मानव को कुचल डालेंगे। हर चीज भयानक, काली और डरावनी मालूम

होती थी। गाव्रीला भय से कांप उठा। और यह भय चेल्काश के भय से कहीं ज्यादा भयानक था। उसने उसके सीने को जकड़ लिया और इतना दबोचा कि उसकी समूची प्रतिरोध-शक्ति निचोड़ ली और वह जहां का तहां जमा-सा रह गया...

हर चीज निस्तब्धता में डूबी थी। समुद्र की उसांसों के सिवा और कोई आवाज सुनाई नहीं पड़ रही थी। बादल अब भी धीमे-धीमे और उदासी में डूबे-से रेंग रहे थे और समुद्र से इतनी बड़ी संख्या में उठ रहे थे कि खुद आकाश भी एक समुद्र की भांति मालूम होता था—मानो एक उमड़ते-घुमड़ते सागर को नीचे के चिकने और सोते हुए सागर के ऊपर उलटकर रख दिया गया हो। बादल लहरों की भांति मालूम होते थे जिनकी झागदार शिराएं नीचे धरती की ओर दौड़ रही थीं, फिर वे उन गह्वरों जैसे लगते थे, जिनमें से हवा इन लहरों को खींच लाई थी और वे प्रतीत होते थे उन नवजात लहरों जैसे, जिन्होंने अभी उबलना-उफनना और अत्यन्त विक्षुब्ध होकर हरा झाग उगलना शुरू नहीं किया था।

इस विषादपूर्ण निस्तब्धता और सौन्दर्य से गाव्रीला इतना अभिभूत और आतंकित हो उठा कि अपने मालिक के वापिस लौटने की चिन्ता ने उसे व्यग्र बना दिया। अगर वह नहीं लौटा तो? समय के पांव में जैसे बेड़ियां पड़ गई थीं, वह बहुत ही धीरे-धीरे घिसट रहा था, आकाश में बादलों की गति से भी अधिक धीरे... प्रतीक्षा की घड़ियों के साथ-साथ निस्तब्धता भी अधिक आतंकपूर्ण होती जा रही थी... आखिर बांध की दीवार के दूसरी ओर से छपछपाने, सरसराने और किसी के फुसफुसाने की आवाज सुनाई दी। गाव्रीला को लगा जैसे अगले क्षण उसकी जान ही निकल जायेगी...

"अरे, क्या ऊंघ रहे हो? यह लो! सावधानी से!" चेल्काश की दबी हुई आवाज सुनाई दी।

दीवार के ऊपर से कोई भारी और चौरस-सी चीज नीचे लटक आई। गाव्रीला ने उसे नाव में रख लिया। इसके बाद वैसा ही एक दूसरा बंडल आया। फिर चेल्काश की दुबली-पतली आकृति नीचे उतर आई। डांड़ दिखाई दिये और गाव्रीला का थैला उसके पांवों के पास जा गिरा। और चेल्काश, हांफता हुआ, नाव के पिछले हिस्से में अपनी जगह पर जा बैठा।

गाव्रीला के चेहरे पर प्रसन्न किन्तु आशंकित मुस्कान दौड़ गई।

"थक गए?" उसने पूछा।

"किसी हद तक। हां तो, अब अपने डांड़ों को संभालो! पूरी ताक़त से ले चलो! अच्छी मजदूरी पाओगे। आधा काम तो पूरा हो गया। अब इतना और करना है कि उन हरामख़ोरों को धता बताते हुए तेजी से निकल चलो – फिर अपना हिस्सा लेकर अपनी माश्का के साथ मौज करना। तुम्हारी माश्का तो है न?"

"न-हीं!"

गाव्रीला अपनी पूरी शक्ति से नाव खेने में जुटा था। उसके फेफड़े धौंकनी की भांति उठ-गिर रहे थे और उसकी बांहें इस्पात का स्प्रिंग बनी हुई थीं। पानी नाव के नीचे सनसना रहा था और वह नीला और चमकदार फ़ीता अब अधिक चौड़ा बन कर नाव के पीछे लहरा रहा था। गाव्रीला पसीने से तर था, लेकिन उसने डांड़ों को ढीला नहीं पड़ने दिया। उस रात को भारी भय उसे दो बार जकड़ चुका था और अब तीसरी बार जकड़े जाने की उसकी ज़रा भी इच्छा नहीं थी। उसकी एक ही इच्छा थी – जैसे भी हो, इस जंजाल से जल्दी से जल्दी छुटकारा मिले, काम को ख़त्म कर वह धरती पर पांव रखे और जीते जी तथा जेल की हवा खाए बिना इस आदमी के चंगुल से छूटकर निकल भागे। उसने निश्चय किया कि उसके सामने अब वह अपना मुंह नहीं खोलेगा, किसी भी रूप में उसका विरोध नहीं करेगा, जो कुछ भी आदेश वह देगा, उसे मानेगा, और सब के बाद अगर वह सही-सलामत यहां से निकल सका तो अगले ही दिन चमत्कारों की खान संत निकोलस का जाप करेगा। वह इतना अभिभूत हो उठा कि जाप के शब्द उसके होंठों पर थिरकने लगे। लेकिन उसने उन्हें प्रकट नहीं होने दिया और इंजन की भांति हांफते हुए कन-खियों से चेल्काश की ओर देखा।

लम्बा और दुबला-पतला चेल्काश आगे को ओर झुका हुआ बैठा था और कहीं उड़ने के लिए तैयार पक्षी की भांति लग रहा था। उसकी बाज जैसी आंखें सामने फैले अंधकार को बींध रही थीं, उसकी हुकदार नाक वायु की गंध ले रही थी। उसका एक हाथ चालक चक्र को कसकर थामे था और दूसरे से वह मूंछों को ऐंठ रहा था जो उस समय फरफराने लगती थीं, जब मुस्कान में उसके पतले होंठ टेढ़े होते थे। चेल्काश प्रसन्न था –

अपनी इस मुहिम से, खुद अपने आप और इस युवक से, जिसे उसने आतंकित किया था और अपना गुलाम बना लिया था। जब चेल्काश ने देखा कि गाव्रीला जी-जान से डांड़ चला रहा है, उसका हृदय उसके लिये तरस से भर गया। उसका मन हुआ कि उसे बढ़ावा देने के लिए कुछ कहे।

"ऐ," कुछ मुस्कराते हुए उसने धीमे से कहा, "तुम बहुत डर गए थे क्या?"

"कोई बात नहीं," गाव्रीला ने उसांस छोड़ी और कांखा।

"अब घबराने की ज़रूरत नहीं। ख़तरा पार हो गया। केवल एक स्थल और पार करना है। कुछ सुस्ता लो..."

गाव्रीला ने चुपचाप डांड़ चलाना बन्द कर दिया, पसीने से तर चेहरे को आस्तीन से पोंछा और डांड़ों को फिर से पानी में डाल दिया।

"धीरे-धीरे चलाओ। इस तरह कि पानी आवाज़ न करे। एक फाटक है जिसे पार करना है। धीमे, धीमे... यहां बहुत सम्भलके... यहां वे गोली भी चला देते हैं। खोपड़ी बिंध जाती है और आदमी आह भी नहीं कर पाता।"

नाव अब पानी पर क़रीब-क़रीब फिसल रही थी। केवल डांड़ों से चूनेवाली नीली बूंदों से सागर में पैदा होनेवाली नीली जगमग से ही उसकी गति का आभास होता था। रात का अंधेरा और भी अधिक घना और सन्नाटा और भी अधिक गहरा होता जा रहा था। आकाश अब उमड़ते-घुमड़ते सागर की भांति नहीं मालूम होता था, बादलों ने फैलकर एक भारी वितान का रूप धारण कर लिया था जो पानी के ऊपर बहुत नीचे और एकदम थिर लटका हुआ था। समुद्र और अधिक थिर तथा काला हो गया था। उसकी गर्म, लोनी गंध और भी अधिक तेज़ थी और अब वह उतना सीमाहीन नहीं मालूम होता था।

"काश कि बारिश होने लगे!" चेल्काश बुदबुदाया, "तब हम ऐसे निकल जाएंगे जैसे पर्दे के पीछे से।"

नाव के दाईं और बाईं ओर पानी की काली सतह पर भारी-भरकम आकार उभर आये। ये बजरे थे—निश्चल, डरावने और काले। उनमें से एक पर एक रोशनी हरकत करती दिखाई दे रही थी—कोई लालटेन लिये उसपर चल रहा था। इन बजरों के पहलुओं को सहलाता हुआ सागर मानो उनसे धीरे-धीरे कोई विनती करता प्रतीत होता था और वे जैसे कि

रूखी तथा खोखली आवाज़ों में ऐसे जवाब देते लगते थे, मानो सागर की विनती उन्हें मंज़ूर न हो।

"गार्ड!" मुश्किल से सुनाई पड़नेवाली आवाज़ में चेल्काश ने कहा।

जब से उसने गाव्रीला से नाव को धीरे-धीरे खेने के लिए कहा था, तभी से गाव्रीला के हृदय में फिर से आशंकापूर्ण तनाव पैदा हो गया था। वह अंधकार में आगे को झुका। उसे ऐसा अनुभव हुआ मानो वह फैल रहा है—उसकी तनी हुई हड्डियां और नसें दर्द से खिंची जा रही थीं, एक ही ख़्याल से जकड़ा हुआ उसका सिर दर्द कर रहा था, उसकी पीठ की चमड़ी तड़क रही थी और उसके पांवों में छोटी-छोटी, तेज़ तथा ठंडी सुइयां-सी चुभ रही थीं। उसकी आंखें, अंधेरे में ताकते-ताकते, ऐसे तन गई थीं कि लगता था जैसे वे फट जाएंगी। उसे आशंका थी कि किसी भी क्षण, कोई अंधेरे में से प्रकट होगा और चिल्लाकर कहेगा—"ठहरो, चोरो!"

चेल्काश के मुंह से "गार्ड" शब्द सुनकर गाव्रीला कांप उठा। उसके मस्तिष्क में एक तीखा और भस्म करता विचार कौंध गया और उसने उसके तने हुए स्नायुओं को झनझना दिया। उसने चाहा कि चिल्लाये, किसी को मदद के लिये पुकारे। उसने अपना मुंह तक खोल लिया, छाती फुलायी और उसमें बहुत-सी हवा भर ली। मगर फिर अचानक ही भय से आतंकित होकर, जिसने चाबुक की तरह उस पर चोट की, उसने अपनी आंखें बन्द कर लीं और अपनी जगह से लुढ़ककर नीचे जा गिरा।

...दूर क्षितिज तक फैले समुद्र के उस काले अंधकार में से प्रकाश की एक नीली तलवार प्रकट हुई। वह ऊपर उठी और रात के अंधकार को चीरकर आकाश के बादलों को काटती हुई एक चौड़े नीले फ़ीते की भांति समुद्र के वक्ष पर आकर टिक गई। और उसमें और प्रकाश के उस फीते में अब तक अदृश्य जहाज़ अंधकार में से निकल आये—काले और मूक, रात के अंधेरे की धुंधली चादर ओढ़े हुए। ऐसा मालूम होता था जैसे ये जहाज़ चिरकाल से समुद्र की अतल गहराइयों में बन्द थे, जहां तूफ़ान की शक्तियों ने उन्हें पटक दिया था, और अब—समुद्र में से निकली प्रकाश की इस तलवार के इशारे पर—वे उस क़ैद से निकाल कर बाहर लाए गए हैं ताकि वे आकाश को और पानी की सतह से ऊपर की हर चीज़ को देख सकें... उनके मस्तूलों से लिपटी रस्सियां उन समुद्री लताओं-सी मालूम होती थीं जिन्होंने समुद्र की अतल गहराइयों में भारी-भरकम काले जहाज़ों को अपने जाल में जकड़

रखा था और जो अब उनके साथ ही साथ लिपटी हुई ऊपर उभर आई थीं। इसके बाद वह नीली तलवार, भयावह और चमचमाती, फिर समुद्र के वक्ष पर से उठी, रात के अंधकार को फिर उसने चीरा और फिर समुद्र के वक्ष पर आकर टिक गई—इस बार दूसरी दिशा में। अब तक अदृश्य जहाजों के आकार फिर उसकी रोशनी में उजागर हो उठे।

चेल्काश की नाव रुक गई और पानी की सतह पर डोलने लगी, मानो वह सोच रही हो कि अब क्या करे। गाव्रीला नाव के तले में पड़ा था। अपना चेहरा उसने हाथों से ढक रखा था और चेल्काश उसे ठोकर मारता हुआ बेहद गुस्से से, मगर धीमी आवाज में कह रहा था—

"वह चुंगीवालों का क्रूज़र है, बेवकूफ़! और वह उसकी सर्चलाइट है। उठो, उल्लू! किसी क्षण हमपर भी उनकी रोशनी पड़ सकती है! तुम मुझे, और साथ ही अपने आपको भी, बरबाद करके छोड़ोगे! उठो!"

कमर पर एक ख़ासी करारी ठोकर लगने से गाव्रीला सकपकाकर खड़ा हो गया। उसकी आंखें डर के मारे अब भी बन्द थीं। वह बेंच पर बैठ गया। टटोलकर उसने डांड़ों को पकड़ा और नाव को खेने लगा।

"धीमे! जान निकाल लूंगा! धीमे! तुम पर शैतान की मार, घन-चक्कर! आख़िर तुम्हारी जान क्यों निकल गयी है? सूअर का बच्चा! क्या कभी लालटेन नहीं देखी? धीरे-धीरे डांड़ चला, कम्बख़्त! वे चोरी से माल लानेवालों की खोज में हैं। हमें नहीं पकड़ सकते—वे बहुत दूर हैं। डरो नहीं, हमें नहीं पकड़ सकते। हम अब..." विजय के भाव से चेल्काश ने इधर-उधर देखा, "ख़तरे से बाहर हैं! छी... उड़नछू! बहुत क़िस्मत वाले हो तुम, मिट्टी के माधो!"

गाव्रीला चुपचाप नाव खेता रहा और हांफता हुआ प्रकाश की उस तलवार की ओर कनखियों से देखता रहा, जो बराबर उठ और गिर रही थी। चेल्काश ने कहा था कि यह एक लालटेन मात्र है, लेकिन उसे विश्वास नहीं हुआ। यह सर्द नीली रोशनी, जो अंधेरे को चीर डालती थी और समुद्र को रुपहली आभा से जगमगा देती थी, कुछ रहस्यमयी थी और गाव्रीला का हृदय एक बार फिर कचोटते भय से जकड़ गया। वह यंत्रवत् डांड़ चला रहा था और उसकी एक-एक रग तनी हुई थी इस आशंका से कि कहीं ऊपर से कोई न कोई वज्रपात होकर रहेगा। अब वह कुछ भी नहीं चाहता था। वह एकदम रीता और भावनाशून्य हो गया था।

इस रात की उत्तेजना ने उसमें जो कुछ भी मानवीय था, वह सब निचोड़ लिया था।

लेकिन चेल्काश प्रसन्न था। उसके स्नायु, जो ऐसे तनावों के अभ्यस्त थे, शान्त हो चुके थे। उसकी मूंछें ख़ुशी से थिरक रही थीं और उसकी आंखें चमक रही थीं। वह बहुत मज़े में था, दांतों के भीतर से सीटी बजा रहा था, समुद्र की नम हवा में खुलकर सांस ले रहा था, चारों ओर नज़र दौड़ा रहा था और जब गाव्रीला के चेहरे पर उसकी नज़र टिकती, तो वह सहृदयता से मुस्करा देता।

हवा बहने लगी। समुद्र को उसने जगा दिया और छोटी-छोटी लहरियां उसकी सतह पर नाचने लगीं। बादल अधिक पतले और पारदर्शी हो गये, लेकिन आकाश अब भी उनसे ढका हुआ था। हवा के हल्के झोंके, इधर से उधर, सागर के वक्ष पर किलोलें कर रहे थे। लेकिन बादल निश्चल घिरे थे—जैसे नीरस और ऊब भरे विचारों में गहरे डूबे हुए हों।

"अरे, भाई, अब तो होश में आओ! तुम तो ऐसे बैठे हो जैसे किसी ने तुम्हारी रूह ही निकाल ली हो और हड्डियों का ढांचा ही बाक़ी रह गया हो। अब तो क़िस्सा ख़त्म हो चुका है। सुना!"

मानवीय आवाज़ सुनकर—भले ही वह चेल्काश की हो—गाव्रीला को ख़ुशी हुई।

"मैं सुन रहा हूं," वह गुनगुनाया।

"बड़े कमज़ोर दिल हो! जैसे कुछ दम ही न हो। लो, तुम मेरी जगह बैठो और मैं डांड़ चलाऊंगा। शायद थक गए हो!"

गाव्रीला यंत्रवत् उठा और जगह की अदला-बदली कर ली। चेल्काश ने जगह बदलते हुए लड़के पर नज़र डाली और यह देखा कि वह कांपती हुई टांगों पर लड़खड़ा रहा है, तो उसे उसपर और भी अधिक तरस आया। उसने उसके कंधे को थपथपाते हुए कहा—

"अरे, ऐसे डरो नहीं! तुम्हें अच्छा इनाम मिलेगा। पच्चीस रूबल पाना चाहोगे?"

"मुझे कुछ नहीं चाहिये। बस, तट पर पहुंच जाऊं..."

चेल्काश ने हाथ झटका, थूका और वह नाव को खेने लगा, अपनी लम्बी बांहों से डांड़ों को ख़ूब पीछे तक खींचते हुए।

समुद्र अब पूर्णतया जाग गया था। वह छोटी-छोटी लहरियां बनाने, झाग की गोटों से उन्हें सजाने, उन्हें एक दूसरी के पीछे दौड़ाने और आपस में टकराने का खेल खेल रहा था। झाग उसांसें भरता और सिसकारियां लेता हुआ घुल जाता था। समूचे वातावरण में संगीतमय ध्वनियां गूंज रही थीं। ऐसा प्रतीत होता था मानो अंधकार सजीव हो उठा हो।

"हां तो अब," चेल्काश ने कहा, "तुम अपने गांव लौट जाओगे, शादी करके अपना घर बनाओगे, जमीन जोतोगे, अनाज उपजाओगे, तुम्हारी बीवी बच्चे पैदा करेगी, रोजी-रोटी की फ़िक्र में घुलोगे और जीवन भर ऐसे ही खटते रहोगे... बहुत मजा मिलेगा क्या इसमें?"

"मज़े की बात ही क्या हो सकती है!" गाव्रीला ने धीमी आवाज में और कुछ कांपते हुए कहा।

हवा ने बादलों को छितराकर उनमें जहां-तहां दरारें डाल दी थीं। उनके बीच से नीले आकाश के टुकड़े—जिनमें एक या दो तारे जड़े थे—नजर आ रहे थे। तारे, प्रतिबिम्बित होकर, लहरों के साथ आंख-मिचौनी सी खेल रहे थे—कभी वे छिप जाते, कभी प्रकट होकर फिर झिलमिलाने लगते।

"नाव को दाहिनी ओर करते जाओ," चेल्काश ने कहा, "समझ लो कि ठिकाने पर पहुंच ही गये। काम पूरा हुआ। बहुत बड़ा काम। जरा सोचो तो, एक ही रात में पांच सौ रूबल!"

"पांच सौ?" गाव्रीला ने आंखें फाड़ते हुए दोहराया। फिर, इन शब्दों से सहमकर, नाव में पड़ी गांठों को हल्की-सी ठोकर मारकर पूछा, "इनमें क्या चीज है?"

"इनमें बहुत क़ीमती चीज है। अगर ठीक दामों पर बेची जाये, तो हजार से भी अधिक पूंजी हाथ आ जाए। लेकिन मुझे इसकी कुछ परवाह नहीं! है न बढ़िया बात?"

"शायद!" अविश्वास के साथ गाव्रीला ने कहा, "अगर मुझे भी..." उसके हृदय में एक टीस-सी उठी और उसे अपने गांव, मनहूस खेत, अपनी मां का और अपने से दूर उन सभी सगे-सम्बन्धियों तथा चीजों का ख़याल हो आया जिनकी ख़ातिर वह घर छोड़कर काम की खोज में निकल पड़ा था और जिनकी ख़ातिर उस रात की यंत्रणाओं को उसने सहा था। स्मृतियों की एक बाढ़-सी आई और उसमें वह बह चला—पहाड़ी के ढलुवान

पर बसा उसका छोटा-सा गांव, नीचे तलहटी में, भोज, बेंत, रोवन और रसभरियों के झुरमुटों में बहती हुई नदी... "ओह, कितना अच्छा होता!" उसने एक उदास सांस भरते हुए कहा।

"अरे, हां! तुम तो फ़ौरन घर का टिकट कटा लोगे... वहां लड़कियां तुम पर लट्टू हो उठेंगी! जिसे चाहोगे, वही तुम्हारी हो जायेगी। तुम अपने लिये एक नया घर बनाओगे, लेकिन हां, इतनी पूंजी में घर बनना मुश्किल है..."

"हां, यह ठीक है। उधर लकड़ी बहुत महंगी है।"

"तो पुराने घर की ही मरम्मत कर लोगे। और घोड़ा? घोड़ा तो है, न?"

"हां, है तो, लेकिन मरियल-सा और बहुत बूढ़ा।"

"तो तुम्हें एक घोड़ा ख़रीदने की भी जरूरत होगी। एक बढ़िया घोड़ा और एक गाय... कुछ भेड़ें। मुर्गे-मुर्गियां भी, क्यों?"

"बस, बस, रहने दो! हे भगवान! मजा आ जाता जीने का!"

"हां, भाई! ख़ासा अच्छा जीवन होता तुम्हारा। मुझे भी इन चीज़ों का थोड़ा बहुत अनुभव है। कभी तो मेरा भी अपना एक घोंसला था... मेरा बाप गांव के सबसे धनी लोगों में से था..."

चेल्काश अब नाव को धीरे-धीरे खे रहा था। नाव लहरों के थपेड़े खाकर डोल रही थी जो शरारत से ठुमकती उसके पहलुओं से आ-आकर टकरा रही थीं। काली लहरों के बीच, जिनकी चंचलता अब अधिकाधिक बढ़ती जा रही थी, नाव धीरे-धीरे खिसक रही थी। दोनों, हिचकोले खाते और इधर-उधर नजर डालते हुए अपने-अपने सपनों में खोए थे। चेल्काश ने गाव्रीला को उसके गांव की याद इस ख़्याल से दिलाई थी कि इससे उसके स्नायुओं का तनाव कम हो जायेगा और वह शान्त हो जायेगा। शुरू में उसने मूंछों में मुस्कराते हुए बातें कीं, लेकिन बाद में अपने साथी से बातें करते और कृषक-जीवन के सुखों का राग अलापते हुए, जिनसे वह ख़ुद कभी का निराश हो चुका था, वह उनके बारे में एकदम भूल गया था। धीरे-धीरे ख़ुद उसकी स्मृति भी ताजा हो गई और वह उसके साथ बह चला। अनजाने में ही गांव और उसके मामलों के बारे में लड़के से पूछताछ करने के बजाय वह ख़ुद ही इस विषय का प्रतिपादन करने लगा –

"किसान-जीवन में सब से मुख्य बात है ग्राजादी! ग्रादमी ख़ुद ग्रपना मालिक होता है। उसका एक ग्रपना घर होता है, भले ही वह बहुत मामूली हो। उसके पास ग्रपनी जमीन होती है—बहुत थोड़ी ही सही, लेकिन उसकी ग्रपनी होती है! ग्रपनी जमीन का वह राजा होता है! उसका ग्रपना व्यक्तित्व होता है! सब के सम्मान का हक़दार होता है... क्यों, ठीक है न?" उसने उत्साह से पूछा।

गाव्रीला कौतुक में भरकर, उसकी ग्रोर देख रहा था ग्रौर ख़ुद भी उत्साहित हो उठा था। बात करते-करते वह यह तक भूल गया कि चेल्काश किस कुंड़े का ग्रादमी है। वह उसे ग्रब ग्रपनी ही भांति केवल एक ग्रन्य किसान के रूप में देख रहा था जो पूर्वजों की ग्रनेक पीढ़ियों के ख़ून-पसीने ग्रौर बचपन की स्मृतियों के सूत्रों से जमीन के साथ मजबूती से चिपका ग्रौर बंधा रहता है—एक ऐसा किसान, जिसने ख़ुद ग्रपनी मर्जी से जमीन ग्रौर जमीन पर किए जानेवाले श्रम से नाता तोड़ लिया था ग्रौर जो इसके लिये माक़ूल सजा भी पा चुका था।

"सच भाई, तुम्हारी बात बिल्कुल सच है! ग्रब तुम ग्रपने को ही देखो। जमीन के बिना तुम क्या हो? जमीन, भाई, मां की भांति है—उसे कोई बहुत समय तक नहीं भूल सकता।"

चेल्काश होश में ग्राया... ग्रपने सीने में उसने फिर एक जलन का ग्रनुभव किया जो उसे हमेशा उस समय परेशान करती थी जब कोई, विशेषकर वह व्यक्ति, जो उसकी दृष्टि में एकदम नगण्य हो, उसके गर्व को—दुस्साहसिक शैतान के स्वाभिमान को—चोट पहुंचाता था।

"चालू हो गये!" उसने ग़ुस्से से फुंकारते हुए कहा, "तुम मेरी बातों को सच समझ बैठे? ऐसा कुछ नहीं है!"

"तुम भी ग्रजीब ग्रादमी हो," गाव्रीला फिर से सहम उठा, "मैं क्या तुम्हारी बात कर रहा था? तुम्हारे जैसे तो ग्रौर भी बहुत-से हैं! दुःख के मारों से दुनिया ग्रटी पड़ी है! न घर, न बार, ग्रावारगी में डूबे!"

"यह लो, डांड़ संभालो," चेल्काश ने तड़ककर कहा ग्रौर गले तक उमड़ ग्राई गालियों की बाढ़ को वहीं का वहीं रोक लिया।

उन्होंने ग्रब फिर एक दूसरे से ग्रपनी जगह बदली ग्रौर उस समय, जब चेल्काश नाव के पिछले हिस्से में जाने के लिये गांठों को लांघ रहा

था, तो उसने गाव्रीला को एक ऐसा धक्का देने की तीव्र इच्छा अनुभव की कि वह लुढ़कता हुआ समुद्र की अतल गहराइयों में समा जाए।

वे अब मुंह बन्द किये बैठे थे। लेकिन अब गाव्रीला की चुप्पी से भी उसे गांव की सांसों की अनुभूति हो रही थी। चेल्काश अतीत के विचारों में इतना डूबा था कि उसे नाव-चालन का भी ध्यान नहीं रहा था जिसे लहरों ने फिर समुद्र की ओर मोड़ दिया। लहरों ने जैसे भांप लिया था कि यह नाव अपनी दिशा खो चुकी है और वे उसके साथ मनमाना खिलवाड़ करने में मगन थीं। वे उसे उछाल रही थीं और नन्ही नीली चिनगारियों के रूप में डांड़ों के इर्द-गिर्द उछल रही थीं। चेल्काश की आंखों के सामने अतीत का—उस सुदूर अतीत का चलचित्र घूम रहा था, जिसे ग्यारह साल की आवारगी की खाई ने वर्तमान से अलग कर दिया था। उसका अपना बचपन, उसका गांव, उसकी मां—लाल गालों और सदय भूरी आंखों वाली गदरायी नारी, और उसका पिता—लाल दाढ़ी और कठोर चेहरेवाला भीम—सभी कुछ उसकी आंखों के सामने घूम गया। वह दुल्हा बना, दुलहिन आई—काली आंखों वाली गुदगुदी अनफ़ीसा, नर्म और ख़ुशमिज़ाज, पीठ पर बालों की लम्बी चोटी लहराती हुई। फिर वह चित्र आंखों के सामने आया जब वह गार्डों की सेना का एक ख़ूबसूरत गार्ड सिपाही था। फिर पिता का चेहरा दिखाई दिया जिनके बाल अब सफ़ेद हो गए थे और कंधे श्रम के बोझ से झुक गये थे। और मां, जो अब झुर्रियों का पिंड बन गई थी और जिसकी दोहरी कमर ज़मीन छूती थी। और वह दृश्य, जब सैनिक सेवा पूरी कर वह घर लौटा और गांववालों ने उसका स्वागत किया था। उसका पिता, जो अपने इस गलमुच्छों वाले स्वस्थ और सुन्दर सैनिक बेटे को देख गर्व से फूल उठा था—सभी कुछ उसकी आंखों के सामने घूम गया... स्मृतियां, वे तो भाग्यहीनों का कोड़ा हैं, जो अतीत के पत्थरों तक को सजीव कर देती हैं और बीते जीवन के कटुतम प्यालों में भी शहद की एकाध बूंद घोल देती हैं...

चेल्काश को ऐसे मालूम होता था जैसे कि वह गांव की सुहानी हवा में तैर रहा हो। उसकी मां के कोमल शब्द, उसके किसान-पिता की धीर-गम्भीर बातें और अन्य कितनी ही आवाज़ें, जिन्हें वह भूला हुआ था, उसे सुनाई दे रही थीं। धरती की मधुर गंध से उसके नथुने फरक रहे थे। यह गंध तब उठती थी, जब बर्फ़ पिघलती थी, जब उसमें नया-नया

हल चलता था, जब वह हरी-हरी कोंपलों का बाना धारण करती थी। वह अपने आपको एकदम एकाकी, उखड़ा हुआ और जीवन के उस ढर्रे से सदा के लिये विच्छिन्न अनुभव कर रहा था जिस ढर्रे में पैदा हुआ रक्त उसकी रगों में दौड़ रहा था।

"ऐ, हमारी यह नाव किधर जा रही है?" गाव्रीला चिल्लाया।

चेल्काश चौंका। शिकारी पक्षी की भांति सतर्क दृष्टि से उसने अपने चारों ओर नज़र डाली।

"अरे, यह हम कहां निकल आये? ज़ोर से डांड़ चलाओ!"

"ख़्यालों में खो गए थे क्या?" गाव्रीला ने मुस्कराते हुए पूछा।

"थक गया..."

"अब तो इनकी बदौलत पकड़े जाने का ख़तरा नहीं?" गांठों को हल्की सी ठोकर मारते हुए गाव्रीला ने पूछा।

"नहीं... अब कोई डर नहीं। मैं अभी इन्हें ठिकाने लगाकर पैसा वसूल कर लूंगा।"

"पांच सौ?"

"इससे कम नहीं।"

"इतनी बड़ी रक़म! काश, यह मेरे हाथ लगती! वह रंग जमता कि..."

"देहाती का रंग न?"

"और नहीं तो क्या? मैं अभी..."

और गाव्रीला ने अपनी कल्पना के पंख फैलाये। चेल्काश चुपचाप बैठा रहा। उसकी मुंछें झुक आई थीं, उसका दाहिना बाज़ू लहरों ने उछल कर तर कर दिया था, उसकी आंखें धंस गयी थीं और उनमें अब कोई चमक नज़र नहीं आ रही थी। उसका समूचा शिकारीपन ग़ायब हो गया था, अपमानजनक अन्तर-मन्थन ने उसे निचोड़ लिया था जो उसकी गंदी क़मीज़ की सलवटों तक के भीतर से झांकता दिखाई पड़ रहा था।

नाव को तेज़ी से मोड़कर वह उसे एक काले आकार की दिशा में ले चला जो पानी में से उभर रहा था।

आकाश अब फिर बादलों से घिर गया था। महीन गर्म बौछार पड़ने लगी थी। बूंदें पानी से टकराती हुई टपाटप की नन्ही आह्लादपूर्ण ध्वनि कर रही थीं।

"रोको! सावधानी से!" चेल्काश ने आदेश दिया।

नाव की नाक बजरे के पहलू से टकरायी।

"सब लम्बी ताने हैं क्या, हरामी कहीं के!" चेल्काश गुर्राया और नाव के कुन्दे को जहाज के पहलू से लटकते रस्से में फंसाने लगा। "ऐ, सीढ़ी लटकाओ! यह कम्बख़्त बारिश भी जैसे इसी घड़ी का इन्तजार कर रही थी! ऐ, घोंघा बसन्तो, बहरे पत्थरो!"

"चेल्काश?" ऊपर से कोई बर्राया।

"सीढ़ी लटकाओ!"

"कालीमेरा, चेल्काश!"

"सीढ़ी लटकाओ, कम्बख़्तो!" चेल्काश गरजा।

"बाप रे, आज पारा ख़ूब चढ़ा हुआ है, यह लो!"

"गाव्रीला, ऊपर चढ़ो," चेल्काश ने अपने साथी से कहा।

कुछ क्षणों में वे डेक पर पहुंच गए जहां तीन काले दढ़ियल व्यग्रता के साथ हवालाती आवाज में बातें कर रहे थे और जहाज पर से नीचे चेल्काश की नाव में झांक रहे थे। एक चौथा आदमी, लबादे में लिपटा, बढ़कर चेल्काश के पास पहुंचा, कुछ कहे बिना उससे हाथ मिलाया और फिर गाव्रीला को सन्देह की दृष्टि से देखा।

"रुपया सुबह तैयार रखना," चेल्काश ने संक्षेप में कहा। "मैं अब एक झपकी लेना चाहता हूं। चलो, गाव्रीला, चलें। भूख लगी है क्या?"

"सोना चाहता हूं..." गाव्रीला ने कहा।

पांच ही मिनट बाद वह जोरों से खर्राटे लेने लगा और चेल्काश उसके पास बैठा किसी का बूट अपने पांव में पहनकर नापने की कोशिश करने लगा। रह-रहकर वह एक बग़ल थूकता था और किसी सोच में डूब अपने दांतों के बीच से सीटी बजाता। फिर वह भी गाव्रीला के बराबर में लेट गया, अपने हाथों को उसने सिर के नीचे लगा लिया और अपनी मूंछों को हिलाता रहा।

जहाज लहरों के साथ डोल रहा था। एक तख़्ता रोनी सी आवाज में चरचरा उठा। बारिश की बूंदें डेक की सतह से और लहरें जहाज के पहलुओं से टकरा रही थीं... सभी कुछ भारी उदासी में डूबा था और ऐसी लोरी की याद दिलाता था जिसे एक मां, अपने बच्चे के लिये सुखी जीवन की कोई आशा न देख, निराश हृदय से गाती है...

चेल्काश की बत्तीसी झलकी, उसने सिर उठाया, अगल-बग़ल एक नजर डाली, मन ही मन कुछ बुदबुदाया और फिर लेट गया... उसने अपनी टांगें चौड़ी फैला लीं, और अब वह बहुत बड़ी कैंची जैसा लगता था।

३

वह सबसे पहले जागा। चौकन्नी दृष्टि से उसने इधर-उधर देखा, तुरंत आश्वस्त हो गया, फिर उसने गाव्रीला पर नजर डाली जो मजे से खर्राटे भर रहा था। उसके स्वस्थ, सांवले, बच्चों जैसे चेहरे का रोम रोम मुस्करा रहा था। चेल्काश ने एक उसांस ली और संकरी रस्सेदार सीढ़ी से ऊपर चढ़ गया। सुरमई रंग के आकाश का एक टुकड़ा डेक के झरोखे में से झांक रहा था। उजाला फैल चला था, लेकिन दिन उदासी और ऊब में डूबा था, जैसा कि शरद में अक्सर होता है।

चेल्काश दो एक घंटे बाद लौटा। उसका चेहरा लाल दमक रहा था और मूंछें ऊपर को ऐंठी हुई थीं। पांवों में ख़ूब मजबूत ऊंचे बूट कसे थे। बदन पर चमड़े की जाकेट और बिरजिस डाटे वह एक शिकारी जैसा लगता था। उसकी यह साज-सज्जा नयी नहीं, लेकिन मजबूत थी और उसपर ख़ूब फबती थी। इससे उसका बदन भरा हुआ नजर आता था, हड्डीलापन छिप गया था और उसकी शक्ल से फ़ौजी का सा रोब टपकने लगा था।

"क्या सोते ही रहोगे, कबूतर!" एक हल्की सी ठोकर मारते हुए उसने गाव्रीला को जगाया।

गाव्रीला नींद में ही उछलकर खड़ा हो गया और भयभीत आंखों से चेल्काश की ओर देखने लगा। वह उसे पहचान नहीं सका। चेल्काश खिलखिलाकर हंसा।

"अरे वाह!" आख़िर उसके मुंह से बोल फूटा और एक प्रशस्त मुस्कान के साथ बोला, "तुम तो पूरे नवाब मालूम होते हो!"

"हमारे लिये तो यह बाएं हाथ का खेल है। लेकिन तुम बिल्कुल बुज़दिल हो! कल रात न जाने कितनी बार तुम्हारी जान निकलते निकलते बची?"

"तुम ख़ुद ही सोचो, मैंने तो पहले कभी ऐसे काम में हाथ नहीं लगाया था। हमेशा के लिये आत्मा पाप की दलदल में फंस सकती थी!"

"बोलो, फिर ऐसे काम पर चलोगे?"

"फिर? वैसे तो... बात यह है कि मिलेगा क्या?"

"मान लो, अगर तुम्हें दो चटकदार मिलें तो?"

"मतलब यह कि सौ सौ रूबल के दो नोट? बुरा नहीं है... मैं चल सकता हूं..."

"और तुम्हारी आत्मा का क्या होगा?"

"हो सकता कि उसका कुछ न बिगड़े!" बत्तीसी झलकाते हुए गाव्रीला ने कहा।

"कुछ नहीं बिगड़ेगा तुम्हारी आत्मा का और आदमी बनकर मज़े से अपना बाक़ी जीवन बिता सकोगे!"

चेल्काश प्रसन्नता से खिलखिला उठा।

"ख़ैर! अब मज़ाक़ ख़त्म। चलो, तट पर चलें..."

और वे अब फिर अपनी नाव में आ गये। चेल्काश चालक चक्र चला रहा था और गाव्रीला डांड़। सिर पर भूरे बादलों का ठोस चंदोवा तना था। समुद्र धुंधला हरा था और मौज में भरा वह नाव के साथ खेल रहा था... उसे लहरों पर उछालता जो अभी छोटी-छोटी ही थीं और उसके पहलुओं पर झागों की उजली बौछार करता। सामने, बहुत दूर, पीली रेत की एक पट्टी सी झिलमिला रही थी और पीछे, झागदार लहरों से कटा-फटा, समुद्र फैला था। पीछे की ओर ही जहाज़ भी थे; दूर बायीं ओर मस्तूलों का एक समूचा जंगल नज़र आ रहा था और इससे भी पीछे, पृष्ठभूमि में नगर की सफ़ेद इमारतें दिखाई पड़ रही थीं। वहां से, समुद्र की सतह पर तैरती हुई, गड़गड़ाहट की एक अस्पष्ट ध्वनि आ रही थी और लहरों के गरजन के साथ मिलकर बहुत ही प्रबल संगीत की रचना कर रही थी... हर चीज़ धुंध की एक पतली-सी चादर में लिपटी थी जिससे वे सभी एक दूसरी से दूर, बहुत दूर, मालूम होती थीं...

"ज़रा रात होने दो, तब देखना, यह क्या रंग लाता है," समुद्र की ओर सिर से इशारा करते हुए चेल्काश ने कहा।

"कौन, तूफ़ान?" लहरों को चीरकर पूरी शक्ति से डांड़ चलाते हुए गाव्रीला ने पूछा। वह हवा द्वारा समुद्र पर उड़ायी जानेवाली फुहारों से सिर से पांव तक भीग चुका था।

"हां!" चेल्काश ने हामी भरी।

गाव्रीला ने थाह लेने वाली नजर से उसे देखा...

"हां तो उन्होंने तुम्हें क्या दिया है?" आख़िर वह पूछ ही बैठा। चेल्काश के अन्दाज से उसने समझ लिया था कि वह अपने आप इस बारे में कुछ बताने वाला नहीं है।

"यह देखो," चेल्काश ने कहा और अपनी जेब में से कोई चीज निकालकर उसकी ओर बढ़ायी।

रंगीन नोटों की इतनी बड़ी गड्डियां देखकर गाव्रीला की आंखें चौंधिया गईं।

"और मैं समझा था कि तुम यों ही गप्प मार रहे हो! कितने हैं?"

"पांच सौ चालीस!"

"मजा आ गया!" गाव्रीला फुसफुसाया और ललचाई हुई आंखों से नोटों की गड्डियों को फिर उसकी जेब में समाते हुए देखता रहा। "काश कि मेरे पास इतना धन होता!" और उसने शोकपूर्ण आह भरी।

"अब हम दोनों ख़ूब मौज करेंगे, मित्र!" चेल्काश ने उछाह से कहा, "जी भरकर पियेंगे... फ़िक नहीं करो, तुम्हें तुम्हारा हिस्सा मिल जायेगा... तुम्हें चालीस दूंगा! क्यों, ठीक है न? चाहो तो अभी, हाथ के हाथ, ले सकते हो।"

"ठीक है। अगर देना चाहते हो, तो ले सकता हूं!"

गाव्रीला का समूचा बदन प्रत्याशा में, जो उसकी छाती को जोर से कचोट रही थी, फड़फड़ा रहा था।

"छछूंदर की दुम! 'ले सकता हूं!' मेहरबानी करके ले लो, मेरे भाई! मैं नहीं जानता कि इतने धन का क्या करूं? कृपा करके कुछ ले लो और मेरा बोझ हल्का करो!"

चेल्काश ने गाव्रीला की ओर कुछ नोट बढ़ा दिये। डांड़ों को छोड़कर उसने उन्हें अपनी कांपती हुई उंगलियों से पकड़ा और लालच से अपनी आंखें सिकोड़कर और जोर से अपने अन्दर हवा खींचते हुए मानो जलती चीज पी रहा हो, कमीज के भीतर खोंस लिया। चेल्काश उसे देख रहा था और उसके होंठों पर उपहास भरी मुस्कान रेंग रही थी। गाव्रीला ने फिर डांड़ों को संभाला और विचलित सा जल्दी जल्दी नाव खेने

लगा। उसकी आंखें नीचे झुकी थीं, उस आदमी की भांति जिसे किसी चीज के भय ने अभी अभी ग्रसा हो। उसके कंधे और कान सिहर रहे थे।

"तुम लालची हो! यह बुरी बात है... लेकिन... आखिर तो तुम किसान हो न..." चेल्काश ने सोचते हुए कहा।

"धन से आदमी कुछ भी कर सकता है!" आकस्मिक उमंग और उत्साह में गाव्रीला के मुंह से निकला और फिर बड़ी तेजी से, और असम्बद्ध रूप में, अपने विचारों के पीछे लपकते और शब्दों को झपटते हुए उसने बताया कि धन होने पर गांव का जीवन कैसा होता है, और धन न होने पर कैसा। सम्मान, आराम, सुख! ..

चेल्काश चेहरे को गम्भीर बनाए और किसी विचार से आंखों को सिकोड़े हुए उसकी बात ध्यान से सुनता रहा। कभी-कभी उसके होंठों पर संतोषभरी मुस्कान झलक उठती।

"यह लो, हम किनारे से आ लगे!" गाव्रीला के शब्दों की बाढ़ को उसने काट दिया।

नाव एक लहर की लपेट में आकर रेत में धसक गई थी।

"हां तो, हमारी मंजिल अब पूरी हुई। नाव को खींचकर काफ़ी दूर ले जाना होगा जिससे लहरें उसे बहा न ले जाएं। कुछ लोग इसे ले जायेंगे। अच्छा तो अब विदा। नगर से हम कोई चार-पांच मील दूर हैं। तुम भी नगर ही लौट रहे हो न?"

चेल्काश का चेहरा शैतानी भरी एक हार्दिक मुस्कराहट से चमक रहा था, मानो वह अपने लिये बहुत ही मजेदार और गाव्रीला के लिये बहुत ही अप्रत्याशित चीज की कल्पना कर रहा हो। हाथ को जेब में खोंसे वह उसमें पड़े नोटों को सरसरा रहा था।

"नहीं... मैं... नगर नहीं जा रहा हूं... मैं..." गाव्रीला हकलाने लगा, जैसे उसकी सांस घुट रही हो।

चेल्काश ने उसकी ओर देखा।

"क्यों, क्या बात है?"

"कुछ नहीं..."

लेकिन गाव्रीला का चेहरा पहले लाल हुआ और फिर स्याह पड़ गया, वह वहीं खड़ा-खड़ा पांव बदलता रहा मानो या तो चेल्काश पर टूट पड़ना

चाहता हो या अन्य कोई अत्यन्त दुस्सह काम करने के लिये उतावला हो रहा हो।

चेल्काश इस लड़के को इतना विचलित देख परेशान हो उठा। इसके अन्त की प्रतीक्षा करने लगा।

गाव्रीला एकाएक इस तरह हंसने लगा जैसे सुबकियां भर रहा हो। उसका सिर झुका था और इसलिये चेल्काश उसके चेहरे के भावों को नहीं देख सका, लेकिन उसने उसके कानों को लाल से सफ़ेद पड़ते देखा।

"जहन्नुम में जाओ!" हाथ हिलाते हुए चेल्काश ने कहा। "तुम मुझसे प्रेम करने लगे हो, क्या? लड़की की तरह खड़े बुड़बुड़ा रहे हो! या फिर तुम मुझसे जुदा नहीं होना चाहते? बोलो, कबूतर की दुम, नहीं तो मैं तुम्हें यहीं छोड़कर चल दूंगा!"

"तुम चले जाओगे?" गाव्रीला ज़ोर से चीख़ा।

निर्जन रेतीला तट इस चीख़ से कांप उठा, और समुद्र की लहरों से धुली रेत की पीली लहरों ने जैसे एक उसांस भरी। ख़ुद चेल्काश भी सहम गया। एकाएक गाव्रीला चेल्काश की ओर झपटा, उसके पांव पर जा गिरा और उसके घुटनों को अपनी बांहों में भरकर एक झटका दिया। चेल्काश लड़खड़ाया और धम से रेत में बैठ गया। दांत पीसकर उसने कसकर मुट्ठी बंधी अपनी लम्बी बांह हवा में हिलाई। लेकिन गाव्रीला की भिनभिनाती फुसफुसाहट और मिन्नतों ने उसके प्रहार को रोक दिया।

"प्यारे, यह धन मुझे दे दो! भगवान तुम्हारा भला करेगा, मुझे दे दो यह धन! तुम उसका क्या करोगे? देखो न, एक रात में... केवल एक रात में... और मुझे सालों तक... जाने कितने सालों तक... यह धन मुझे दे दो—मैं तुम्हारे लिये दुआ करूंगा। सारी उम्र दुआ करूंगा—तीनों गिरजों में! तुम्हारी आत्मा की मुक्ति के लिये दुआ करूंगा! तुम इसे यों ही उड़ा दोगे, जबकि मैं? मैं इसे ज़मीन में लगाऊंगा! मुझे दे दो! तुम्हारे लिये यह क्या मानी रखता है? कुछ भी तो नहीं। एक रात, और तुम फिर धनी के धनी। मेरे ऊपर एहसान कर दो! तुम तो अपने को खो चुके हो... तुम्हारे आगे तो कुछ भी नहीं है। और मैं... मुझे दे दो!"

चेल्काश रेत में हथेलियां टेके बैठा था सहमा-सा, हत्बुद्धि, क्षुब्ध और चुपचाप। उसकी आंखें इस लड़के को, जो उसके घुटनों से अपना सिर

सटाए भिनभिना रहा था, बींध रही थीं। आख़िर चेल्काश ने उसे धकेला, उछलकर खड़ा हुआ अपना हाथ जेब में डाला और नोटों का बंडल निकालकर गाव्रीला की ओर फेंक दिया।

"यह लो, अब चाटो इन्हें लेकर!" वह चिल्लाया। उसका समूचा बदन कांप रहा था उद्वेग से, तरस से और लालच के इस ग़ुलाम के प्रति घृणा से। उसके सामने धन फेंककर चेल्काश अपने को बहुत ऊंचा अनुभव कर रहा था।

"मैं तो ख़ुद ही तुम्हें ज्यादा देने जा रहा था। पिछली रात अपने गांव की याद आने पर मेरा हृदय पिघल गया था... मैंने मन में सोचा: लड़के की मदद करूंगा। लेकिन मैं देख रहा था कि तुम ख़ुद क्या करोगे, हाथ फैलाते हो या नहीं। और तुम... भिखारी! धन क्या ऐसी चीज़ है जिसके लिये इस तरह जान दी जाए? बेवकूफ़! लालची शैतान! आत्मसम्मान का नाम तक नहीं! पांच पांच कोपेक के लिये अपने आपको बेचने के लिये तैयार!"

"ख़ुदा तुमपर अपना साया रखे! अब मैं क्या हूं? अब... मैं धनी हूं!" गाव्रीला भिनभिनाया। उसका रोम रोम ख़ुशी से थरथरा रहा था। नोटों को उठाकर उसने कमीज़ के नीचे छिपा लिया। "कितने अच्छे हो तुम! मैं कभी नहीं भूलूंगा तुम्हें! नहीं, कभी नहीं! अपनी पत्नी और बच्चों से कहूंगा कि वे भी तुम्हारे लिये दुआ करें..."

ख़ुशी के उद्‌गारों को सुन और लालच के इस उभार से विकृत उसके चमकते चेहरे को देखकर चेल्काश ने अनुभव किया कि वह—चोर, पियक्कड़ और आवारा, जिसका अपने सगे-सम्बन्धियों से भी नाता टूट चुका है—कभी भी इतना नीचे नहीं गिरेगा, कभी भी इस प्रकार, इस हद तक अपना आत्मसम्मान खोकर धन के पीछे नहीं पड़ेगा। नहीं, वह कभी ऐसा नहीं करेगा, कभी इतना नीचे नहीं गिरेगा! और इस विचार तथा इस भावना ने उसके हृदय को ख़ुद अपनी आज़ादी की चेतना से सराबोर करके वहीं, समुद्र के उस तट पर गाव्रीला की बग़ल में उसे रोके रखा।

"तुमने मुझे सुख का दान दिया है!" गाव्रीला ने चिल्लाकर कहा, और चेल्काश के हाथ को अपने चेहरे से सटा लिया।

चेल्काश भेड़िए की भांति अपने दांतों को झलकाता रहा, लेकिन बोला कुछ नहीं।

"और ज़रा सोचो तो, मैं क्या करने पर उतर आया था!" गाव्रीला कहता गया, "यहां आते समय, रास्ते में, मैंने सोचा... मन ही मन... मैं इसे–तुम्हें, यानी... तुम्हारे सिर पर... डांड़ से... खटाक! धन निकाल लूंगा... और इसे, तुम्हें यानी, फेंक दूंगा... समुद्र में। कौन है इसका नामलेवा? और अगर इसकी लाश उनके हाथ लग भी गई... तो कोई यह खोज करने में सिर नहीं खपायेगा कि यह किसने किया, और कैसे किया? इसके लिये कोई इतनी हाय-तोबा नहीं मचायेगा। किसी को इसकी ज़रूरत नहीं! कोई इसके लिये परेशान नहीं होगा!"

"वापिस करो वह धन!" गाव्रीला की गरदन दबोचते हुए चेल्काश गरज उठा।

छिटककर जान छुड़ाने के लिये गाव्रीला ने ज़ोर लगाया... एक बार, दो बार, लेकिन चेल्काश की बांह सांप की भांति उसकी गरदन को जकड़े थी... चर्र से क़मीज़ फटी और गाव्रीला चारों खाने चित रेत पर जा गिरा। उसकी आंखें बाहर निकल आईं। उसकी उंगलियां जैसे हवा को झपट रही थीं और टांगें निराशा से छटपटा रही थीं। चेल्काश उसके ऊपर खड़ा था छड़ सा, सीधा-सतर, शिकारी पक्षी के समान। वह हंस रहा था टूटती हुई तीखी हंसी। उसकी बत्तीसी चमक रही थी और उसके पैने लम्बूतरे चेहरे पर मूंछें आवेग से बल खा रही थीं। अपने समूचे जीवन में इतनी क्रूरता से पहले कभी किसी ने उसके दिल को घायल नहीं किया था, न कभी उसे इस हद तक गुस्सा आया था।

"क्यों, अब तो सुखी हो न?" वह हंसा और फिर, पलटकर, नगर की दिशा में चल दिया। वह पांचेक डग भी न गया होगा कि गाव्रीला, बिल्ली की भांति आगे को झुका, उछलकर खड़ा हुआ, ज़ोरों से बांह घुमाई और एक बड़ा सा पत्थर फेंका।

"यह लो!"

चेल्काश कराह उठा, उसने हाथों से सिर थामा, लड़खड़ाकर कुछ आगे बढ़ा, गाव्रीला की ओर घूमा और मुंह के बल रेत पर गिर पड़ा। गाव्रीला भय से सुन्न हो गया। चेल्काश की एक टांग हिली, अपना सिर उठाने की उसने कोशिश की और फिर, तार की भांति कांपकर, पसर गया। गाव्रीला अब भाग खड़ा हुआ इस अंधेरे शून्य में, जहां, कोहरे में लिपटी स्तेपी के ऊपर, एक बड़ा सा, बेढंगा और झबरीला काला बादल लटका

हुआ था। लहरें सरसरा रही थीं। बल खाती हुई वे आतीं, रेत से गले मिलतीं, और बल खाती हुई फिर भाग जातीं। झाग फुंकारें छोड़ रहे थे और हवा में फुहारें उड़ रही थीं।

बूंदें पड़ने लगीं। पहले इक्की-दुक्की, फिर धुआंधार। लगता था जैसे आकाश ने अपने झरनों के मुंह खोल दिये हों। स्तेपी और समुद्र के समूचे विस्तार में, इन झरनों का एक जाल-सा बुन गया। गाव्रीला उसमें ओझल हो गया। बारिश और समुद्र के किनारे रेत पर पड़े मानव की एक लम्बी आकृति के सिवा और कुछ नज़र नहीं आता था। आख़िर, अंधकार को चीरकर, पक्षी की भांति उड़ता हुआ, गाव्रीला प्रकट हुआ। वह चेल्काश के पास पहुंचा, घुटनों के बल उसकी बग़ल में बैठा और उसे इधर-उधर हिलाने-डुलाने लगा। उसके हाथ ने किसी गर्म, लाल और चिपचिपी चीज़ को अनुभव किया... वह कांप उठा और चौंककर पीछे हट गया। उसका चेहरा फक हो गया, उसपर हवाइयां उड़ने लगीं।

"उठो, भाई, उठो!" बारिश की आवाज़ को बेधते हुए उसने चेल्काश के कान में फुसफुसाकर कहा।

चेल्काश ने अपनी आंखें खोलीं और गाव्रीला को परे धकेल दिया।

"दफ़ा हो जाओ!" खरखरी आवाज़ में वह फुसफुसाया।

"भाई मेरे, मुझे माफ़ करो! मेरे सिर पर शैतान सवार था!" – गाव्रीला ने फुसफुसाकर कहा और चेल्काश का हाथ होंठों से लगाया। उसका बदन कांप रहा था।

"चले जाओ..." चेल्काश बुदबुदाया।

"मुझे माफ़ करो, भाई, मुझे माफ़ करो! पाप का यह बोझ मेरे सीने से उतार दो!"

"जाओ...चले जाओ...जहन्नुम रसीद हो जाओ!" एकाएक चीख़कर चेल्काश उठ बैठा। उसका चेहरा सफ़ेद और क्रुद्ध था, उसकी आंखों में धुंध सी छाई थी और वे इस प्रकार मुंदी जा रही थीं जैसे उनमें नींद घिरी हो। "अब और क्या इरादा है? तुमने अपनी करनी कर ली...अब जाओ, दफ़ा हो जाओ यहां से!" उसने कहा और दुःख से आहत गाव्रीला को ठोकर मारने की कोशिश की, लेकिन ताक़त ने साथ नहीं दिया और अगर गाव्रीला उसके कंधों में बांह डालकर उसे संभाल न लेता, तो वह फिर ढह जाता। चेल्काश का चेहरा अब गाव्रीला के चेहरे के बिल्कुल पास था और दोनों ही चेहरे सफ़ेद तथा भयावह नज़र आ रहे थे।

"थू!" चेल्काश ने अपने नौकर की फैली-फैली आंखों में थूक दिया।

गाव्रीला ने दबकर आस्तीन से चेहरा पोंछा।

"जो भी तुम चाहो, मेरे साथ करो," वह फुसफुसाया, "मैं एक शब्द भी नहीं कहूंगा। बस, ख़ुदा के लिये मुझे माफ़ कर दो!"

"मरदूद! बुरा काम करने के लिये भी चौड़ी छाती चाहिये!" चेल्काश ने घृणा से कहा। अपनी जाकेट के नीचे से उसने अपनी कमीज का एक हिस्सा फाड़कर बाहर निकाला और कभी-कभी दांतों को पीसते हुए चुपचाप उससे अपना सिर बांधने लगा।

"धन तुमने ले लिया?" दांतों के बीच से उसने पूछा।

"नहीं भाई, मैंने नहीं लिया! और मैं लूंगा भी नहीं! वह मुसीबत की जड़ है!"

चेल्काश ने अपनी जाकेट की जेब में हाथ डाला, नोटों का बंडल खींचकर बाहर निकाला, उसमें से सौ रूबल का एक नोट अपनी जेब में वापिस डालकर बाक़ी नोट गाव्रीला के सामने फेंक दिये।

"उठा लो और यहां से दफ़ा हो जाओ!"

"नहीं, भाई... मैं नहीं ले सकता! मुझसे जो हुआ, उसके लिये माफ़ करो!"

"सुना नहीं, मैं कहता हूं, इसे उठा लो!" चेल्काश गरज उठा। उसकी आंखें भयंकर हो उठीं।

"मुझे माफ़ कर दो–तब लूंगा..." गाव्रीला ने विनीत भाव से कहा और बारिश से भीगी रेत में चेल्काश के पांवों पर गिर गया।

"झूठ! तुम इसे लोगे, कम्बख़्त!" चेल्काश ने विश्वास के साथ कहा। गाव्रीला के बाल पकड़कर उसने उसका सिर ऊपर किया और नोट उसके मुंह के सामने करते हुए बोला–

"यह लो! ले लो! तुमने कोई मुफ़्त में थोड़े ही काम किया था! डरो नहीं, ले लो! इस बात की शर्म न करो कि तुमने एक आदमी को मार ही डाला था! मेरे जैसे आदमी की जान लेने के लिए कोई तुम्हारा पीछा नहीं करेगा। पता लगने पर वे तुम्हें धन्यवाद ही देंगे। लो, इन्हें ले लो!"

यह देखकर कि चेल्काश हंस रहा है, गाव्रीला के हृदय का बोझ कम हो गया। उसने नोट अपने हाथ में दबोच लिये।

"भाई, तुम मुझे माफ़ कर दोगे न? क्या तुम मेरे लिये इतना भी नहीं करोगे?" डबडबाई आवाज़ में उसने बिनती की।

"मेरे प्यारे!" खड़े होते और अपने पांवों पर डगमगाते हुए चेल्काश ने भी उसी अन्दाज़ में जवाब दिया, "माफ़ करने की ऐसी बात भी क्या है? कुछ हो तो माफ़ करूं। आज तुमने मुझपर चोट की, कल मैं तुम पर..."

"आह भाई, मेरे भाई!" विक्षुब्ध भाव से सिर हिलाते हुए गाव्रीला ने आह भरी।

चेल्काश उसके सामने खड़ा था। उसके होंठों पर एक अजीब मुस्कान थिरक रही थी। उसके सिर की पट्टी जो धीरे-धीरे लाल होती जा रही थी, तुर्की टोपी की भांति मालूम होती थी।

अब मूसलधार बारिश हो रही थी। सागर दबी हुई आवाज़ में गरज रहा था। अत्यन्त विक्षुब्ध लहरें तट से टकरा रही थीं।

वे दोनों चुप थे।

"अच्छा तो, अब विदा," चेल्काश ने चलने के लिये मुड़ते हुए कहा। उसकी आवाज़ में उपहास का पुट था।

वह लड़खड़ा रहा था, उसकी टांगें कांप रही थीं, और वह ऐसे अजीब ढंग से अपने सिर को पकड़े था, मानो डर रहा हो कि कहीं वह गिर न पड़े।

"मुझे माफ़ करना, भाई!" गाव्रीला ने फिर मिन्नत की।

"सब ठीक है!" चलते हुए चेल्काश ने रुखाई से कहा।

वह लड़खड़ाता हुआ चल दिया। बाएं हाथ से वह अपना सिर पकड़े था और दाहिने से अपनी भूरी मूंछों को हल्के हल्के ऐंठ रहा था।

गाव्रीला वहीं खड़ा उसे पानी के पर्दे में ओझल होता देखता रहा। बारिश की अन्तहीन धाराओं ने, जो अभी भी गिर रही थीं, समूची स्तेपी को स्लेटी रंग की अवेध चादर में लपेट लिया था।

कुछ देर बाद गाव्रीला ने अपनी भीगी हुई टोपी उतारी, सलीब का चिन्ह बनाया, हाथ के नोटों पर नज़र डाली, सन्तोष की गहरी सांस ली, नोटों को अपनी कमीज़ के भीतर छिपाया और समुद्र के किनारे किनारे, चेल्काश की उलटी दिशा में, मज़बूती से डग भरता हुआ चल दिया।

समुद्र गरज कर अपनी भीमाकार लहरों को तट पर फेंक रहा था

श्रौर वे चूर चूर होकर झाग उगल रही थीं, बौछारों में फूटी पड़ रही थीं। बारिश जल श्रौर थल दोनों पर कोड़े बरसा रही थी... हवा चीख़ श्रौर चिल्ला रही थी... गरज, चीख श्रौर भनभनाहट से वायुमंडल गूंज रहा था... बारिश ने समुद्र श्रौर श्राकाश दोनों को श्रोझल कर दिया था।

शीघ्र ही बारिश की बौछारों श्रौर लहरों की फुहारों ने रेत पर उस लाल धब्बे को धो डाला जहां चेल्काश पड़ा रहा था, उसके पदचिन्हों को मिटा दिया श्रौर उस युवक के पांव के निशानों को भी साफ़ कर दिया... श्रौर समुद्र के इस निर्जन तट पर इन दो व्यक्तियों के बीच खेले गये इस छोटे से दुखान्त नाटक की याद दिलानेवाला एक भी तो चिन्ह बाक़ी नहीं रह गया।

१८९५

बुढ़िया इज़रगिल

१

ये कहानियां मैंने अक्करमन के नजदीक बेस्साराबिया में समुद्र-तट पर सुनी थीं।

सांझ का समय था। अंगूर तोड़ने का काम ख़त्म हो चुका था। मोल्दावियावासियों का दल, जिस के साथ मैं अंगूर तोड़ने का काम करता था, समुद्र-तट को चल दिया। मैं और बुढ़िया इज़रगिल अंगूरी बेलों की घनी छांव में चुपचाप लेटे थे और समुद्र-तट की ओर जाते लोगों की परछाइयों को रात के नीले तिमिर में विलीन होते रहे थे।

वे गाते और हंसते-खेलते जा रहे थे। ताम्बे से रंग के मर्दों की मूछें घनी और काली थीं, कंधों तक के बाल घुंघराले थे। वे छोटे कुरते और ढीले-ढाले पायजामे पहने थे। गहरी नीली आंखों और सुघड़-सुडौल बदनवाली प्रसन्न तथा प्रफुल्ल औरतों और लड़कियों का रंग भी ताम्बे जैसा था। रेशम-से मुलायम उनके काले बाल लहरा रहे थे, सुहानी हवा उनके बालों के साथ खेल रही थी और उनमें गुंथे सिक्के आपस में टकराकर झंकार कर रहे थे। हवा की एक प्रशस्त और निर्बाध धारा बह रही थी, लेकिन जब-तब वह मानो किसी अदृश्य चीज़ के ऊपर से जोर की छलांग लगाती, जिससे तेज़ झोंका आता, स्त्रियों के बालों को छितरा देता और वे उनके सिरों के इर्द-गिर्द लहरानेवाले काल्पनिक अयाल-से प्रतीत होने लगते। इससे औरतें परी-लोक की अद्‌भुत-सी जीव मालूम होतीं। जितना ही वे हमसे दूर होते जाते थे, रात और कल्पना उन्हें उतने ही सुन्दर आवरणों में लपेटती जाती थीं।

कोई वायोलिन बजा रहा था। एक लड़की गहरे कंठ से गा रही थी, हंसने की आवाज़ आ रही थी...

हवा समुद्र की तीखी गंध और कुछ पहले बारिश द्वारा ख़ूब तर की गयी धरती की घनी भाप से सराबोर थी। विचित्र आकारों और रंगों वाले बादल आकाश में अभी भी तैर रहे थे – कहीं धुएं की ढेरों परतों की भांति अस्पष्ट, भूरे और राख जैसे हल्के नीले रंग के और कहीं चट्टान के खण्डों की भांति कटावदार, एकदम काले या कत्थई। उनके बीच से प्यार से झांक रहा था सुनहरे तारों-जड़ी रात का आकाश। यह सबका सब – ध्वनियां और गंध, बादल और लोग – विचित्र रूप से सुन्दर और उदास और किसी अद्‌भुत परी-कथा का आरम्भ-सा प्रतीत हो रहे थे। ऐसा मालूम होता था, मानो विकास रुक गया हो, मर गया हो। लोगों की आवाजें, जैसे-जैसे वे दूर होते गये, धुंधली और उदास उसांसों में परिणत होकर शून्य में खोती गईं।

"तुम उनके साथ क्यों नहीं गए?" सिर हिलाकर समुद्र की ओर इशारा करते हुए बुढ़िया इज़रगिल ने पूछा।

समय ने उसकी कमर को दोहरा कर दिया था। उसकी आंखें, जो कभी ख़ूब काली और चमकदार रही होंगी, अब धुंधली और पनीली हो गई थीं। उसकी खरखरी आवाज़ अजीब थी – जब वह बोलती, तो ऐसे लगता मानो हड्डियां चिटक रही हों।

"मन नहीं चाहता," मैंने जवाब दिया।

"तुम रूसी लोग जन्म से ही बूढ़े होते हो। सबके सब अजगर की भांति उदास... हमारी लड़कियां तुमसे डरती हैं... हालांकि तुम जवान और मज़बूत हो..."

चांद निकल आया – ख़ूब बड़ा और रक्ताभ। ऐसा मालूम होता था मानो वह इस स्तेपी के अन्तहीन मैदानों के गर्भ में से प्रकट हुआ हो, जिसमें न जाने कितना मानवीय रक्त और मांस समाया है और जो शायद इसी लिए इतनी सम्पन्न और उपजाऊ है। बुढ़िया और मैं पत्तों की बेलबूटेदार परछाइयों के जाल में घिर-से गये थे। बाईं ओर, स्तेपी के ऊपर बादलों की परछाइयां दौड़ रही थीं जिन्हें नीली चान्दनी ने और भी अधिक झीना और पारदर्शी बना दिया था।

"देखो, वह लारा है!"

मेरी आंखें उस ओर मुड़ गईं, जिधर बुढ़िया की कांपती हुई टेढ़ी उंगली इशारा कर रही थी। वहां बहुत-सी परछाइयां तैर रही थीं और

उनमें से एक, जो अन्य सब से गहरी और घनी थी, तेजी से बढ़ रही थी। वह बादल के उस गाले की छाया थी, जो धरती के अधिक निकट तैर रहा था और अपने साथी बादलों की तुलना में अधिक तेजी से उड़ रहा था।

"वहां तो कोई नहीं है!" मैंने कहा।

"तुम्हारी नजर मुझ बुढ़िया से भी गयी-बीती है। देखो, वह काला-सा स्तेपी में दौड़ रहा है!"

मैंने फिर देखा और परछाइयों के सिवा इस बार भी और कुछ दिखाई नहीं दिया।

"वह तो केवल परछाईं है। तुम उसे लारा क्यों कहती हो?"

"क्योंकि यह वही है। वह अब छाया ही बनकर रह गया है—इसका वक़्त जो आ गया है। हजारों वर्ष हो गए उसे भटकते हुए। सूरज ने उसके मांस, रक्त और हड्डियों को सुखा दिया है और हवा ने उन्हें छितरा दिया। देखा तुमने, ख़ुदा किस तरह घमंडी को दंड देता है!"

"मुझे पूरी कथा सुनाओ," मैंने इस आशा से बुढ़िया से अनुरोध किया कि स्तेपी में जन्मी एक अद्भुत कहानी सुनने को मिलेगी।

और उसने मुझे यह कहानी सुनायी।

"हजारों साल पहले यह घटना घटी थी। समुद्र के पार बहुत दूर—जहां सूरज निकलता है—एक बहुत बड़ी नदी वाला देश है। उस देश का प्रत्येक पत्ता और घास का प्रत्येक डंठल इतनी छांव देता है कि उसमें बैठकर आदमी बेरहम सूरज से अपना बचाव कर सकता है।

"तो इतनी उपजाऊ है उस देश की धरती!

"उस देश में शक्तिशाली लोगों का एक क़बीला बसता था। वे रेवड़ पालते, शक्ति तथा साहस के साथ जंगली जानवरों का शिकार करते, शिकार के बाद ख़ूब जशन मनाते, गीत गाते और लड़कियों के साथ मौज करते।

"एक दिन, ऐसे ही एक जशन के वक़्त एक बाज ने सहसा आकाश से झपट्टा मारा और काले बालों वाली एक लड़की को, जो रात की भांति प्यारी थी, उठा ले गया। लोगों ने तीर छोड़े, लेकिन बाज का बाल तक

बांका नहीं हुआ और तीर वैसे ही धरती पर आ गिरे। लोग लड़की की खोज में गए, लेकिन बेसूद। समय बीता और वे उसे भूल गए, जैसे कि इस धरती पर हर चीज़ भुला दी जाती है।"

एक गहरी सांस लेकर बुढ़िया चुप हो गई। उसकी चरचराती आवाज़ ऐसे मालूम होती थी मानो उसके हृदय की गहराइयों में संचित विस्मृत युग की स्मृतियां बड़बड़ा रही हों। समुद्र धीमे स्वरों में, सम्भवतः इन्हीं तटों पर जन्म लेनेवाली इस प्राचीन दंत-कथा को प्रतिध्वनित कर रहा था।

"लेकिन बीस वर्ष बाद वह अपने आप लौट आई, क्षीण और मुरझाई हुई। उसके साथ एक युवक था, उतना ही मज़बूत और सुन्दर, जितनी कि वह ख़ुद बीस साल पहले थी। जब उससे पूछा गया कि इतने दिन वह कहां रही तो उसने जवाब दिया कि बाज़ उसे उठाकर पहाड़ों में ले गया और वह उसकी पत्नी के रूप में वहीं रही। यह युवक उनका पुत्र है। पिता अब इस दुनिया में नहीं रहा। जब वह समझ गया कि उसकी शक्ति जवाब दे रही है, वह आख़िरी बार आकाश में ख़ूब ऊंचे उड़ता चला गया और फिर, अपने पंखों को समेट, जो नीचे गिरा तो नुकीली चट्टानों से टकराकर टुकड़े-टुकड़े हो गया...

"बाज़ के पुत्र को सभी आश्चर्य से देख रहे थे और उन्होंने देखा कि वह उनसे किसी भी तरह बेहतर नहीं है, सिवा इसके कि उसकी आंखें पक्षियों के राजा की भांति ठंडे गर्व से चमक रही हैं। उससे बातें की गईं और उसने मन होने पर जवाब दिया या फिर चुप रहा और जब बड़े बूढ़े आये तो वह उनसे इस तरह बातें करता मानो वह उनके ही समान हो। इसे उन्होंने अपना अपमान समझा और उसे बे-पर के तथा कुंठित फलके वाले तीर की संज्ञा देकर उसे बताया कि उसके बराबर के हज़ारों लोग और उससे दुगनी आयु वाले हज़ारों उनका आदर करते और उनका हुक्म मानते हैं। लेकिन उसने उद्धतपन से उनकी आंखों में आंखें डालकर देखा और कहा कि उस जैसा अन्य कोई नहीं है; अगर अन्य तुम्हारा आदर करते हैं तो करें, लेकिन उसका ऐसा करने का कोई इरादा नहीं है। ओह, इसपर बड़े बूढ़े सचमुच ख़ूब बिगड़े। बिगड़े और बोले—

"'हमारे बीच इसके लिए जगह नहीं है। जहां इसके सींग समाएं, चला जाए।'

"वह हंसा और जिधर उसका मन हुआ, उधर ही चल दिया—वह

एक सुन्दर लड़की के पास पहुंचा, जो टकटकी बांधकर उसे देख रही थी। वह उसके पास गया और उसे अपनी बांहों में भर लिया। वह उसे दुतकारनेवाले उन बड़े बढ़ों में से ही एक की बेटी थी। हालांकि वह ख़ूबसूरत था, फिर भी लड़की ने उसे धकेलकर अलग कर दिया, क्योंकि वह अपने बाप से डरती थी। उसने उसे धक्का दिया और चल दी। तभी उसने लड़की पर प्रहार किया और जब वह गिर पड़ी तो उसके सीने को अपने पैरों से ऐसे रौंदा कि उसके मुंह से ख़ून का फ़ौवारा छूटकर आकाश को छूने लगा। लड़की ने आह भरी, सांप की भांति बल खाया और मर गई।

"जो यह देख रहे थे, भय से स्तम्भित रह गये—पहली बार इस तरह स्त्री की हत्या की गई थी। काफ़ी देर तक वे अपने सामने पड़ी लड़की को, जिसकी आंखें फटी हुई थीं और मुंह रक्त से सना हुआ था, अवाक खड़े देखते रहे। वे देख रहे थे उस युवक को, जो अन्य सब से अलग लड़की के पास गर्व से खड़ा था—अपने सिर को इस तरह ऊंचा उठाए खड़ा था मानो आकाश को क़हर बरपा करने के लिए ललकार रहा हो। आख़िर लोगों को जब कुछ चेत हुआ तो उन्होंने उसे पकड़ लिया और यह सोचकर कि उसे अभी मार डालना तो एक मामूली बात होगी, जिससे उनके हृदय की जलन नहीं मिट सकेगी, उसे बांधकर वहीं छोड़ दिया।"

रात अधिक गहरी और अधिक काली हो चली और विचित्र धीमी आवाजें सुनाई देने लगीं। धानीमूष की उदास सीं-सीं स्तेपी में छा गई, अंगूरी बेलों में झींगुरों की झंकार भर गई, पत्ते उसांसें छोड़ने और कानाफूसी करने लगे, गोल चांद, जो पहले रक्ताभ था, धरती से दूर होता हुआ फीका पड़ गया और स्तेपी पर अधिकाधिक नीला धुनधलका सा फैलता जा रहा था।

"और तब बड़े बूढ़े अपराध की माक़ूल सजा सोचने के लिए जमा हुए। उन्होंने सोचा कि घोड़ों से उसकी बोटी-बोटी रौंदवाई जाए, लेकिन यह सजा उन्हें काफ़ी मालूम नहीं हुई। फिर उन्होंने सोचा कि वे सब एक एक तीर से उसका शरीर बींध डालें, लेकिन यह सजा भी कुछ जंची नहीं। फिर यह सुझाव आया कि उसे जिन्दा जला दिया जाए, लेकिन ऐसा करने से वे धुएं के कारण उसे तड़पता हुआ नहीं देख सकेंगे। उन्हें कुछ भी ऐसा नहीं सूझा, जो सभी को पसन्द आता। इस बीच युवक की मां उनके सामने घुटने टेके चुपचाप बैठी रही। उसे न तो उनके हृदयों में दया उपजानेवाले शब्द मिल रहे थे और न ही आंसू। बहुत देर तक वे बातें

करते रहे, अन्त में बुद्धिमानों में से एक ने काफ़ी सोच-विचार के बाद कहा—

"'उससे पूछें तो कि उसने ऐसा क्यों किया?'

"और उन्होंने उससे पूछा। उसने कहा—

"'मुझे खोलो! जब तक मैं बंधा हूं, एक शब्द भी मुंह से नहीं निकालूंगा!'

"और जब उन्होंने उसे खोल दिया तो उसने पूछा—

"'तुम लोग क्या चाहते हो?' और उसका लहजा ऐसा था जैसे वे उसके गुलाम हों...

"'यह तुम जानते हो...' उस बुद्धिमान ने कहा।

"'मैं तुम्हें अपने कृत्यों की सफ़ाई किसलिए दूं?'

"'इसलिए कि हम तुम्हें समझ सकें। सुनो, गर्वीले, तुम्हारी मौत तो निश्चित है... हमें यह समझने में मदद दो कि तुमने ऐसा काम क्यों किया। हम जीवित रहेंगे, और जितना कुछ हम जानते हैं, उसमें वृद्धि करने से हमें लाभ होगा...'

"'अच्छी बात है, मैं तुम्हें बताता हूं, हालांकि मैं खुद भी शायद पूरी तरह नहीं समझता कि मैंने ऐसा क्यों किया। मुझे ऐसा लगता है कि मैंने इसलिए उसकी हत्या की कि उसने मेरी अवहेलना की... और मैं उसे चाहता था।'

"'लेकिन वह तुम्हारी नहीं थी,' उन्होंने उससे कहा।

"'क्या तुम केवल उन्हीं चीज़ों से काम लेते हो जो तुम्हारी होती हैं? मैं देखता हूं कि हर आदमी के पास हाथ, पांव और बोलने के लिए एक ज़बान के सिवा और कुछ अपना नहीं होता... फिर भी वह ढोर-डंगरों, स्त्रियों, ज़मीन... और अन्य कितनी ही चीज़ों का स्वामी होता है...'

"इसका उन्होंने यह जवाब दिया कि मानव जिस भी चीज़ का स्वामी बनता है, उसका दाम चुकाता है—अपनी बुद्धि से, अपनी शक्ति से, कभी अपनी जान तक से।

"उसने कहा कि वह कोई दाम नहीं चुकाना चाहता।

"देर तक उससे बातें करने के बाद उन्होंने देखा कि वह अपने आपको अन्य सब से ऊपर समझता है, अपने सिवा अन्य किसी को ख़ातिर में नहीं लाता। जब उन्होंने अनुभव किया कि वह कितना एकाकी है, तो

वे सभी भयग्रस्त हो उठे। उसकी न तो कोई जाति थी, उसका न कोई अपना था, न ढोर-डंगर थे, न पत्नी थी और न वह ऐसा कुछ चाहता ही था।

"यह सब जानने के बाद लोगों ने फिर से यह विचार करना शुरू किया कि उसके लिए कौनसी सजा उपयुक्त होगी, लेकिन उन्हें बहुत देर तक आपस में बातचीत नहीं करनी पड़ी। उसी बुद्धिमान ने, जो अब तक चुप बैठा था, उनसे कहा—

"'ठहरो! माकूल सजा है। यह बहुत ही भयानक है। हजारों साल तक खपाने के बाद भी तुम ऐसी सजा नहीं सोच सकते। वह ख़ुद ही अपनी सजा है। उसे छोड़ दो, उसे आजाद घूमने दो। यही उसकी सजा है!'

"और तब एक अद्‌भुत बात हुई। मेघहीन आकाश में बिजली कड़की। इस प्रकार दैवी शक्तियों ने उस बुद्धिमान के निर्णय का समर्थन किया। सब लोगों ने सिर झुका दिया और अपने-अपने घर चले गए। और वह युवक, जिसका लारा नाम रख दिया गया था—लारा, अर्थात् लांछित और बहिष्कृत—उन लोगों पर हंसा, जिन्होंने उसे छोड़ दिया था,—वह हंसा, अपने आपको अकेला और उतना ही आजाद देखकर, जितना कि उसका पिता था। लेकिन उसका पिता मानव नहीं था, जब कि वह था। और वह बाज़ की भांति आजादी से रहने लगा। वह लोगों की बस्तियों में जाता, ढोर-डंगर, लड़कियां और अन्य जो कुछ चाहता, उठा ले जाता। वे उसे अपने तीरों का निशाना बनाते, लेकिन तीर उसके शरीर को न बींध पाते—दैवी दंड का अदृश्य कवच उसके शरीर की रक्षा जो करता था। वह बहुत ही फुर्तीला, रक्त का प्यासा और क्रूर था। लोगों के सामने वह कभी नहीं आता था। वे हमेशा दूर से ही उसे देखते थे। इस प्रकार, एक लम्बे अर्से तक—दसेक सालों तक—वह लोगों के आसपास ही मंडराता रहा, सर्वथा एकाकी। फिर एक दिन, वह लोगों के निकट आया और जब लोग उसपर झपटे, तो वह हिला-डुला नहीं और उसने अपने बचाव का भी कोई प्रयत्न नहीं किया। तभी एक आदमी ने उसके इरादे को भांप लिया और चिल्लाकर कहा—

"'उसे हाथ नहीं लगाना! वह मरना चाहता है!'

"और लोग रुक गये, वे नहीं चाहते थे कि वह व्यक्ति, जिसने उन्हें इतने कष्ट दिये थे, उनके हाथों मरकर अपनी यंत्रणा से छुट्टी पा जाय।

वे रुक गये और उसपर हंसने लगे। उनकी हंसी सुन वह कांप उठा और दोनों हाथों से अपने सीने को टटोलने लगा मानो कोई चीज़ खोज रहा हो। फिर, पत्थर लेकर वह एकाएक लोगों पर टूट पड़ा। लेकिन उन्होंने उसके पत्थरों से अपने को बचाया और पलटकर एक भी पत्थर नहीं मारा। अन्त में, जब वह थक गया और निराशा से चीख़कर धरती पर गिर पड़ा, तो वे एक तरफ़ को खड़े रहकर उसे देखने लगे। वह खड़ा हुआ, ज़मीन पर पड़े एक चाकू को उसने उठाया, जो भभ्भड़ में किसी के हाथ से गिर गया था और अपने सीने पर उससे वार किया। लेकिन चाकू के दो टुकड़े हो गए, मानो किसी पत्थर से वह टकरा गया हो। तब वह ज़मीन पर गिर पड़ा और उसपर अपना सिर पटकने लगा, लेकिन ज़मीन भी, जहां उसका सिर टकराता, नीचे धसक जाती और इस तरह उससे दूर खिसकती गई।

"'वह मर भी नहीं सकता!' लोग ख़ुशी से चिल्लाए।

"और वे उसे वहीं छोड़कर चले गए। वह पीठ के बल पड़ा आकाश को ताक रहा था और उसने देखा कि दूर, बहुत दूर, शक्तिशाली बाज़ काले धब्बों की भांति उड़ रहे हैं। उसकी आंखों में इतना दुःख, इतनी वेदना तैर रही थी कि समूची दुनिया उसमें डूब सकती थी। तब से वह अकेला और एकदम आज़ाद मौत की प्रतीक्षा कर रहा है। वह बस, इस धरती पर मंडराता रहता है... देख रहे हो न, वह एक परछाईं भर रह गया है, और अनन्तकाल तक इसी रूप में भटकता रहेगा! न वह मानव की बोली, न उनका काम-काज समझता है। वह बस चलता ही जाता है, किसी चीज़ की खोज में, हर क्षण और हर घड़ी... न तो वह जीवित है और न उसे मौत ही आती है। और न मानवों के बीच ही उसके लिए कोई जगह है... तो घमंड के लिए ऐसे बुरा हाल किया गया था मानव का!"

बुढ़िया ने आह भरी, चुप हो गई और अपने सिर को अजीब ढंग से हिलाया जो उसके सीने पर लुढ़क आया था।

मैंने उसकी ओर देखा। ऐसा मालूम होता था कि नींद उसपर हावी हो रही है। जाने क्यों, मेरा हृदय उसके लिए वेदना से भर गया। एक ऊंचे और प्रताड़णा के स्वर में उसने अपनी कहानी का अन्त किया था, फिर भी मुझे ऐसा लगा मानो उसमें भय और दयनीयता का पुट मिला हो।

समुद्र-तट पर लोग गाने लगे — अजीब ढंग से गाने लगे। स्त्री के गहरे स्वर ने गीत को छेड़ा और दो या तीन स्वरों के बाद एक दूसरी आवाज़ ने उसे फिर शुरू से उठाया, जबकि पहले वाली आवाज़ अगले स्वरों पर बढ़ती गयी। इसी प्रकार तीसरी, चौथी और पांचवीं आवाज़ ने उसे उठाया और फिर, एकाएक, पुरुष-कंठों ने मिलकर उसे गाना शुरू कर दिया।

स्त्रियों की आवाज़ों में से प्रत्येक अलग सुनाई दे रही थी, — ऐसा मालूम होता था मानो वे विभिन्न रंगों की धाराएं हों, जो चट्टानों को पार करती, उछलती और चमचमाती, पुरुष-कंठों की उमड़ती-घुमड़ती घनी धारा की ओर लपक रही हों, उसमें डूब गई हों, बल खाकर फिर बाहर निकल आई हों और इस बार पुरुष-कंठों को उन्होंने डुबा दिया हो और फिर एक-एक करके - भारी धारा से अलग होकर, सबल और सुस्पष्ट रूप में ऊंची उठती चली गई हों।

लहरों का शोर इन स्वरों में खो गया था।

२

"क्या तुमने ऐसा गाना इससे पहले भी कभी सुना है?" सिर उठाते हुए इज़रगिल ने पूछा और उसका दन्तविहीन मुंह पोपली मुस्कराहट से खिल उठा।

"नहीं, कभी नहीं सुना..."

"और कहीं तुम्हें सुनने को मिलेगा भी नहीं। गाना हम लोगों की जान है। केवल सुन्दर लोग, जीवन के प्रेम में पगे लोग ही इतना अच्छा गा सकते हैं। हम लोग जीवन के प्रेम में पगे हुए हैं। ज़रा सोचो तो कि क्या ये लोग, जो अब गा रहे हैं, दिन भर के काम के बाद थककर चूर नहीं हो गये? सूरज निकलने से लेकर दिन छिपे तक उन्होंने हाड़ तोड़े, लेकिन चांद निकला ही है कि वे गा रहे हैं। जो लोग जीवन बिताना नहीं जानते, बिस्तरों पर जा लेटते, वे, जो जीवन में रस लेना जानते हैं, गा रहे हैं।"

"लेकिन स्वास्थ्य..." मैंने कहना शुरू किया।

"स्वास्थ्य तो जीवन भर के लिए हमेशा ही काफ़ी रहता है। स्वास्थ्य की क्या बात करते हो! धन होने पर क्या तुम उसे ख़र्च नहीं करोगे?

स्वास्थ्य भी सोना ही है। जानते हो कि जब मैं जवान थी तो क्या करती थी? सुबह से सांझ तक कालीन बुनती थी। बैठे-बैठे कमर अकड़ जाती थी। मैं जो सूरज की किरण की तरह चंचल थी, हिले-डुले बिना पत्थर की भांति बैठी रहती। कभी-कभी, इतनी देर बैठे रहने के कारण, मेरी हड्डियां तक दुःखने लगतीं। लेकिन रात होते ही मैं उस आदमी को चूमने के लिए हवा हो जाती, जिसे प्यार करती थी। तीन महीने तक मेरा वह प्रेम चला और मेरी हर रात उसके साथ बीती। फिर भी, देखो तो, मैं अब तक—इतनी बड़ी उमर तक—जीती हूं। ख़ून की कमी नहीं पड़ी! न जाने कितनी बार मैं प्रेम में डूबी-उतराई, न जाने कितने चुम्बनों की मैंने बौछार की और बौछार ली!"

मैंने उसके चेहरे पर नज़र डाली। उसकी काली आंखें वैसी ही धुंधली थीं—उसकी ये स्मृतियां तक उनमें चमक नहीं ला सकी थीं। उसके सूखे-फटे हुए होंठ, उसकी नुकीली ठोड़ी, जिसपर सफ़ेद बालों के गुच्छे उगे थे और उल्लू की चोंच की भांति टेढ़ी उसकी झुर्रियोंदार नाक चांद की रोशनी में चमक रही थी। गालों की जगह काले गड्ढे पड़े थे और उनमें से एक पर उसके सफ़ेद बालों की एक लट पड़ी हुई थी, जो लाल रंग के उस चिथड़े से बाहर निकल आई थी, जिसे उसने अपने सिर पर लपेट रखा था। उसके चेहरे, गरदन और हाथों पर झुर्रियों का जाल बिछा था और जब भी वह हिलती-डुलती थी तो ऐसा लगता था कि उसकी यह झुर्रियोंदार सूखी खाल अभी तड़ककर अलग जा गिरेगी और धुंधली काली आंखों वाला हड्डियों का एक ढांचा मात्र यहां बैठा रह जाएगा।

अपनी चरचराती आवाज़ में उसने अब फिर बोलना शुरू कर दिया था—

"मैं अपनी मां के साथ फ़ाल्मी के निकट, बिरलात नदी के किनारे रहती थी, और मैं पन्द्रह वर्ष की थी जब वह हमारे यहां आया। लम्बा क़द, काली मूंछ, सुहावना और बहुत ही ख़ुशमिज़ाज। हमारी खिड़की के तले उसने अपनी नाव रोक दी और गुंजदार आवाज़ में पुकार उठा—'अरे, क्या, कुछ खाने-पीने को मिल सकता है?' मैंने खिड़की में से ऐश वृक्ष की टहनियों के बीच से देखा कि नदी नीली चांदनी में चमक रही है और वह सफ़ेद क़मीज़ पर पटका कसे, जिसके सिरे खुले थे वहां खड़ा है, उसका एक पांव नाव में था और दूसरा तट पर। वह हिलता-डुलता हुआ कुछ गा रहा था। जब उसकी नज़र मुझपर पड़ी तो बोला—'ओह, कैसी

सुन्दरी रहती है यहां, और मुझे पता तक नहीं!'—मानो वह दुनिया भर की सुन्दरियों का हिसाब रखता हो! कुछ शराब और कुछ गोश्त मैंने उसको दे दिया... इसके चार दिन बाद मैं खुद भी उसकी हो गई... हर रात हम एकसाथ नाव पर घूमने जाते। वह आता और गिलहरी की भांति धीमे-से सीटी बजाता और मैं खिड़की में से मछली की भांति कूद पड़ती। और हम दोनों नाव में चल देते... वह प्रूत नदी के तटवर्ती प्रदेश का मछियारा था। जब मेरी मां को हम दोनों की करतूत का पता चला और उसने मेरी मरम्मत की तो उसने मुझसे दोब्रूजा, बल्कि इससे भी दूर दान्यूब की उपनदियों की ओर भाग चलने को कहा। लेकिन तब तक मैं उससे ऊब चली थी—वह बस, गाता और चूमता ही रहता था। मैं इससे उकता गई थी। उन दिनों हुत्सूलों का एक दल घूमता-घामता इधर के इलाक़ों में आ निकला। उन्होंने इस देश की लड़कियों पर डोरे डालना शुरू किया। उन लड़कियों ने खूब मौज की। कभी-कभी ऐसा होता कि प्रेमी ग़ायब हो जाता और उसकी प्रेमिका उसकी याद में घुलने लगती। सोचती, हो न हो, या तो वह जेल में डाल दिया गया है, या लड़ाई में मारा गया। और इसके बाद, एकाएक, वह अकेला ही या फिर अपने दो-तीन साथियों के साथ इस तरह प्रकट हो जाता, जैसे आसमान से टपक पड़ा हो। बहुमूल्य उपहारों का वह ढेर लगा देता—उनके लिए तो यह बायें हाथ का खेल था—अपनी प्रेमिका के साथ दावतें उड़ाता, अपने साथियों के सामने उसे लेकर खूब शेखी बघारता। इस सब से वह खिल उठती। एक बार एक लड़की से, जिसका प्रेमी इसी तरह का था, मैंने कहा कि मेरा भी किसी हुत्सूल से परिचय करा दे... भला क्या नाम था उस का? ओह, भूल गयी। मेरी याददाश्त अब अच्छी नहीं रही। फिर यह बात इतनी पुरानी है कि उसे कोई भी भूल सकता है। उस लड़की ने एक जवान हुत्सूल से मेरी जान-पहचान करा दी। बहुत खूबसूरत था वह... लाल मूंछें और लाल घुंघराले बाल! दहकते हुए लाल। था वह उदास-सा। कभी प्यार की तरंग में बहता तो कभी खूब गरजता और मरने मारने पर उतर आता। एक बार उसने मेरे मुंह पर थप्पड़ दे मारा... बिल्ली की भांति उछलकर मैं उसकी छाती पर सवार हो गई और उसके गाल में मैंने अपने दांत गड़ा दिये... तब से उसके गाल में एक गढ़ा पड़ गया और जब मैं उसे चूमती तो उसे बहुत अच्छा लगता।"

"लेकिन उस मछियारे का क्या हुआ?" मैंने पूछा।

"वह मछियारा? वह... यहीं बना रहा। वह भी उनमें—हुत्सूलों में—शामिल हो गया। शुरू में उसने मिन्नतें कीं कि मैं उसके पास लौट जाऊं, फिर धमकियां दीं कि अगर मैंने ऐसा नहीं किया तो वह मुझे नदी में पटक देगा, लेकिन उसके दिल का वह घाव जल्दी ही भर गया। वह उन लोगों में शामिल हो गया और उसने एक नयी प्रेमिका खोज ली... वे दोनों—वह मछियारा और मेरा वह हुत्सूल प्रेमी—एकसाथ फांसी पर लटका दिए गए। मैं उन्हें फांसी लगते देखने गई थी। दोब्रूजा में उन्हें फांसी लगी। मछियारे को जब लटकाने के लिए ले जाया गया तो उसके चेहरे पर मुर्दनी छाई थी और वह रो रहा था, लेकिन हुत्सूल पाइप पीता रहा। वह मजे से चला जा रहा था, पाइप पीता हुआ, जेबों में हाथ डाले,—उसकी मूंछों का एक सिरा उसके कंधे पर लटक रहा था और दूसरा उसके सीने पर। जब उसकी नजर मुझपर पड़ी तो उसने अपने मुंह से पाइप निकाला और चिल्लाकर कहा—'अलविदा!' उसके लिए मैंने पूरे एक साल तक आंसू बहाए। वे ठीक उस वक़्त पकड़े गए जबकि वे अपने यहां—कार्पेथिया—पहाड़ों में वापिस लौटनेवाले थे। किसी रूमानियावासी के घर उनकी विदाई की दावत हो रही थी। तभी उन्हें पकड़ लिया गया। केवल वे दो ही पकड़े गए। कई वहीं के वहीं मारे गये और बाक़ी बचकर भाग निकले... लेकिन रूमानियावासी को अपनी करनी का फल भुगतना पड़ा। उसका घर और खेत-खलिहान, उसकी पनचक्की और अनाज—सब जलाकर राख कर दिये गये। भिखारी बनकर रह गया।"

"क्या यह तुम्हारी करतूत थी?" मैंने यों ही पूछा।

"हुत्सूलों के अनेक मित्र थे—अकेली मैं ही नहीं... उनके सबसे पक्के मित्र ने ही उनकी याद में यह बदला लिया था..."

समुद्र-तट पर गाना अब बन्द हो गया था और लहरों की हरहर ध्वनि ही बुढ़िया की इस कहानी का साथ दे रही थी। लहरों की यह चिंतापूर्ण और बेचैन ध्वनि जीवन की इस कहानी के सर्वथा अनुकूल थी। रात की मृदुता जितनी बढ़ती थी, चांदनी की नीलिमा उतनी ही घनी होती जाती थी और रात के अदृश्य जीवों की अस्पष्ट आवाज़ों का ज़ोर उतना ही धीमा पड़ता जाता था। समुद्र का गर्जन बढ़ता जा रहा था... हवा तेज़ होती जा रही थी।

"एक तुर्क से भी प्रेम किया मैंने। मैं उसके हरम में दाख़िल हो गई, जो स्कूतारी में था। हफ़्ते भर मैं वहां रही—कुछ बुरा नहीं था... लेकिन फिर मैं वहां के जीवन से ऊब गई—जिधर नजर डालो, औरतें ही औरतें... पूरी आठ थीं... दिन भर वे चरती रहतीं, सोतीं, बेमतलब चिचियातीं... या फिर कुड़क मुर्ग़ियों की तरह लड़तीं। वह तुर्क जवान नहीं था। उसके बाल क़रीब-क़रीब पक गये थे। बहुत ही अमीर और बहुत ही बड़ा आदमी था वह। शाहों की भांति बोलता था... उसकी आंखें काली थीं... पैनी थीं उसकी आंखें... वे सीधे आत्मा की टोह लेती थीं। ख़ुदा को बहुत याद करता रहता था वह। सबसे पहले बुकुरेश्ती में मेरी उससे भेंट हुई... शाह की तरह बड़ी शान से वह बाजार में से चला जा रहा था। मैंने मुसकराकर उसकी ओर देखा। उसी रात मुझे पकड़कर उसके सामने पेश किया गया। वह चन्दन और ताड़ की लकड़ी का व्यापार करता था और कुछ माल ख़रीदने बुकुरेश्ती आया था।

"'बोलो मेरे साथ चलोगी?' उसने कहा।

"'ओह, हां, चलूंगी,' मैंने कहा।

"'तो ठीक है,' वह बोला।

"और मैं उसके साथ चल दी। बहुत अमीर था वह तुर्क। उसके एक लड़का था—दुबला-पतला, काले बालों वाला... सोलह वर्ष का। उसी के साथ मैं तुर्क के यहां से भागी—बुल्गारिया, लोम-पलान्का... वहां एक बुल्गारी स्त्री ने मेरी छाती में चाकू भोंक दिया। उसे वहम था कि कहीं मैं उसके पति या प्रेमी को—मुझे ठीक याद नहीं रहा—न भगा ले जाऊं।

"इसके बाद, एक लम्बे अर्से तक, मैं एक मठ में बीमार पड़ी रही। स्त्रियों का मठ था। एक पोलिश लड़की मेरी देख-भाल करती थी और उसका भाई, जो आर्त्सर-पलान्का के निकट एक मठ में साधु था, उससे मिलने आया करता था... वह कीड़े की भांति मेरे चारों ओर बिलबिलाया करता... जब मैं अच्छी हो गई तो उसके साथ पोलैंड चली गई।"

"ज़रा रुको तो, उस तुर्क के लड़के का क्या हुआ?"

"लड़का? वह मर गया। घर की याद में या शायद प्रेम में घुलकर... वह वैसे ही मुरझाने लगा जैसे ज्यादा धूप खाकर पौधा मुरझा जाता है... बस, मुरझाता चला गया... वह बिस्तर से लग गया, नीला-सा और बर्फ़ की भांति पारदर्शी हो गया था, लेकिन प्रेम की आग अब भी उसके

अन्दर जल रही थी। वह बार-बार अपने बिस्तर पर मुझे बुलाता, अनुरोध करता कि मैं झुककर उसको चुम्बन दूं... मैं उसे बहुत चाहती थी और खूब-खूब चुम्बन मैंने उसे दिए... तिल-तिल करके वह गलता गया, हिल-डुल तक न पाता। वह बस वैसे ही पड़ा रहता और मेरी मिन्नत करता—भिखारियों की भांति गिड़गिड़ाता—कि मैं उसके पास लेटकर उसे गर्मा दूं। और मैं ऐसा ही करती। जैसे ही मैं उसके पास लेटती, उसका रोम-रोम सिहर उठता। एक दिन, जब मैं जागी, तो देखा कि वह पत्थर की भांति ठंडा पड़ा है... वह मर गया था... मैं खूब रोई। कौन जाने? शायद मेरी वजह से ही उसकी मृत्यु हुई। मैं उम्र में उससे दुगनी बड़ी थी, मजबूत और रसीली थी। लेकिन वह? वह निरा बच्चा था!"

बुढ़िया ने एक लम्बी सांस छोड़ी और अपने सूखे होंठों से कुछ बुद-बुदाते हुए तीन बार सलीब का निशान बनाया—इससे पहले मैंने कभी उसे ऐसा करते नहीं देखा था।

"फिर तुम पोलैंड चली गईं..." मैंने कहानी का सूत्र पकड़ते हुए कहा।

"हां... उस नन्हे पोल के साथ। वह नीच और कुत्सित व्यक्ति था। जब उसे स्त्री की जरूरत होती, तो वह बिल्ले की भांति मेरे चारों ओर मंडराता, उसके होंठों से शहद टपकता। जब उसकी भूख मिट जाती, तो उसके तीखे शब्द मेरे दिल पर कोड़े की तरह चोट करते। एक दिन, जब हम नदी-तट पर घूम रहे थे, उसने दम्भ में भरकर कोई अपमानजनक बात कही। ओह, मैं बुरी तरह झुंझला उठी! गुस्से में उबलने लगी। बच्चे की भांति—वह बहुत छोटा जो था—मैंने उसे ऊपर उठा लिया और इतना दबोचा कि उसका मुंह नीला पड़ गया। इसके बाद मैंने उसे नदी में फेंक दिया। उसके मुंह से एक चीख निकली, जो बड़ी मजेदार थी। तट की ऊंचाई से मैंने उसे पानी में हाथ-पांव मारते देखा। फिर मैं वहां से चली गई और इसके बाद हम कभी नहीं मिले। इस मामले में मैं भाग्यवान रही—जिस प्रेमी को मैंने छोड़ा, उससे फिर कभी भेंट नहीं हुई। कितना बुरा मालूम होता है छोड़े हुए प्रेमियों से मिलना, जैसे मुर्दों से मिल रहे हों।"

बुढ़िया आह भरते हुए चुप हो गई। मेरी कल्पना में उन लोगों के चित्र चक्कर लगाने लगे, जिन्हें उसकी कहानी ने उभारा था। वह रहा

धधकते लाल बालों और लाल मूंछों वाला हुत्सूल प्रेमी, जो फांसी की ओर जाते समय भी शांत भाव से पाइप पीता रहा था। ऐसा मालूम हुआ कि उसकी आंखें ठंडे नीले रंग की थीं और उनकी नज़र दृढ़ और गहरी थी। उसके साथ साथ काले मूंछों वाला प्रूत नदी तटवर्ती प्रदेश का वासी मछियारा चला जा रहा था। मौत से त्रस्त वह रो रहा था और उसकी आंखें, जिनमें कभी प्रसन्नता नाचती थी, अब पथराई-सी ताक रही थीं। उसका चेहरा आसन्न मौत के भय से सफ़ेद पड़ गया था और आंसुओं से भीगी तथा शोक में डूबी मूंछें उसके ऐंठे हुए होंठों के छोरों पर लटक आई थीं। और वह रहा रोब-दाब वाला बूढ़ा तुर्क, जो शायद भाग्यवादी और पूरा स्वेच्छाचारी था। पास ही में था उसका पुत्र – पूर्व का वह कोमल बूटा – चुम्बनों के विष का मारा हुआ। और वह रहा पोलैंडवासी, वह दम्भी युवक, विनम्र और क्रूर, अत्यन्त भावप्रवण और भावनाहीन... वे सब क्षीण छायाओं के सिवा अब और कुछ नहीं रह गये थे। और जिसे उन्होंने चूमा था, वह मेरे पास बैठी थी – जीवित, लेकिन उम्र की मार से चुरमुर, रक्तहीन, मांसहीन, इच्छाहीन हृदय और चमकहीन आंखोंवाली – वह भी तो लगभग छाया ही थी।

उसने अपनी बात आगे बढ़ायी –

"पोलैंड में बड़ी मुसीबत में गुज़री। वहां के लोग झूठे और हृदयहीन हैं। मैं उनकी सांपों जैसी भाषा नहीं बोल सकती थी। वे जब बोलते तो लगता जैसे फुंकार मार रहे हों... जाने क्या फुंकारते हैं? झूठ उनकी घुट्टी में मिला है, इसीलिए ख़ुदा ने उन्हें सांपों जैसी ज़बान दी है। सो मैं चल पड़ी – किधर और क्यों, नहीं जानती थी। मैंने देखा कि पोलैंडवासी तुम रूसियों के ख़िलाफ़ विद्रोह की तैयारी कर रहे हैं। मैं बोहेमिया नगर में पहुंची। वहां एक यहूदी ने मुझे ख़रीद लिया, अपने लिये नहीं, बल्कि मेरे शरीर से पैसा कमाने के लिए। मैं इसके लिए मान गई। जीने के लिए कोई हुनर ज़रूर आना चाहिये। मैं कुछ नहीं जानती थी। सो अपने शरीर से मैंने उसका मूल्य चुकाया। लेकिन मैंने सोचा कि जब मेरे पास अपने विरलात लौटने लायक़ पैसा हो जायेगा, तो अपने बंधनों को, चाहे वे कितने ही मजबूत क्यों न हों, तोड़कर फेंक दूंगी। और मैं वहां रही। एक से एक धनी लोग मेरे पास आते, मेरे साथ खाते-पीते। इसकी उन्हें भारी क़ीमत चुकानी पड़ती। मुझे लेकर वे एक दूसरे से लड़ते और

बरबाद होते। उन में से एक मेरा हृदय जीतने के लिए बहुत दिनों तक मेरे पीछे पड़ा रहा। एक दिन वह आया और उसका नौकर उसके पीछे-पीछे बहुत बड़ा थैला उठाये दाख़िल हुआ। वह भला आदमी थैला लेकर मेरे सिर पर उलटने लगा। सोने की मुद्राएं मेरे सिर पर लगतीं, लेकिन जब वे फ़र्श पर गिरकर खन्न से बोलतीं, तो मेरा हृदय नाच उठता। लेकिन फिर भी उस महानुभाव को मैंने बाहर निकाल दिया। उसका चेहरा चर्बी-चढ़ा और चौकट था और उसकी तोंद ऐसी थी जैसे बड़ा तकिया। वह मोटे-ताज़े सुअर-सा लगता था। हां, मैंने उसे बाहर निकाल दिया। चाहे वह कहता रहा कि मैंने तुम्हें सोने से लाद देने के लिये ही अपनी सारी ज़मीन, घर-बार और घोड़े बेच डाले हैं। उस समय मैं एक अन्य बढ़िया आदमी से प्रेम करने लगी थी। उसके चेहरे पर घाव के निशान थे – एक जाल-सा बिछा था निशानों का उसके चेहरे पर। ये निशान तुर्कों की तलवारों की यादगार थे। यूनानियों की ख़ातिर तुर्कों के ख़िलाफ़ लड़कर वह उन्हीं दिनों लौटा था। क्या आदमी था वह भी! पोलैंड का रहनेवाला – भला क्या लेना-देना था उसे यूनानियों से? फिर भी वह उनके साथ उनके दुश्मन से जूझा। तुर्कों ने बड़ी बेरहमी से उसके अंग-भंग किये – उनकी मार से उसकी एक आंख और बायें हाथ की दो उंगलियां ग़ायब हो गईं... यूनानियों से उसका – एक पोल का – क्या वास्ता? बात यह थी कि वह बहादुरी के कारनामों के लिये छटपटाता रहता था, और आदमी का हृदय जब वीर-कृत्यों के लिये छटपटाता हो, तो इसके लिये वह सदा अवसर भी ढूंढ़ लेता है। जीवन में ऐसे अवसरों की कुछ कमी नहीं है और अगर किसी को ऐसे अवसर नहीं मिलते, तो समझ लो कि वह काहिल है या फिर कायर या यह कि वह जीवन को नहीं समझता। अगर वह समझता होता, तो निश्चय ही वह अपनी छाप छोड़ जाना चाहता। और तब जीवन उन्हें इस तरह न निगल पाता कि उनका कोई नाम-निशान तक बाक़ी न रहे... वह घावोंवाला बहुत ही बढ़िया आदमी था! कुछ न कुछ करने के लिये वह दुनिया के छोर पर भी जा पहुंचता। शायद तुम्हारे लोगों ने विद्रोह के दौरान उसका काम तमाम कर डाला है। तुम मगयारों से लड़ने क्यों गये? बस, चुप रहना!"

मुझे मुंह बंद रखने का आदेश देकर बुढ़िया इज़रगिल ख़ुद चुप हो गयी और विचारों में खो गयी।

"मेरी जान-पहचान का एक भगयार भी था। एक दिन वह मुझे छोड़कर चला गया—जाड़ों के दिन थे—वसंत के दिनों में ही जब बर्फ़ पिघली, तो एक खेत में उसकी लाश मिली। उसके सिर में गोली लगने का निशान था। देखा तुमने, प्रेम से इतने ही लोग मरते हैं, जितने प्लेग से। अगर गिनती की जाये, तो कम नहीं निकलेंगे... लेकिन हां, मैं कह क्या रही थी? पोलैंड की बात थी... अपना आख़िरी खेल मैंने वहीं खेला। एक बड़े अमीर से वहां मेरी मुलाक़ात हुई... बहुत ख़ूबसूरत था वह—बेहद ख़ूबसूरत। लेकिन तब मैं बूढ़ी हो चली थी। उफ़, काफ़ी बूढ़ी हो चली थी! चालीस वर्ष की? हां, शायद चालीस वर्ष की... और वह दम्भी तथा स्त्रियों के मुंह चढ़ा था। बहुत महंगा पड़ा वह मुझे। उसने समझा कि उसका इशारा करते ही मैं उसके सामने बिछ जाऊंगी। लेकिन मैं इतनी आसानी से झुकनेवाली नहीं थी। किसी की ग़ुलाम बनकर रहना मेरे लिये मुमकिन नहीं था। उस वक़्त तक मैंने यहूदी से नाता तोड़ लिया था, बहुत पैसे दिये थे उसे... मैं तब क्रैको में थी। मेरे पास सब कुछ था—घोड़े थे, सोना, नौकर-चाकर... वह मुझसे मिलने आता—दम्भी शैतान—और यह चाहता कि मैं ख़ुद उसके सामने बिछ जाऊं। जमकर खींच-तान चली। इतना अधिक तनाव बढ़ा कि अंजर-पंजर और भी ढीले हो गये। काफ़ी समय तक ऐसी ही स्थिति रही... लेकिन अंत में विजय मैंने ही प्राप्त की—उसने मेरे सामने घुटने टेके, तभी वह मुझे पा सका... लेकिन जैसे ही मैं उसकी हुई, फटे लत्ते की भांति उसने मुझे फेंक दिया। तब मैंने अनुभव किया कि मैं बूढ़ी हो गयी हूं... बड़ी कटु अनुभूति थी वह! बहुत ही कटु! मैं उसे चाहती थी—उस शैतान को—और वह मेरे मुंह पर ही मेरी हंसी उड़ाता था... नीच था वह! दूसरों के सामने भी मेरा मज़ाक़ उड़ाने से न चूकता—मुझसे यह छिपा नहीं था। ओह, कितना असह्य था यह सब! लेकिन वह मेरी आंखों के सामने रहता था और मैं उसे देख-देखकर ख़ुश होती रहती थी! और जब वह तुम रूसियों से लड़ने चला गया, तो मेरे लिये यह सहन करना मुश्किल हो गया। मैंने अपने को बहुत संभाला, लेकिन दिल पर क़ाबू न पा सकी... मैंने उसके पास जाने का निश्चय कर लिया। वार्सा के निकट एक जंगल में वह तैनात था।

"लेकिन जब मैं वहां पहुंची, तो मालूम हुआ कि वे तुम्हारे रूसी

सैनिकों के सामने टिक नहीं सके... वह युद्ध-बंदी बना लिया गया, थोड़ी ही दूर एक गांव में उसे क़ैद करके रखा गया है।

"'इसका मतलब यह कि अब मैं उससे कभी नहीं मिल सकूंगी,' मैंने मन में सोचा। लेकिन मैं उससे मिले बिना रह नहीं सकती थी। सो मैं इसके लिये कोशिश करने लगी—मैंने भिखारिन का भेस बनाया, लंगड़ी होने का ढोंग किया, अपने मुंह को ढक लिया और उस गांव की ओर चल दी, जहां वह बंदी था। सब कहीं सैनिक और कज़्ज़ाक थे... वहां रहना मुझे बहुत महंगा पड़ा! पोल क़ैदियों का मैंने पता लगाया और देखा कि उन तक पहुंचना अत्यंत कठिन है। लेकिन पहुंचे बिना मैं रह भी नहीं सकती थी। सो एक रात मैं रेंगती हुई उस जगह के पास पहुंची, जहां वे बंदी थे। तरकारियों की क्यारियों में रेंगती हुई मैं बढ़ रही थी, मैंने देखा कि एक संतरी मेरे रास्ते में खड़ा है... पोलों के गाने और बतियाने की ऊंची आवाज़ आ रही थी। वे मां मरियम के बारे में एक गीत गा रहे थे... मेरा आरकाडेक भी उनके साथ गा रहा था। और यह सोचकर मेरे दिल को बड़ा दुःख हुआ कि एक वह भी ज़माना था, जब लोग मेरे लिये रेंगते थे, और एक यह भी ज़माना आया है कि मैं एक आदमी के लिये—शायद अपनी मौत को गले लगाने—सांप की भांति रेंग रही हूं। संतरी के कान खड़े हो गये और वह आगे की ओर झुक आया। अब मैं क्या करूं? मैं खड़ी हो गई और उसकी ओर बढ़ चली। मेरे पास न तो छुरी थी, न कुछ और ही, बस, हाथ और ज़बान ही थी। मुझे अफ़सोस हुआ कि मैं अपने साथ छुरी लेकर क्यों नहीं चली। संतरी ने मेरी गरदन की सीध में अपनी संगीन तान ली। मैं फुसफुसायी—'ठहरो! मैं जो कहना चाहती हूं, पहले उसे सुन लो, अगर तुम्हारी छाती में हृदय हो! तुम्हें देने के लिये मेरे पास कुछ नहीं है, मैं तुमसे दया की भीख मांगती हूं...' उसने अपनी संगीन झुका ली और मेरी ही तरह फुसफुसाकर पूछा—'दफ़ा हो जाओ, जाओ यहां से! किस लिये आयी हो यहां?' और मैंने उसे बताया कि मेरा बेटा यहां बंदी है। 'मेरा बेटा है यहां, समझते हो न, सैनिक? आख़िर, तुम्हारे भी मां है, तुम भी किसी के बेटे हो! मेरी ओर देखो और सोचो कि मेरा भी तुम्हारे जैसा ही बेटा है और वह यहां बंदी है! मुझे नज़र भर उसे देख लेने दो। कौन जाने उसके भाग्य में मौत बदी हो... और यह भी हो सकता है कि कल तुम ही मारे जाओ...

क्या तुम्हारी मां आंसू नहीं बहायेगी? और अपनी मां को देखे बिना मरना क्या तुम्हारे लिये सहज होगा? मेरे बेटे के लिये भी यह सहज नहीं होगा। खुद उसपर और मुझपर—उसकी मां पर—दया करो!'

"ओह, जाने कितनी देर तक मैं उसे मनाती रही! पानी पड़ने लगा और हम भीग गये। हवा सनसना रही थी। वह कभी पीठ पर थपेड़े मारती थी, कभी छाती पर। और मैं कांपती हुई उस पत्थर-हृदय सैनिक के सामने खड़ी थी। वह 'नहीं!' की रट लगाये था। और हर वार, जब इस संवेदनहीन शब्द को मैं सुनती, तो आरकाडेक को देखने की इच्छा मेरे हृदय में और भी तीव्र हो उठती... बात करते करते मैंने सैनिक को आंखों ही आंखों में तौला। वह दुबला-पतला और नाटा आदमी था। खांसी ने उसे जकड़ रखा था। चुनांचे मैं उसके सामने ज़मीन पर गिर गयी, मिन्नत-समाजत करते-करते उसके घुटनों को बांहों में कसकर उसे ज़मीन पर पटक दिया। वह कीचड़ में जा गिरा। तब मैंने उसे औंधा कर दिया और कीचड़ में उसका मुंह ठूंस दिया, जिससे वह चिल्ला न सके। वह चिल्लाया नहीं, लेकिन मुझे अपनी पीठ पर से धकेलने की कोशिश में हाथ-पांव पटकता रहा। मैंने दोनों हाथों से उसका सिर पकड़ा और उसे कीचड़ में और भी गहरा धंसा दिया। उसका दम निकल गया... तब मैं बाड़े की ओर लपकी, जहां पोल गा रहे थे। 'आरकाडेक!' बाड़े की दरारों में से मैंने धीमी आवाज़ में पुकारा। बड़े समझदार होते हैं ये पोल, सो मेरी आवाज़ सुनकर उन्होंने गाना बंद नहीं किया। ठीक अपनी सीध में मुझे उसकी आंखें दिखाई दीं। 'क्या तुम बाहर आ सकते हो?' मैंने पूछा। 'हां, नीचे से रेंगकर आ सकता हूं,' उसने कहा। 'तो आओ।' और उनमें से चार बाहर रेंग आये। मेरा आरकाडेक भी उनमें था। 'संतरी कहां है?'—आरकाडेक ने पूछा। 'वह पड़ा है!'—मैंने कहा। और तब, एकदम दोहरे होकर, चुपचाप, वे खिसक चले। पानी अभी भी पड़ रहा था और हवा ज़ोरों से फुंकार रही थी। हम गांव के छोर पर पहुंचे और चुपचाप जंगल में बढ़ते गये। हम तेज़ी से डग भर रहे थे। आरकाडेक मेरा हाथ अपने हाथ में थामे था। उसका हाथ गर्म था और कांप रहा था। ओह, तब तक जब तक कि वह चुप रहा, उसके साथ चलना कितना अच्छा लग रहा था। वे मेरे आख़िरी क्षण थे—कभी न तृप्त होनेवाले मेरे जीवन के आख़िरी सुखद क्षण! अंत में हम एक चरागाह में पहुंचे और वहां रुक

गये। मैंने जो किया था, उसके लिये चारों ने मुझे धन्यवाद दिया। बहुत देर तक और बहुत कुछ कहा उन्होंने मुझे। मैं सुन रही थी और अपने प्यारे की ओर देख रही थी। अब वह मेरे साथ कैसे पेश आयेगा? उसने मुझे अपनी बांहों में कस लिया और भारी-भरकम शब्दों में कुछ कहा... शब्द तो मुझे याद नहीं आ रहे, लेकिन उनका आशय यह था कि अब वह मुझे—जिसने उसे क़ैद से छुड़ाया था—प्यार करेगा... और उसने घुटनों के बल मेरे सामने बैठकर मुस्कराते हुए कहा—'मेरी रानी!' उफ़, कितना फ़रेबी था वह, घिनौना कुत्ता! तब मैंने उसे एक ठोकर मारी और उसके मुंह पर भी एक तमाचा जड़ा होता, लेकिन वह उछलकर पीछे हटा और बच गया। वह मेरे सामने खड़ा था—बहुत ही भयावह और एकदम फक... अन्य तीनों भी वहां खड़े थे, भारी मुंह लिये और निर्वाक्। मैंने उन्हें देखा... और मुझे याद है कि एक भारी ऊब और उपेक्षा ने मुझे घेर लिया... मैंने उनसे कहा—'चले जाओ!' और उन्होंने—कुत्ते कहीं के—मुझसे कहा—'क्या तुम वापिस जाकर उन्हें ख़बर दोगी कि हम किस दिशा में भागे हैं?' देखा, कितने नीच थे वे! हां, तो वे चले गये। और मैं भी चली आयी... दूसरे दिन तुम्हारे सैनिकों ने मुझे पकड़ लिया, लेकिन उन्होंने मुझे अधिक नहीं रोका। तब मैंने अनुभव किया कि अब कहीं घोंसला बनाकर बैठना चाहिये। पक्षी का जीवन अतीत की वस्तु बन गया था। मेरा बदन भारी हो चला था, डैने कमज़ोर पड़ गये थे, पर झड़ने लगे थे... हां, उसका वक़्त आ गया था! वक़्त आ गया था! सो मैं गालीशिया चली गयी और वहां से दोब्रूजा। पिछले तीस साल से मैं यहां रह रही हूं। मेरा एक पति था—मोल्दावी। उसे मरे क़रीब एक साल हो गया। और मैं जी रही हूं! एकदम अकेली... नहीं, अकेली नहीं, उनके साथ..."

बुढ़िया ने लहरों की ओर हाथ हिलाया। अब वहां सब कुछ शांत था। जब-तब कोई संक्षिप्त और धोखा देनेवाली ध्वनि सुनाई देती और तुरंत ही खो जाती।

"वे मुझसे प्रेम करते हैं। मैं उन्हें तरह-तरह की कहानियां सुनाती हूं। उन्हें इसकी ज़रूरत है। वे अभी नौउम्र हैं... उनके साथ रहना मुझे भी अच्छा लगता है। मैं उन्हें देखती और सोचती हूं—एक समय था जब मैं भी उन्हीं जैसी थी... लेकिन मेरे दिनों में लोगों में ज़्यादा ताक़त और

जोश था और इसी कारण जीवन अधिक आनन्दपूर्ण और अधिक अच्छा होता था... हां!.."

वह चुप हो गयी। और मैं उसके पास बैठा हुआ, उदास हो उठा। वह ऊंघ रही थी, सिर हिलाकर कुछ बुदबुदा रही थी... शायद वह प्रार्थना कर रही थी।

समुद्र की ओर से एक बादल उठा—ख़ूब घना और काला, पर्वत-शृंखला की भांति कटावदार। यह शृंखला स्तेपी की ओर बढ़ रही थी। उसके छोर से बादलों के गोले टूटकर अलग हो जाते, तेज़ी से उससे आगे बढ़ते और एक के बाद एक सितारे की रोशनी छीनते जाते। समुद्र फिर से गरजने लगा था। हमसे कुछ ही दूर अंगूरों के बगीचे से चुम्बन, फुसफुसाहट और गहरी सांसें सुनाई दे रही थीं। स्तेपी में कोई कुत्ता रो रहा था...हवा में एक अजीब गंध भरी थी, जो नथुनों और रगों में एक गुदगुदी-सी पैदा करती थी। बादलों की परछाइयों के झुरमुट धरती पर रेंग रहे थे... कभी वे धुंधले पड़ जाते थे और कभी ख़ूब साफ़ दिखाई देने लगते थे... चांद अब धुंधली दूधिया आभा का एक गोल धब्बा मात्र रह गया था, जिसे कभी-कभी बादल का एक छोटा-सा टुकड़ा पूर्णतया ओझल कर देता था। स्तेपी विस्तार में, जो मानो अपने आंचल में कुछ छिपाकर अब काली और भयानक हो उठा था, ख़ूब दूर छोटी-छोटी नीली लपटें थरथरा रही थीं। वे इस तरह चमक उठतीं जैसे लोग किसी चीज़ की खोज में स्तेपी में घूमते हुए दियासलाइयां जलाते हों, जिन्हें हवा तुरंत बुझा देती हो। बहुत ही अजीब थीं ये नीली रोशनियां, परी-कथा की झलक दिखाती-सी।

"देख रहे हो तुम ये चिंगारियां?" इज़रगिल ने पूछा।

"वे छोटी-छोटी नीली रोशनियां?" स्तेपी की ओर इशारा करते हुए मैंने कहा।

"नीली? हां, ये वही हैं... सो वे अब भी उड़ती रहती हैं! ठीक! मैं तो अब उन्हें देख नहीं पाती। बहुत कुछ नहीं दिखाई देता अब मुझे।"

"कहां से निकल रही हैं ये?" मैंने बुढ़िया से पूछा।

उनके बारे में पहले भी मैं कुछ सुन चुका था, लेकिन बुढ़िया इज़र-गिल क्या कहेगी, मैं यह सुनना चाहता था।

"ये दान्को के जलते दिल से निकल रही हैं। बहुत दिन पहले एक हृदय मशाल की भांति जल उठा था... उसी से अब ये चिंगारियां निकलती हैं। मैं तुम्हें उसकी कहानी सुनाऊंगी... यह भी बहुत पुरानी कथा है... पुराना, सब कुछ पुराना है! देख रहे हो न, कितना कुछ था पुराने दिनों में। आजकल तो कुछ भी नहीं है—न वे आदमी हैं, न वे कारनामे हैं, न वे क़िस्से हैं—कुछ भी तो ऐसा नहीं है, जिसकी उन पुराने दिनों से तुलना की जा सके। ऐसा क्यों है? बताओ तो! नहीं बता सकते। क्या जानते हो तुम? नयी पीढ़ी के तुम सभी लोग क्या जानते हो? ओह-हो! अगर तुम अतीत की खोज-बीन करो, तो जीवन की सभी पहेलियों का जवाब मिल जाए... लेकिन तुम लोग नहीं करते और इसी लिये जीने का ढंग नहीं जानते। क्या मैं जीवन का रंग-ढंग नहीं देखती? सब कुछ देखती हूं, बेशक मेरी आंखें कमजोर हो गयी हैं। और मैं देखती हूं कि जीने के बजाय लोग अपना समूचा जीवन जीने की तैयारी करने में गंवा देते हैं। और जब इतना सारा समय हाथ से निकल जाने के बाद वे अपने को लुटा हुआ देखते हैं, तो भाग्य को कोसने लगते हैं। भाग्य भला इसमें क्या कर सकता है। हर आदमी ख़ुद ही अपना भाग्य है। आज दुनिया में हर तरह के लोग हैं, लेकिन मुझे उनमें शक्तिशाली नजर नहीं आते। वे कहां गये? और सुन्दर लोग भी दिन-दिन कम होते जा रहे हैं।"

बुढ़िया रुककर इस चिंता में डूब गयी कि शक्तिवान और सुन्दर लोग कहां गये। वह यह सोच रही थी और उसकी आंखें स्तेपी के अंधकार में एकटक जमी थीं, मानो वे वहां इस प्रश्न के उत्तर की खोज कर रही हों।

उसके कहानी शुरू करने तक मैं चुपचाप प्रतीक्षा करता रहा। मुझे डर था कि मेरे कुछ कहने से कहीं उसका ध्यान न भटक जाय।

और उसने कहानी सुनानी शुरू कर दी।

२

"बहुत, बहुत पहले एक जाति थी। वह जिस जगह रहती थी उसके तीन ओर अगम्य जंगल छाए थे और चौथी ओर घास के मैदान फैले थे। इस जाति के लोग तगड़े, बहादुर और ख़ुशमिजाज थे। लेकिन बुरे दिनों ने उन्हें आ घेरा। अन्य जातियों का वहां धावा हुआ और उन्होंने उन्हें

जंगल की गहराइयों में खदेड़ दिया। जंगल अंधकार में डूबा हुआ और दलदली था। कारण कि वह बहुत पुराना था और पेड़ों की शाखाएं ऐसे कसकर एक दूसरी के साथ गुंथी थीं कि आकाश की शक्ल तक नज़र नहीं आती थी और घनी हरियाली को चीरकर दलदल तक पहुंचने में सूरज की किरणों की सारी शक्ति चुक जाती थी। और जहां कहीं वे उस पानी तक पहुंचती थीं, वहां विषैली गंध उठने लगती थी, जिससे लोग मरने लगते। तब उस जाति की स्त्रियां और बच्चे रोने-पीटने और पुरुष चिंता में घुलने लगे। तब जंगल से निकल जाने के सिवा कोई चारा नहीं रहा, लेकिन बाहर निकलने के दो ही रास्ते थे – एक पीछे की ओर, जहां सशक्त और जानी दुश्मन थे, दूसरा – आगे की ओर, जहां दैत्यों के आकार के पेड़ उनका रास्ता रोके थे, जिनकी मजबूत शाखाएं एक दूसरी के साथ ख़ूब ज़ोर से गुंथी थीं और जिनकी पेंचदार टेढ़ी-मेढ़ी जड़ें दलदली कीचड़ में ख़ूब गहरी चली गयी थीं। ये पत्थरनुमा पेड़ दिन के धूसर अंधेरे में निर्वाक् और निश्चल खड़े रहते और रात को जब अलाव जलते, तो लोगों के गिर्द अपना घेरा और भी कस लेते और स्तेपी की उन्मुक्त गोद के अभ्यस्त लोग हमेशा दिन और रात, अंधेरे की दीवारों में बंद रहते जो मानो उन्हें कुचलने की क़सम खाये बैठी थीं। इस सबसे भी अत्यंत भयानक थी हवा, जो पेड़ों की चोटियों पर से सनसनाती और फुफकारती हुई गुजरती और ऐसा मालूम होता मानो समूचा जंगल उन लोगों के लिये किसी भयंकर शोक-गीत से गूंज उठा हो। वे एक बहादुर जाति के लोग थे और मृत्यु-पर्यन्त उन लोगों से लड़ते, जिन्होंने उन्हें एक बार हरा दिया था, लेकिन वे लड़ाइयों में अपने को मरने नहीं दे सकते थे, क्योंकि उनके अपने जीवन-आदर्श थे और अगर वे मर जाते, तो उनके जीवन-आदर्श भी उनके साथ ही नष्ट हो जाते। इसी लिये वे दलदल की ज़हरीली गंध और जंगल के घुटे-घुटे शोर में लम्बी रातों में बैठे हुए अपने भाग्य के बारे में सोचते रहते थे। सोच में डूबे बैठे होते, आग की लपटों की परछाइयां उनके इर्द-गिर्द मूक नृत्य में उछलती-कूदतीं और उन सब को ऐसा लगता कि ये निरी परछाइयां ही नृत्य नहीं कर रही हैं, बल्कि जंगल और दलदल की प्रेतात्माएं अपनी विजय का उत्सव मना रही हैं... लोग ऐसे बैठे-बैठे सोचते रहते। और आदमी को परेशान करनेवाले विचार जितना अधिक निचोड़ते हैं, उतना और कोई चीज नहीं, न श्रम, न स्त्रियां। लोग चिंता

से दुबलाने लगे। भय का उनके हृदयों में उदय हुआ और उनकी मजबूत बांहों को उसने जकड़ लिया। विषैली गंध के कारण मरे लोगों के शवों पर स्त्रियों का विलाप और भय से निःशक्त हुए जीवितों पर उनका रोना-कलपना आतंक पैदा करता। और इस तरह जंगल में कायरतापूर्ण शब्द भनभनाने लगे — पहले धीमे और दबे-दबे और फिर अधिक-अधिक खुलकर... अंत में वे दुश्मन के पास जाकर उसे अपनी आज़ादी भेंट करने की सोचने लगे। मृत्यु के भय ने उन्हें इतना डरा दिया था कि हर कोई गुलाम की भांति जीवन बिताने को तैयार हो गया था... लेकिन तभी दान्को आया और उसने उन सब की रक्षा की।"

दान्को के जलते हुए हृदय की कहानी बुढ़िया शायद अक्सर सुनाती थी। बैठे हुए गले से चरचराती आवाज़ में जब वह गाती हुई-सी इसे सुना रही थी, तो मुझे ऐसा लगा जैसे मैं उस जंगल की गूंज सुन रहा हूं, जिसकी गहराइयों में वे अभागे लोग विषैली गंध से मर रहे थे...

"दान्को उन्हीं में से एक सुन्दर जवान था। सुन्दर लोग हमेशा साहसी होते हैं। और उसने अपने साथियों से कहा —

"'राह की चट्टानें सोचने से नहीं हट जातीं। जो कुछ नहीं करते, वे कुछ नहीं पाते। सोच और परेशानी में हम अपनी शक्तियां क्यों बरबाद कर रहे हैं? उठो, जंगल को चीरते हुए हम आगे बढ़ चलें — आख़िर कहीं न कहीं तो इसका अंत होगा ही — हर चीज़ का अंत होता है। चलो, आगे बढ़ें!'

"लोगों की आंखें उसकी ओर उठीं और उन्होंने देखा कि वह उनमें सबसे श्रेष्ठ है, क्योंकि उसकी आंखें शक्ति और जीवन से दमक रही थीं।

"'हमारी अगुवाई करो!' उन्होंने कहा।

"और उसने उनकी अगुवाई की।"

बुढ़िया बोलते-बोलते रुक गई और स्तेपी के उस पार देखने लगी। अंधकार काजल की भांति अधिकाधिक गहरा और घना होता जा रहा था। ख़ूब दूर दान्को के जलते हुए हृदय की चिंगारियां रह-रहकर चमक उठतीं — क्षण भर को नीले आकाश-कुसुमों की भांति।

"सो दान्को उन्हें ले चला। वे उत्साह से उसके साथ चले, क्योंकि उनका उसमें विश्वास था। रास्ता बड़ा विकट था! अंधेरा था, क़दम-

क़दम पर दलदल मुंह बाए थी, जो लोगों को निगल जाती थी, और पेड़ मजबूत दीवारों की भांति राह रोक लेते थे। उनकी शाखाएं कसकर एक दूसरी में गुंथी थीं, सांप की भांति हर तरफ़ फैली हुई थीं उनकी जड़ें। हर क़दम आगे बढ़ने के लिये उन्हें अपने रक्त और पसीने से क़ीमत चुकानी पड़ती। देर तक वे चलते रहे... जंगल अधिक घना होता गया और लोगों की शक्ति अधिक क्षीण पड़ती गयी और तब वे दान्को के ख़िलाफ़ भुनभुनाने लगे। कहने लगे कि वह निरा लड़का और अनुभवहीन है और जाने हमें कहां ले आया है। लेकिन वह उनके आगे-आगे चलता रहा। उसके मन में किसी तरह की शंका और चेहरे पर शिकन नहीं थी।

"लेकिन एक दिन तूफ़ान ने जंगल को घेर लिया और पेड़ों में आतंकपूर्ण सनसनाहट दौड़ गयी। और तब इतना घना अंधेरा छा गया कि लगता था जैसे वे तमाम रातें एकसाथ यहां जमा हो गयी हों, जो जंगल के जन्म से लेकर अब तक बीती थीं। और वे छोटे-छोटे लोग भीमाकार पेड़ों तथा तूफ़ानी गरज के बीच चलते रहे। वे चलते जाते, भीमाकार पेड़ चरचराते, भयंकर गीत-से गाते और पेड़ों की चोटियों के ऊपर बिजली चमकती, क्षण भर के लिये एक ठंडी नीली रोशनी जंगल में कौंध उठती और फिर उतनी ही तेज़ी से वह प्रकट होती। लोगों के हृदय भय से कांप उठते। बिजली की ठंडी रोशनी में पेड़ जीते-जागते मालूम होते—अपनी गठीली लम्बी बांहों को फैलाते और उन्हें गूंथकर घना जाल बिछाते-से, ताकि ये लोग, जो अंधकार की क़ैद से छूटने की कोशिश कर रहे हैं, उसमें फंसकर रह जाएं। शाखाओं के घटाटोप में से भी कोई ठंडी, काली और भयानक चीज़ उनकी ओर घूर रही थी। बड़ा ही बीहड़ मार्ग था वह। और लोग, जो थककर चूर-चूर हो गये थे, हिम्मत हार बैठे। लेकिन शर्म के मारे वे अपनी कमज़ोरी स्वीकार न करते और अपना गुस्सा तथा खीझ दान्को पर उतारते, जो कि उनके आगे-आगे चल रहा था। वे उसपर आरोप लगाते कि वह उनकी अगुवाई करने की योग्यता नहीं रखता—तो ऐसी हालत थी!

"वे रुक गये और उस कांपते हुए अंधेरे और जंगल की विजयोन्मत्त गरज के बीच थकान तथा ग़ुस्से से बेहाल उन लोगों ने दान्को को भला बुरा कहना शुरू किया।

"'तुम कमीने और दुष्ट हो! तुम्हीं ने हमें इस मुसीबत में फंसाया है,' उन्होंने कहा, 'यहां लाकर तुमने हमारी जान सोख ली और इसके लिये तुम्हें अब अपनी जान से हाथ धोना पड़ेगा!'

"दान्को ने उनकी ओर देखा और चिल्लाकर बोला—

"'तुमने कहा—'हमारी अगुवाई करो,' और मैंने तुम्हारी अगुवाई की। मुझमें तुम्हारी अगुवाई करने की हिम्मत है और इसी लिये मैंने इसका बीड़ा उठाया। लेकिन तुम? तुमने अपनी मदद के लिये क्या किया? चलते ही थे और अधिक लम्बे रास्ते के लिये अपनी शक्ति सुरक्षित नहीं रख पाये! भेड़ों के रेवड़ की भांति तुम केवल चलते ही रहे!'

"उसके इन शब्दों ने उन्हें और भी ज्यादा भड़का दिया।

"'हम तुम्हारी जान ले लेंगे! तुम्हारी जान ले लेंगे!' वे चीख़ उठे।

"जंगल गूंज रहा था, गूंज रहा था, उनकी चीखों को प्रतिध्वनित कर रहा था। बिजली अंधेरे की चिंदियां बिखेर रही थी। दान्को की नज़र उनपर टिकी थी, जिनके लिये उसने इतना कष्ट उठाया था, और उसने देखा कि वे दरिन्दे बने हुए हैं। एक अच्छी-ख़ासी भीड़ उसे घेरे थी, लेकिन उसके चेहरों पर सद्भावना का कोई चिन्ह नज़र नहीं रहा था। और उनसे किसी तरह की दया की उम्मीद नहीं की जा सकती थी। तब ग़ुस्से की एक आग-सी उसके हृदय में धधकी, लेकिन लोगों के प्रति दयाभाव ने उसे शान्त कर दिया। वह लोगों को चाहता था और उसे डर था कि उसके बिना वे नष्ट हो जायेंगे। उन्हें बचाने और सुगम पथ पर उन्हें ले जाने की एक महती आकांक्षा की ज्योति हृदय में जल उठी और इस महान ज्योति की तेज लपटें उसकी आंखों में नाचने लगीं... और यह देखकर लोगों ने सोचा कि वह आपे से बाहर हो गया है और इसी कारण उसकी आंखों में आग की प्रखर लौ थिरक रही है। वे भेड़ियों की भांति चौकस हो गये—इस आशंका से कि वह अब उनपर टूट पड़ेगा और उसके इर्द-गिर्द और भी निकट आ गये ताकि दान्को को दबोच लें और मार डालें। उसने उनके इस इरादे को भांप लिया, जिससे उसके हृदय की ज्योति और भी उज्ज्वल हो उठी, क्योंकि उनके इस विचार से उसका दिल तड़प उठा था।

"और जंगल अपना शोकपूर्ण गीत गाता जा रहा था, बादल गरजते जा रहे थे और ज़ोर से पानी बरसता जा रहा था...

"'लोगों के लिये मैं क्या करूं?' दान्को की आवाज़ बादलों की गरज को बेधती हुई गूंज उठी।

"और सहसा उसने अपना वक्ष चीर डाला, अपने हृदय को नोचकर बाहर निकाला और उसे अपने सिर से ऊंचा उठा लिया।

"वह सूरज की भांति दमक रहा था, बल्कि उसका प्रकाश सूरज से भी ज़्यादा तेज़ था। जंगल की गरज शान्त हो गयी और इस मशाल का – मानवजाति के प्रति महान प्रेम की इस मशाल का – आलोक फैल चला। प्रकाश से अंधकार के पांव उखड़ गये और वह कांपता-थरथराता दलदल के सड़े-गले गर्त्त में कूदकर जंगल की अतल गहराइयों में समा गया। और लोग आश्चर्य के मारे पत्थर की मूर्ति बने वहीं खड़े रह गये।

"'बढ़े चलो!' दान्को ने चिल्लाकर कहा और अपने जलते हुए हृदय को ख़ूब ऊंचा उठाकर लोगों का पथ जगमगाता हुआ तेज़ी से आगे बढ़ चला।

"लोग, मंत्रमुग्ध-से उसके पीछे हो लिये। तब जंगल एक बार फिर भुनभुनाने और अपनी शिराओं को अचरज से हिलाने लगा। लेकिन उसकी यह भुनभुनाहट दौड़ते हुए लोगों के पांवों की आवाज़ में खो गयी। लोग अब साहस और तेज़ी के साथ भागते हुए आगे बढ़ रहे थे – जलते हुए हृदय का अद्भुत आलोक उन्हें अनुप्राणित कर रहा था। लोग मरते तो अब भी थे, लेकिन आंसुओं और शिकवा-शिकायत के बिना। दान्को सबसे आगे बढ़ा जा रहा था और उसका हृदय दहकता ही जा रहा था, दहकता ही जा रहा था।

"और सहसा जंगल ने उनके लिये रास्ता बना दिया, रास्ता बना दिया और ख़ुद पीछे रह गया – मूक और घना। और दान्को तथा वे सभी लोग सूरज़ की धूप और बारिश से धुली हवा के सागर में हिलोरें लेने लगे। तूफ़ान अब उनके पीछे, जंगल के ऊपर था, जबकि यहां सूरज सोना बिखेर रहा था, स्तेपी राहत की सांस ले रही थी, वर्षा के मोतियों में घास चमक रही थी और नदी सोने की तरह चमचमा रही थी... सांझ का समय था और छिपते हुए सूरज की किरणों में नदी वैसी ही लाल लग रही थी जैसी लाल थी गर्म ख़ून की वह धारा, जो दान्को की फटी छाती से बह रही थी।

"वीर दान्को ने अन्तहीन स्तेपी विस्तार पर नज़र डाली, स्वाधीन धरती पर आनन्द से छलछलाती नज़र, और गर्व से हंसा। फिर ज़मीन पर गिरा और मर गया।

"लोग तो ख़ुशी में मस्त और आशा से ओतप्रोत थे। वे उसे मरते हुए और यह भी नहीं देख पाये कि उसका वीर हृदय उसके मृत शरीर के पास पड़ा अभी भी जल रहा है। सिर्फ़ एक सतर्क आदमी की ही उसकी ओर दृष्टि गयी और उसने भयवश उस गर्वीले हृदय को रौंद डाला... चिंगारियों की एक फुहार-सी उसमें से निकली और वह बुझ गया..."

"यही वजह है कि स्तेपी में तूफ़ान के पहले नीली चिंगारियां दिखाई देती हैं।"

बुढ़िया की सुन्दर कहानी का अंत होते न होते स्तेपी में भयानक निस्तब्धता छा गयी थी। ऐसा मालूम होता था मानो वीर दान्को की शक्ति से वह भी आतंकित हो उठी हो—जिसने लोगों के लिये ख़ुद अपने हृदय की मशाल जलायी और बदले में किसी भी चीज़ की इच्छा किये बिना मर गया। बुढ़िया ऊंघ चली। मैं उसकी ओर देखता हुआ सोच रहा था कि जाने अभी कितनी और कहानियों तथा स्मृतियों का भंडार है उसके पास? और मैं सोच रहा था दान्को के महान जलते हुए हृदय के बारे में और इतनी सुन्दर तथा प्रभावपूर्ण लोक-कथाओं को जन्म देनेवाली मानवीय कल्पना के बारे में।

इज़रगिल अब गहरी नींद में सो गयी थी। हवा के एक झोंके ने उन चिथड़ों को हटाकर अलग कर दिया था, जो उसकी हड़ियल छाती को ढके थे। मैंने उसके बूढ़े शरीर को ढक दिया और उसकी बग़ल में लेट गया।

स्तेपी अंधेरे से घिरी और निस्तब्ध थी। आकाश में बादल तैरते जा रहे थे, धीरे-धीरे, उदास-उदास... सागर मर्मर-ध्वनि कर रहा था—दबी-दबी और दर्दभरी...

१८९५

कैसे ऊब मिटे ?

एक भीमाकार सांप की भांति फुंकारती और धुवें के घने स्लेटी बादल उगलती मुसाफ़िर गाड़ी अन्तहीन स्तेपी में गेहूं की पकी फ़सलों के पीले सागर के बीच गुम हो गई। धुवां उत्तप्त वायु में विलीन हो गया और विक्षुब्ध खड़खड़ाहट भी गुम हो गई जिसने कुछ क्षणों के लिये इन विस्तृत और सूने मैदानों की निश्चल निस्तब्धता को भंग कर दिया था और जिनके बीच स्थित एक छोटे-से रेलवे स्टेशन का एकाकीपन हृदय में अत्यन्त उदास भावों का संचार करता था।

और जब गाड़ी की कर्कश, मगर फिर भी जानदार खड़खड़ भी आकाश के निर्मल गुम्बज में विलीन हो गई तब वह स्टेशन फिर से उसी बोझिल निस्तब्धता में डूब गया।

स्तेपी थी सुनहरी-पीली और आकाश था उजला-नीला। दोनों के दोनों ही सीमाहीन। इतनी विस्तृत व्यापकता के बीच स्टेशन की छोटी-छोटी कत्थई इमारतें ऐसे लगती थीं मानो किसी कल्पनाहीन चित्रकार द्वारा बड़ी मेहनत से बनाए गए उदास चित्र पर तूलिका के आकस्मिक धब्बे पड़ गए हों।

प्रतिदिन दोपहर के बारह और सांझ के चार बजे स्तेपी के गर्भ में से गाड़ियां प्रकट होतीं और ठीक दो मिनट के लिये स्टेशन पर आकर रुक जातीं। ये चार मिनट ही स्टेशन पर मुख्य, बल्कि सच पूछो तो एकमात्र, बहलाव का साधन थे। ये चार मिनट ही स्टेशन कर्मचारियों के जीवन में नये अनुभवों-संस्मरणों के स्रोत थे।

प्रत्येक गाड़ी में तरह-तरह के कपड़ों में तरह-तरह के लोग होते थे। क्षण-भर के लिए वे दिखाई देते; गाड़ी की खिड़कियों पर टिके, अधीर

श्रौर थके हुए उदासीन चेहरों की एक उड़ती सी झलक मिलती, फिर घंटी की टनटन होती, सीटी बज उठती, श्रौर खटाखट करती गाड़ी उन्हें स्तेपी में, दूरस्थ नगरों में ले जाती, जहां जीवन की भारी रेल-पेल थी।

स्टेशन के कर्मचारी उत्सुकता से इन चेहरों को ताकते, श्रौर जब गाड़ी चली जाती तो एक दूसरे को श्रपनी उड़ती नजर में होनेवाले श्रनुभव बताते। उनके चारों श्रोर निस्तब्ध स्तेपी थी, सिर के ऊपर उदासीन श्राकाश था श्रौर उनके हृदयों में उन लोगों के प्रति दबी-घुटी ईर्ष्या होती थी जो प्रतिदिन उनके पास से गुजरते हुए कहीं श्रागे चले जाते थे श्रौर उन्हें यहीं, मानो जीवन भर के लिये इसी निर्जनता में निष्कासितों की तरह छोड़ जाते थे।

तो लीजिये प्लैटफ़ार्म पर खड़े वे स्टेशन से बिदा हुई गाड़ी के काले फ़ीते को गेहूं के सुनहरी सागर में विलीन होते देख रहे हैं श्रौर जीवन की इस क्षणिक झांकी से श्रभिभूत होकर मौन हैं।

क़रीब-क़रीब सभी यहां मौजूद हैं—स्टेशन-मास्टर—मजबूत काठी, मिलनसार, सुनहरे बाल, बड़े कज़ाक गलमुच्छे; उसका सहायक—नुकीली दाढ़ी श्रौर लाल बालों वाला युवक; स्टेशन का चौकीदार लुका—नाटा क़द, चपल श्रौर चालाक श्रौर एक स्विचमैन गोमोज़ोव—चुप्पा श्रौर हट्टा-कट्टा श्रादमी, चेहरे पर लहराती दाढ़ी।

स्टेशन-मास्टर की पत्नी स्टेशन के दरवाजे की बग़ल में एक बेंच पर बैठी है। नाटा क़द, मोटी, थलथल। गर्मी से श्रत्यधिक परेशान। उसकी गोदी में एक बच्चा सोया है श्रौर बच्चे का चेहरा भी उतना ही गोल-मटोल श्रौर लाल है जितना कि उसकी मां का।

गाड़ी एक ढाल से नीचे उतरती ऐसे ग़ायब हो गई जैसे उसे धरती ने निगल लिया हो।

स्टेशन-मास्टर ने श्रपनी पत्नी से पूछा—

"सोन्या, क्या सामोवार तैयार है?"

"हां," उसने धीमी श्रौर श्रलसाई श्रावाज में जवाब दिया।

"लुका, सुनो तुम जरा यह सब साफ़ कर दो—प्लैटफ़ार्म श्रौर पटरियों पर झाड़ू दे डालो—देखा न, कितनी गंदगी वे फैला गए हैं।"

"मुझे मालूम है, मत्वेई येगोरोविच..."

"हां... तो, निकोलाई पेत्रोविच, चाय पी जाए?"

"बदस्तूर!" सहायक ने जवाब दिया।

दोपहर की गाड़ी के बाद मत्वेई येगोरोविच अपनी पत्नी से पूछता—

"सोन्या, खाना तैयार है क्या?"

इसके बाद वह लुका को वही लगा-बंधा आदेश देता, और अपने सहायक से, जो उसके साथ भोजन करता था, कहता—

"हां तो, भोजन कर लें?"

"बदस्तूर..." काफ़ी समझदारी के साथ उसका सहायक जवाब देता।

प्लेटफ़ार्म को छोड़ वे कमरे में चले जाते जिसमें फूल-पौधों की भरमार और फ़र्नीचर की कमी थी। कमरे में खाना पकाने और पोतड़ों की गंध बसी रहती और वहां वे मेज़ के गिर्द बैठकर उन बातों की चर्चा करते, जिनकी गाड़ी आने के समय झलक मिली होती।

"निकोलाई पेत्रोविच, सेकंड क्लास के डिब्बे में पीले कपड़े पहने, काले बालोंवाली जो श्यामा बैठी थी, उसे देखा तुमने? बड़ी जानलेवा चीज़ थी वह!"

"कुछ बुरी नहीं थी। लेकिन कपड़े बेहूदा पहने थी, रुचिहीन।"

उसकी टिप्पणियां हमेशा संक्षिप्त और नपी-तुली होती थीं। वह अपने को पढ़ा-लिखा और जानने-समझनेवाला आदमी मानता था। हाई स्कूल पास कर चुका था। काली जिल्द की एक नोटबुक वह अपने पास रखता था जिसमें उसने जाने-माने लोगों के कथन लिख छोड़े थे। संयोगवश कोई पुस्तक या समाचारपत्र हाथ लग जाने पर यदि उसमें कोई ऐसी बात नज़र आती तो उसे भी वह अपनी नोटबुक में टांक लेता। स्टेशन-मास्टर काम के क्षेत्र से बाहर अन्य तमाम मामलों में उसका पांडित्य स्वीकार करता था और जो कुछ भी वह कहता था, बड़े ध्यान से सुनता था। निकोलाई पेत्रोविच की नोटबुक में अंकित बुद्धिकणों का उसपर ख़ास प्रभाव पड़ता था और उन्हें सुनकर उसका सरल हृदय आनन्द-विभोर हो उठता था। काले बालोंवाली स्त्री की पोशाक के बारे में उसकी टिप्पणी ने उसके दिमाग़ में सवाल पैदा किया।

"क्यों," उसने पूछा—"क्या श्यामा को पीले कपड़े नहीं पहनने चाहिए?"

"मैं रंग की नहीं, कपड़ों के फ़ैशन की बात कर रहा था," कांच की तश्तरी से अपनी रकाबी में बड़ी सफ़ाई के साथ कुछ मुरब्बा डालते हुए निकोलाई पेत्रोविच ने अपनी बात स्पष्ट की।

"फ़ैशन वह दूसरी बात है," स्टेशन-मास्टर सहमत हो गया।

उसकी पत्नी भी बातचीत में शामिल हो गई। कारण कि इस विषय से उसका भी वास्ता था और समझ भी सकती थी। लेकिन चूंकि इन लोगों के दिमाग़ों का बहुत निखार नहीं हुआ था सो उनकी बातचीत घिसट रही थी और उनकी भावनाओं को विरले ही छू पाती थी।

खिड़कियों में से स्तेपी दिखाई दे रही थी – निस्तब्धता से मुग्ध और अपनी निस्संग निश्चलता की गरिमा में डूबा हुआ आकाश।

लगभग हर घंटे बाद माल-गाड़ी यहां से गुजरती। इन सब गाड़ियों के कर्मचारी पुराने जाने-पहचाने लोग थे। उनके उनींदे-से गार्ड उदास स्तेपी में अन्तहीन चक्कर लगाते-लगाते मुरझा गये थे। हां कभी-कभी वे मार्ग में हुई दुर्घटनाओं की कहानियां सुनाते – अमुक जगह पर एक आदमी कटकर मर गया। या अपने धंधे को लेकर बतियाते – अमुक को जुरमाना देना पड़ा और अमुक का तबादला कर दिया गया। ऐसे समाचारों पर किसी तरह का बहस-मुबाहसा न होता, उन्हें तो वैसे ही निगल लिया जाता जैसे कोई पेटू किसी दुर्लभ और जायकेदार पकवान को हड़प जाता है।

सूरज आकाश से धीरे-धीरे स्तेपी के सिरे की ओर रेंगता जाता और जब वह धरती के छोर को लगभग छू लेता, तो गहरे लाल रंग का हो जाता। उसकी लाल-सी आभा से स्तेपी रंग जाती और हृदय को कचोटती हुई एक अस्पष्ट-सी आकांक्षा का संचार होता, – इस निर्जनता से पिंड छुड़ाने, इससे दूर भागने के लिये हृदय ललक उठता। अन्त में सूरज क्षितिज को छूता और खोया-सा उसके भीतर या उसकी ओट में समा जाता। इसके बाद देर तक सूर्यास्त के उजले रंगों का मानो धीमा-धीमा संगीत आकाश में लहराता रहता, लेकिन यह रंग-छटा उत्तरोत्तर धीमी पड़ती जाती – उष्ण तथा मूक झुटपुटा छाता जाता। तारे निकल आते, कांपते-थरथराते, मानो धरती की निर्जनता से भयभीत हों।

स्तेपी तो जैसे धुंधलके में सिमटती-सिकुड़ती मालूम होती। रात की परछाइयां दबे पांव स्टेशन को चारों ओर से घेर लेतीं। इसके बाद रात उतर आती – काली और उदास।

स्टेशन पर बत्तियां जल जातीं। अन्य सबसे ऊंची और चमकीली होती थी सिगनल की हरी बत्ती। उसके चारों ओर होता था अंधेरा और ख़ामोशी।

जब-तब घंटी टनटनाती और आती हुई गाड़ी की सूचना देती। जल्दी-जल्दी बजती घंटी की तिरती हुई टनटन स्तेपी में फैलती और शीघ्र ही उसके गर्भ में विलीन हो जाती।

टनटन के कुछ ही देर बाद अंधेरे शून्य में से एक लाल रोशनी प्रकट होती और अंधेरे में लिपटे एकाकी स्टेशन की ओर लपकती गाड़ी की गड़गड़ाहट स्तेपी की निस्तब्धता को छितरा देती।

स्टेशन के इस छोटे-से समाज के नीचे तबक़े के लोगों का जीवन यहां के रईसों से भिन्न था। चौकीदार लुका अपनी इस आकांक्षा से निरन्तर संघर्ष करता कि उड़कर अपनी पत्नी और भाई के पास पहुंच जाए जो स्टेशन से चार-पांच मील दूर एक गांव में रहते थे। उसकी वहां घर-गृहस्थी थी, जैसा कि वह शांत और चुप्पे स्विचमैन गोमोज़ोव से अपनी जगह ड्यूटी बजाने की चिरौरी करते समय कहा करता था।

"घर-गृहस्थी" की बात सुनकर गोमोज़ोव हमेशा गहरी सांस खींचता और लुका से कहता –

"अच्छा, जाओ, यह सही है कि घर-गृहस्थी की देखभाल तो होनी ही चाहिये..."

लेकिन दूसरा स्विचमैन – अफ़ानासी यागोद्का, जो पके बालों की खूंटियों से घिरे गोल-मटोल लाल चेहरे वाला गुस्सैल और उपहासप्रिय पुराना फ़ौजी था, – लुका की बात का विश्वास न करता।

"घर-गृहस्थी," वह उसे कोंचता – "पत्नी! समझ में आनेवाली बात है... और तुम्हारी वह पत्नी, – वह विधवा है क्या? या उसका पति लाम पर गया है?"

"वाह रे, चिड़ियों के लाट!" लुका घृणा से फुंकार उठता।

वह यागोद्का को चिड़ियों का लाट इसलिये कहता था कि बूढ़े फ़ौजी को पंछियों का बड़ा शौक़ था। उसके छोटे-से कोष्ठ में और उसके बाहर छोटे-बड़े पिंजरे लटके थे और दिन भर पक्षियों का कलरव गूंजता रहता था। बटेर, जिन्हें फ़ौजी ने बंदी बना रखा था, लगे-बंधे स्वर में लगातार

"चिप-चिरीप" का राग अलापते, मैनायें लम्बे भाषण बुदबुदातीं, बहुरंगे छोटे पक्षी निरन्तर कूकते-चहकते, गाते, सीटी बजाते और बूढ़े सैनिक के एकाकी जीवन में आह्लाद भरते रहते। वह अपना समूचा ख़ाली समय उन्हीं के साथ बिताता था। पंछियों की तो वह बड़े चाव और लगन से देख-भाल करता, मगर स्टेशन के अपने संगी-साथियों में उसकी ज़रा भी दिलचस्पी नहीं थी। वह लुका को सपोलिया और गोमोजोव को कत्साप कहता था, उनके मुंह पर उन्हें स्त्रियों के घाघरे का पिस्सू करार देता था और यह कहता था इसके लिये उनकी मरम्मत की जानी चाहिये।

लुका उसकी बातों पर बहुत कम ध्यान देता था, लेकिन अगर वह हद से बढ़ जाता तो लुका देर तक उसकी ख़ूब चिन्दियां बिखेरता—

"छावनी के चूहे, आधे कुतरे हुए शलजम! कर्नल की बकरियों के ढोलची, तुम समझ ही क्या सकते हो? मेंढकों का शिकार और कम्पनी की गोभियों की रखवाली करने के सिवा तुमने और किया ही क्या है? तुम कौन होते हो दूसरों को भला-बुरा बतानेवाले? जाओ, अपने बटेरों से सिर मारो, चिड़ियों के लाट!"

यागोद्का चुपचाप यह सब सुनता, इसके बाद स्टेशन-मास्टर के पास जाकर उसकी शिकायत करता और स्टेशन-मास्टर, ग़ुस्से से यह कहकर कि ऐसी छोटी-मोटी बातों के लिये मुझे परेशान न किया जाये, उसे बाहर निकाल देता। तब यागोद्का फिर लुका की खोज करता और ख़ुद अपनी ज़बान से उसपर कोड़े बरसाता—शांत भाव से, बिना अपने दिमाग़ का सन्तुलन खोए। वह ऐसे वज़नदार गन्दे शब्दों की बौछार करता कि लुका थूककर वहां से भाग खड़ा होता।

फ़ौजी के भला-बुरा कहने पर गोमोजोव लंबी सांस भरता और झेंपते हुए अपनी सफ़ाई पेश करता।

"हम भी क्या करें? इससे कोई छुटकारा नहीं... माना यह शैतानी है... लेकिन फिर भी यही अच्छा है कि न तो दूसरों पर उंगली उठाओ और तब न कोई तुमपर ही उंगली उठायेगा..."

एक दिन फ़ौजी ने इसके जवाब में व्यंग्य से हंसते हुए कहा—

"ढूंढ़ निकाला तुमने सब रोगों का एक नुसख़ा! 'उंगली न उठाओ! उंगली न उठाओ!' वाह, अगर लोग दूसरों पर उंगली न उठाएं तो उनके जीवन में फिर चर्चा करने के लिये रह ही क्या जाएगा..."

स्टेशन-मास्टर की पत्नी के अलावा स्टेशन पर एक स्त्री और थी। यह थी बावर्चिन आरीना। चालीस के क़रीब उसकी उम्र थी, बदसूरत और थलथल, लटकती हुई छातियां, हमेशा गंदी तथा औघड़। वह भचककर चलती और उसके चेचकरू चेहरे पर छोटी-छोटी, सहमी-सी आंखें टिमटिमातीं। उसके बेढब आकार-प्रकार से दासता और दब्बूपन झलकता। उसके मोटे होंठ हमेशा इस तरह जुड़े रहते, जैसे वह हर किसी से माफ़ी मांग रही हो, जैसे वह लोगों के पैरों में लोटना चाहती हो और रोने की हिम्मत न कर पाती हो। आठ महीने से उसकी ओर ख़ास ध्यान दिए बिना गोमोज़ोव स्टेशन पर रह रहा था। आते-जाते नज़र पड़ जाती तो वह उसका अभिवादन करता, वह अभिवादन का जवाब देती, कभी-कभी दो-चार शब्दों का आदान-प्रदान भी हो जाता और इसके बाद दोनों अपना-अपना रास्ता नापते। लेकिन एक दिन गोमोज़ोव स्टेशन-मास्टर के रसोईघर में गया और आरीना से कुछ कमीज़ें सी देने का उसने अनुरोध किया। वह राज़ी हो गई और कमीज़ों के सिल जाने पर वह ख़ुद उन्हें लेकर उसके पास गई।

"धन्यवाद," गोमोज़ोव ने कहा—"तीन कमीज़ें, दस कोपेक प्रति कमीज़—अर्थात तीस कोपेक का मैं देनदार हूं। ठीक है न?"

"ठीक ही है..." आरीना ने कहा।

गोमोज़ोव कुछ सोचने लगा और देर तक ख़ामोश रहा।

"तुम किस गुबेर्निया की रहनेवाली हो?" अन्त में उसने इस स्त्री से पूछा जिसकी आंखें इस दौरान उसकी दाढ़ी पर ही जमी रही थीं।

"रियाज़ान"... उसने कहा।

"काफ़ी दूर जगह है! यहां कैसे भटक आई?"

"ऐसे ही... मैं एकदम अकेली हूं... मेरा अपना कोई नहीं है..."

"तब तो आदमी और भी दूर—कहीं भी—भटक सकता है..." गोमोज़ोव ने उसांस भरी।

और फिर दोनों देर तक चुप रहे।

"मुझे ही देखो। मैं निज्नी नोवगोरोद के, सेरगाच उयेज़्द का रहनेवाला हूं," गोमोज़ोव ने कहना शुरू किया—"मैं भी अकेला हूं। दम का दम। लेकिन कभी मेरा घर-बार था, बीवी थी... बच्चे थे। दो बच्चे। बीवी हैज़े से मर गई, बच्चे भी चल बसे... और मैं ... मैं उनके शोक

में घुलने लगा। बाद में मैंने फिर नये सिरे से जमना चाहा, लेकिन कुछ बना नहीं। मोटर के पेच ढीले हो गये थे, इसलिये वह चली नहीं, सो मैं चल पड़ा अपने रास्ते से भटककर, जहां भी मेरे पांव मुझे ले जाएं। दो साल से भी अधिक से यही चक्कर चल रहा है..."

"अपना कहने लायक़ कोई ठिकाना न हो, यह बुरा है," आरीना ने धीमे-से कहा।

"बहुत बुरा! क्या तुम विधवा हो?"

"कुंवारी हूं..."

"हटाओ भी!" अपने अविश्वास को छिपाने का जरा भी प्रयत्न न करते हुए गोमोज़ोव ने कहा।

"क़सम ख़ुदा की, कुंवारी हूं," आरीना ने फिर बल देते हुए कहा।

"तो अब तक शादी क्यों नहीं की?"

"मुझसे कौन शादी करता? मेरे पास कुछ नहीं है... फोकट में भला कौन शादी करता है? तिसपर मेरा चेहरा भी बहुत भोंड़ा है।"

"हां-आं," गोमोज़ोव स्वर को लम्बा खींचते और अपनी दाढ़ी को सहलाते हुए उत्सुकता से उसकी ओर ताकता रहा। फिर उसने पूछा कि उसका वेतन क्या है।

"ढाई रूबल..."

"हुंह। तो मुझे तुम्हें तीस कोपेक देने हैं न? देखो, आज रात को आकर ले जाना... दस बजे के क़रीब,—ठीक है? तुम्हारे पैसे दे दूंगा... साथ-साथ चाय पी लेंगे और अपनी ऊब मिटाने के लिये कुछ गप-शप करेंगे... हम एकाकी जीव हैं—दोनों के दोनों... ज़रूर आना!"

"आऊंगी," उसने सहज भाव से कहा और चली गई।

वह ठीक दस बजे आई और पौ फटने पर ही उसके पास से लौटी।

गोमोज़ोव ने उसे फिर आने को नहीं कहा और तीस कोपेक भी उसके हवाले नहीं किये। वह ख़ुद ही आयी—बुद्धू-सी, वशीभूत-सी और आकर चुपचाप उसके सामने खड़ी हो गई। उसने पलंग पर लेटे-लेटे ही आंखें उठाकर उसकी ओर देखा और दीवार की ओर खिसकते हुए कहा—

"बैठो।"

जब वह बैठ गई तो बोला—

"देखो, सब छिपाकर रखना। किसी को कानों कान ख़बर नहीं होनी

9*

चाहिये, — सुना? नहीं तो मैं मुसीबत में फंस जाऊंगा... मैं अब जवान नहीं हूं और तुम भी... समझ गई न?"

उसने सिर हिलाकर हामी भरी।

उसे विदा करते समय उसने मरम्मत के लिये कुछ कपड़े और दे दिये।

"ख़बरदार, किसी को कानों कान ख़बर न होने पाए," उसने एक बार फिर उसे ताकीद की।

इस प्रकार, दूसरों से अपने सम्बन्धों को सावधानी से छिपाते हुए वे घुलते-मिलते रहे।

रात को आरीना, क़रीब-क़रीब चौपाया बनी, चुपचाप उसके कमरे में रेंग आती। बड़ा एहसान-सा जताते हुए, वह मालिक और स्वामी के अन्दाज़ में उससे व्यवहार करता।

"हां, तुम्हारा यह तोबड़ा तो बड़ा भोंडा है!" कभी-कभी वह उसे कोंचता।

जवाब में एक फीकी और विनीत-सी मुस्कराहट उसके चेहरे पर आ जाती। चलते समय मरम्मत के लिए कपड़ों की एक पोटली वह अपने साथ ले आती।

वे एक दूसरे से बहुत कम मिलते। लेकिन स्टेशन पर अगर कभी-कभार उनकी भेंट हो जाती, तो वह फुसफुसाकर कहता—

"आज रात को आ जाना..."

और वह कच्चे धागे से बंधी चली आती, —अपने चेचकरू चेहरे को इस तरह गम्भीर बनाए, जैसे वह किसी बहुत ही महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य का पालन करने आई हो और उसका रोम-रोम उस कर्त्तव्य के महत्त्व और गम्भीरता से पूर्णतया परिचित हो।

जब वह लौटकर घर लौटती, तो दब्बूपन और भय की पुरानी भावना पहले की भांति फिर उसके चेहरे पर चस्पां हो जाती।

कभी-कभी वह कहीं अंधेरे में या किसी पेड़ की ओट में ठिठककर स्तेपी के शून्य में ताकती। वहां रात घेरा डाले होती और उसकी घोर निस्तब्धता से उसके दिल की बुरी हालत हो जाती।

एक दिन सांझ को गाड़ी विदा करने के बाद स्टेशन के अधिकारी मत्वेई येगोरोविच की खिड़कियों के सामने उगे पाप्लरों की घनी छाया में चाय पीने बैठे।

गर्मी के दिनों में वे अक्सर यही किया करते थे—इससे उनके एकरस जीवन में कुछ विविधता आ जाती थी।

गाड़ी के बारे में जो कुछ कहा जा सकता था वह सब कह चुकने के बाद, अब वे चुपचाप चाय पी रहे थे।

"आज कल से ज्यादा गर्मी है," एक हाथ से अपना ख़ाली गिलास पत्नी की ओर बढ़ाते और दूसरे हाथ से माथे का पसीना पोंछते हुए मत्वेई येगोरोविच ने कहा।

"ऊब के कारण ही अधिक गर्मी अनुभव हो रही है," उसके हाथ से गिलास लेते हुए पत्नी बोली।

"हुंह! शायद... ताश से कुछ जी बहल सकता है... लेकिन हम तो केवल तीन ही हैं..."

निकोलाई पेत्रोविच ने कंधे झटके और आंखें सिकोड़कर बहुत साफ़ ढंग से कहा—

"शोपनहार के अनुसार, ताश खेलना दिमाग़ी दिवालियेपन का सूचक है।"

"बहुत ख़ूब!" मत्वेई येगोरोविच फड़क उठा—"क्या कहा तुमने? दिमाग़ी दिवालियापन... भई वाह! किसने कहा है यह?"

"शोपनहार ने। जर्मन, दार्शनिक..."

"दार्शनिक? हुंह!"

"तुम्हारे ये दार्शनिक क्या विश्वविद्यालयों में काम करते हैं?" सोफ़्या इवानोव्ना ने पूछा।

"कैसे समझाऊं मैं आपको यह? यह तो कोई पद नहीं है, बल्कि—जैसा कि कहा जाता है—यह एक ईश्वरीय देन होती है... कोई भी व्यक्ति, जिसमें सोचने और सभी चीजों में कार्य-कारण खोजने की जन्म-जात प्रवृत्ति हो, दार्शनिक हो सकता है। हां, विश्वविद्यालयों में भी दार्शनिक होते हैं... लेकिन वे कहीं भी हो सकते हैं... रेलवे कर्मचारियों तक में हो सकते हैं।"

"जो विश्वविद्यालयों में काम करते हैं, क्या उन्हें मोटी तनख़ाहें मिलती हैं?"

"अक़्ल के मुताबिक़..."

"अगर चौथा भी होता, तो ताश का मज़ा रहता," मत्वेई येगोरोविच ने उसांस भरी।

बातचीत का सिलसिला टूट गया।

नीले आकाश में लार्क पक्षी गा रहे थे, पाप्लरों पर रोबिन पक्षी धीमी सीटी बजाते एक टहनी से दूसरी टहनी पर फुदक रहे थे, घर के भीतर से बच्चे के रोने की आवाज़ आ रही थी।

"आरीना घर में है?" मत्वेई येगोरोविच ने पूछा।

"हां..." उसकी पत्नी ने जवाब दिया।

"मौलिक औरत है वह आरीना भी, क्यों, निकोलाई पेत्रोविच..."

"मौलिकता साधारणता की जननी है," निकोलाई पेत्रोविच ने सोच में डूबे और चिन्तनशील व्यक्ति की सी मुद्रा बनाकर मानो अपने आप से कहा।

"यह कैसे?" स्टेशन-मास्टर ने रंग में आते हुए पूछा।

निकोलाई पेत्रोविच ने ख़ास अन्दाज़ में जब वह कथन दोहराया, तो स्टेशन-मास्टर ने आनन्द-विभोर हो अपनी आंखें मूंद लीं और उसकी पत्नी ने मानो सपनों में खोए स्वर में कहा—

"सच, देखकर अचरज होता है कि जो कुछ भी तुम पढ़ते हो, वह तुम्हें इस तरह याद रहता है... एक मैं हूं कि आज कुछ पढ़ती हूं और कल ही उसे भूल जाती हूं... अभी कुछ ही दिन पहले मैंने 'नीवा'* में एक बहुत ही दिलचस्प और रोचक चीज़ पढ़ी थी। लेकिन अब लाख सिर पटकने पर एक शब्द भी नहीं याद कर सकती!"

"आदत की बात है," निकोलाई पेत्रोविच ने सूत्र-रूप में समझाया।

"यह तो उससे भी बढ़कर है... क्या नाम था उसका? शोपनहार..." मुस्कराते हुए स्टेशन-मास्टर ने कहा—"मतलब यह कि हर नयी चीज़ पुरानी पड़ जाती है!"

"इसके उलट भी, जैसा कि एक कवि ने कहा है—'जीवन अपनी बुद्धिशीलता में मितव्ययी है, वह पुरातन से ही नवीन की रचना करता है'।"

"भई, वाह! तुम्हारे मुंह से तो जैसे मोती झरते हैं।"

मत्वेई येगोरोविच प्रसन्न हो हंस दिया, उसकी पत्नी मधुर भाव से

---

* साप्ताहिक सचित्र पत्रिका। १८७० से १९१८ तक पीटर्सबर्ग से प्रकाशित। सं०

मुस्कराई और निकोलाई पेत्रोविच अपने सन्तोष को छिपाने का व्यर्थ प्रयत्न करता।

"वह 'साधारणता' वाला कथन किसका था?"

"कवि बारियातिन्स्की का।"

"और वह दूसरा?"

"वह भी एक कवि का है। फ़ोफ़ानोव का।"

"बड़े चतुर लोग हैं ये!" स्टेशन-मास्टर ने कवियों की सराहना की और मुग्ध भाव से तथा मुस्कराते हुए पंक्तियों को दोहराया।

जीवन की ऊब उनके साथ एक तरह का खेल-सा खेलती थी। एक क्षण के लिये वह उन्हें अपने चंगुल से मुक्त कर देती और फिर–कसकर दबोच लेती। और तब, फिर से वे चुप हो जाते, गरमी से परेशान होने लगते, जिसे चाय और बढ़ा देती।

स्तेपी में सूरज का एकच्छत्र राज्य था।

"हां तो, मैं आरीना के बारे में कह रहा था," स्टेशन-मास्टर ने फिर कहना शुरू किया– "अजीब औरत है वह। उसे देखकर अचरज हुए बिना नहीं रहता। ऐसा मालूम होता है जैसे उसे किसी आघात ने पस्त कर दिया है–कभी हंसती नहीं, कभी गाती नहीं, बोल भी उसके मुंह से मुश्किल से ही सुनाई देता है... निरी ठूंठ-सी है। लेकिन काम करने में वह एक नम्बर है और लेल्या की देख-भाल तो इतनी अच्छी तरह से करती है, इतना ध्यान देती है उसकी तरफ़ कि..."

वह धीमे-धीमे ये शब्द कह रहा था, ताकि आरीना सुन न ले। वह अच्छी तरह जानता था कि नौकरों की कभी तारीफ़ नहीं करनी चाहिये–इससे वे बिगड़ जाते हैं। उसकी बीवी ने उसे बीच में ही टोका और अर्थपूर्ण ढंग से भौंहें चढ़ाकर कहा–

"बस रहने दो... बहुत कुछ नहीं जानते हो तुम उसके बारे में!"

निकोलाई पेत्रोविच ने अपने चम्मच से मेज़ पर ताल देते और मुस्कराते हुए धीमी आवाज़ में गाना शुरू किया–

"प्यार की दासी
इतनी प्यासी
तेरे सम्मुख बहुत निबल
मेरे दानव, मैं दुर्बल!"

"क्या? यह क्या क़िस्सा है? वह... प्रेम-दीवानी, रहने दो, रहने दो, यह तो तुम दोनों के दोनों झूठ बोल रहे हो!"

और मत्वेई येगोरोविच ज़ोरों से हंसने लगा। उसके गाल हिल उठे और माथे से पसीने की बूंदें झड़ने लगीं।

"इसमें हंसने की तो कोई भी बात नहीं है," उसकी बीवी ने कहा, "एक तो यह कि वह बच्चे की देख-भाल करती है और दूसरे – ज़रा इस रोटी को तो देखो – जली हुई और खट्टी... ऐसा क्यों?"

"हां, रोटी तो वैसी नहीं है, जैसी होनी चाहिये। उसे डांटना होगा। लेकिन, हे मेरे भगवान, जो बात तुम लोग कह रहे हो, उसकी मैं क़तई आशा नहीं करता! वह तो ख़मीर ही ख़मीर है! और वह कौन है? लुका? कसकर ख़बर लूंगा उस बदमाश की! या फिर यागोद्का – वह बूढ़ा बछेरा?"

"गोमोज़ोव..." निकोलाई पेत्रोविच ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

"वह? वह धीर-गम्भीर आदमी? सच? कहीं मन से तो नहीं गढ़ रहे?"

स्टेशन-मास्टर को यह हास्यजनक क़िस्सा अत्यन्त रोचक प्रतीत हुआ। वह कभी तो ऐसे खिलखिलाकर हंसता, कि आंखों में आंसू आ जाते, तो कभी एकदम गम्भीर होकर प्रेमियों की इस जोड़ी को कड़ी चेतावनी देने की बात करता या उन दोनों के बीच प्यार भरी बातों की कल्पना करके हंसी की बाढ़ में डूबने-उतरने लगता।

अन्त में वह सीमा लांघ गया। इसपर निकोलाई पेत्रोविच ने अपना चेहरा गम्भीर बना लिया और सोफ़्या इवानोव्ना ने उसे बीच में ही टोका।

"लंगूर कहीं के! ज़रा देखते जाओ, मैं क्या मज़ा चखाता हूं उन्हें! यह तो मज़ा ही आ गया!" अपने आपको रोकने में असमर्थ स्टेशन-मास्टर छलक पड़ा।

इसी समय लुका ने आकर कहा –

"तार की डिब्बी किर्टकिट कर रही है..."

"अभी आता हूं। सिगनल नम्बर बयालीस।"

स्टेशन-मास्टर और उसका सहायक जल्दी ही स्टेशन की ओर चल दिए जहां लुका गाड़ी को सिगनल देने के लिए घंटी बजा रहा था। निकोलाई पेत्रोविच ने अगले स्टेशन के लिए तार खटखटाया कि गाड़ी

नम्बर बयालीस को रवाना करने की इजाजत दी जाए। स्टेशन-मास्टर दफ़्तर में इधर से उधर डग नाप रहा था और मुस्कराता हुआ बोला –

"हम लोग इन कम्बख़्तों के साथ कोई मजाक़ करेंगे। ऐसे ही, ऊब मिटाने के लिये, कुछ हंस ही लेंगे..."

"हां, यह किया जा सकता है," तार को खटखटाते हुए निकोलाई पेत्रोविच ने कहा। वह जानता था कि दार्शनिकों को नपी-तुली ही बातें करनी चाहिये।

इसके शीघ्र ही बाद उन्हें जी बहलाने का मनचाहा मौक़ा मिल गया।

एक रात गोमोज़ोव आरीना से उस तहख़ाने में मिलने आया जहां उसके अनुरोध और मालकिन की राजीरजा से सभी तरह के काठ-कबाड़ के बीच आरीना ने अपनी सेज सजाई थी। वहां ठंडक और सीलन थी और टूटी हुई कुर्सियां, बेकार पड़ी नांदें, तख़्ते और अन्य काठ-कबाड़ अंधेरे में भयानक शकलें धारण किए पड़ा था। जितनी देर आरीना इनके बीच अकेली रही, उसे इतना डर लगा कि उसने झपकी तक नहीं ली और आंखें फाड़े हुए पुवाल पर पड़ी-पड़ी भगवान का नाम बुदबुदाती रही।

आख़िर गोमोज़ोव आया, चुपचाप देर तक उसे गूंधता रहा और फिर थककर सो गया। लेकिन आरीना शीघ्र ही उसे जगाते हुए भय से फुसफुसायी –

"तिमोफ़ेई पेत्रोविच! तिमोफ़ेई पेत्रोविच!"

"क्या है?" अधजगे-से गोमोज़ोव ने नींद में ही पूछा।

"बाहर ताला लगा दिया गया..."

"क्या?" उछलकर उठते हुए उसने पूछा।

"वे दरवाज़े पर आये और... ताला लगा दिया..."

"तुम झूठ बोल रही हो!" उसे अपने से दूर धकेलते हुए भय और झुंझलाहट से गोमोज़ोव ने फुंकार छोड़ी।

"ख़ुद जाकर देख लो," उसने विनीत भाव से कहा।

वह उठा, काठ-कबाड़ के बीच लड़खड़ाता हुआ दरवाज़े की ओर बढ़ा और उसे धकियाकर देखा।

"यह फ़ौजी की करतूत है," कुछ रुककर उसने उद्विग्नता से कहा।

दरवाज़े के दूसरी ओर ज़ोर की खिलखिलाहट सुनाई दी।

"दरवाज़ा खोलो!" गोमोज़ोव ने ऊंची आवाज़ में अनुरोध किया।

"क्या?" फ़ौजी की आवाज़ आई।

"दरवाज़ा खोलो न..."

"सवेरे खोलेंगे," फ़ौजी ने वहां से हटते हुए कहा।

"शैतान के बच्चे, मुझे ड्यूटी देनी है!" गोमोज़ोव ने झुंझलाते और मिन्नत करते हुए कहा।

"तुम्हारी ड्यूटी मैं कर दूंगा... जहां हो, बस वहीं पड़े रहो!"

और फ़ौजी चल दिया।

"हरामी पिल्ला!" स्विचमैन कातर हो बुदबुदा उठा, "मुझे इस तरह बंद नहीं कर सकते... सिर पर स्टेशन-मास्टर तो है... उसे तुम क्या जवाब दोगे? वह पूछेगा कि गोमोज़ोव कहां है? तब तुम ही जवाब देना उसे..."

"शायद स्टेशन-मास्टर ने ही उसे हमें बंद करने के लिये कहा है," आरीना ने धीमे से और निराश होकर कहा।

"स्टेशन-मास्टर ने?" गोमोज़ोव ने भय से दोहराया–"वह ऐसा क्यों करेगा?" क्षण भर चुप रहकर वह उसपर चिल्ला उठा–"तुम झूठ बोल रही हो!"

जवाब में वह केवल एक गहरी सांस भरकर रह गई।

"हे भगवान, अब क्या होगा?" दरवाज़े के पास एक नांद पर ढहते हुए स्विचमैन ने कहा–"मेरे मुंह पर कालिख पुत गई! और यह तुम्हारी वजह से हुआ, सुअर-मुंह भूतनी!"

और उसने उस दिशा में घूंसा हिलाया जिधर से उसके सांस लेने की आवाज़ आ रही थी। वह कुछ नहीं बोली।

उनके आस-पास नम अंधेरा था जिसमें खट्टी पत्ता गोभी, फफूंदी और नथुनों को चुनचुनानेवाली अन्य तीखी गंधें बसी हुई थीं। दरवाज़े की दरारों में से चांदनी की पतली डोरियां भीतर आ रही थीं। बाहर स्टेशन से गुज़रती हुई माल-गाड़ी की गड़गड़ाहट सुनाई दे रही थी।

"चुप क्यों हो, काठ की हंडिया?" गुस्से और घृणा से गोमोज़ोव ने कहा, "मैं अब क्या करूं? मुसीबत में फंसा दिया और अब चुप्पी साधे बैठी हो? कोई रास्ता निकालो, कम्बख़्त! अब मेरी यह कालिख कैसे धुलेगी? हे भगवान, मैं इस भूतनी के चक्कर में कैसे फंस गया?"

"मैं माफ़ी मांग लूंगी," आरीना ने धीमी आवाज़ में कहा।

"तो फिर?"

"शायद वे माफ़ कर दें..."

"लेकिन इससे मेरी क्या बात बनेगी? ठीक है, वे तुम्हें माफ़ कर देंगे। लेकिन इससे क्या? मेरे मुंह पर तो कालिख पुत गई न? सब मेरी तो खिल्ली उड़ाएंगे न?"

कुछ मिनट रुककर वह फिर उसे कोसने और धिक्कारने लगा। समय तो मानो घिसट रहा था। आख़िर स्त्री ने कांपती आवाज़ में उससे प्रार्थना की—

"मुझे माफ़ कर दो, तिमोफ़ेई पेत्रोविच!"

"कुल्हाड़ी अब तुम्हें माफ़ करेगी!" वह गुर्राया।

फिर निस्तब्धता छा गई—बोझिल और दमघोंट, अंधेरे में बन्द इन दो प्राणियों के लिए कष्टकर पीड़ा में डूबी।

"हे भगवान, किसी तरह जल्दी उजाला ही हो जाता!" आरीना कराह उठी।

"अपना मुंह बन्द रख... नहीं तो मुंह तोड़ दूंगा!" गोमोज़ोव ने घुड़का और गालियों की एक और बौछार की। इसके बाद मौन और निस्तब्धता की यंत्रणा ने उन्हें फिर दबोच लिया। समय अब और भी क्रूरता से घिसट रहा था, जैसे-जैसे तड़का निकट आता जाता था, वह अधिकाधिक बोझिल होता जाता था, मानो हर क्षण जान-बूझकर देर कर रहा हो, इन दोनों की हास्यास्पद स्थिति का वह भी मज़ा ले रहा हो।

आख़िर गोमोज़ोव को झपकी आ गयी और तहख़ाने से बाहर मुर्ग़े की बांग से उसकी आंख खुली।

"ऐ, सुअर मुंही भूतनी, क्या सो गई?" उसने घुटी-सी आवाज़ में पूछा।

"नहीं," आरीना ने लम्बी सांस छोड़ते हुए जवाब दिया।

"झपकी ले ही ली होती!" उसने व्यंग्य-बाण छोड़ा, "शैतान कहीं की!"

"तिमोफ़ेई पेत्रोविच!" रुआंसी आवाज़ में आरीना ने कहा, "तुम मुझपर न बिगड़ो! मुझपर तरस खाओ! भगवान के नाम पर मुझे इस तरह न कोंचो! मैं अकेली हूं, एकदम अकेली और तुम... तुम, मेरे प्यारे, तुम तो..."

"बन्द करो यह झींकना! लोगों से खिल्ली तो मत उड़वाओ!" उसकी इस बेसुध फुसफुसाहट को रोकते हुए, जिससे वह कुछ नर्म पड़ गया था, गोमोज़ोव ने कड़ी आवाज़ नें कहा, "बन्द रखो अपना यह तोबड़ा... क़िस्मत की मारी..."

और फिर वे मौन साधे एक के बाद एक क्षण के बीतने की बाट देखने लगे। लेकिन क्षणों के बीतने से उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ा। आख़िर दरवाज़े की दरारों में से सूरज की उज्ज्वल किरणों ने भीतर झांककर देखा और अंधेरे को अपने चमकदार डोरों से बींध डाला। बाहर डगों की आवाज़ सुनाई दी। कोई दरवाज़े तक आया, एक क्षण के लिए वहां ठिठका और फिर दूर चला गया।

"राक्षस!" घृणा से थूक की पिचकारी छोड़ते हुए गोमोज़ोव गरजा। फिर से प्रतीक्षा की घड़ियां बीतने लगीं, निस्तब्धता और तनाव में डूबी।

"हे भगवान, दया करो..." आरीना बुदबुदाई।

तहख़ाने की ओर बढ़े दबे पांवों की आहट का आभास हुआ... खटक के साथ ताला खुला और स्टेशन-मास्टर का कड़ा स्वर सुनाई दिया–

"गोमोज़ोव! आरीना की बांह थामे हुए बाहर निकल आओ! फुर्ती से!"

"तुम जाओ!" गोमोज़ोव बुदबुदाया।

आरीना उसके पास आकर बग़ल में खड़ी हो गई। उसका सिर लटका हुआ था।

दरवाज़ा खुला। स्टेशन-मास्टर सामने ही खड़ा था।

"नव दम्पति को सुहाग-रात की बधाई," अभिवादन में सिर झुकाते हुए उसने कहा, "हां तो, बैंड बजना शुरू हो!"

गोमोज़ोव ने बाहर की ओर डग बढ़ाया, लेकिन कान बहरे करनेवाले अटपटे शोर से सकपकाकर ठिठक गया। लुका, यागोद्का और निकोलाई पेत्रोविच दरवाज़े पर खड़े थे।

लुका एक बालटी की तली पर घूंसा मारते हुए उसे बजा रहा था और गला फाड़कर ऊंचे स्वर में चिंघाड़ रहा था; फ़ौजी भोंपू बजा रहा था और निकोलाई पेत्रोविच गालों को फुलाए, हाथ से ताल देता हुआ, होंठों से तुरही जैसी आवाज़ निकाल रहा था–

"पौम! पौम! पौम-पौम-पौम!"

बालटी धमाधम की श्रावाज़ कर रही थी, भोंपू चीख़-चिल्ला रहा था। स्टेशन-मास्टर हंसी के मारे दोहरा हुआ जा रहा था। उसका सहायक भी गोमोज़ोव की अजीब मुद्रा देख हंसी की बाढ़ में वह चला। गोमोज़ोव ऐसे खड़ा था जैसे उसे काठ मार गया हो—उसके चेहरे का रंग फक था और कांपते होंठों पर सकपकाई-सी मुस्कराहट थी। उसके पीछे श्रारीना खड़ी थी। उसका सिर उसकी छाती पर लटक श्राया था—एकदम निश्चल, बुत बनी-सी।

लुका, गोमोज़ोव को चिढ़ाने के लिये घिनौना-सा मुंह बनाये ऊट-पटांग गाना गा रहा था—

"श्रारीना ने उसको कैसे, मीठे
वचन सुनाये
बड़ा मज़ा उसको भी श्राया
मज़ा हमें भी श्राये।"

फ़ौजी गोमोज़ोव के पास पहुंचा और उसके कानों से अपना भोंपू सटा-कर "तू-तू" करने लगा।

"अरे, खड़ा क्या देखता है? उसकी बांह थाम... श्रारीना की बांह में हाथ डाल!" हंसी से बेदम होते हुए स्टेशन-मास्टर ने चिल्लाकर कहा।

"बस, बन्द करो अब! मेरी तो जान ही निकल जायेगी," बीवी ने चीखकर कहा। वह ओसारे में बैठी थी और हंसी से लोट-पोट हुई जा रही थी।

"प्रेम-मिलन का एक क्षण,
न्योछावर उसपर जीवन!"

निकोलाई पेत्रोविच गा रहा था।

"हुर्रा, नयी जोड़ी ज़िन्दाबाद!" गोमोज़ोव को क़दम बढ़ाते देख स्टेशन-मास्टर चिल्लाया। फ़ौजी समेत, जिसकी श्रावाज़ गरजती-गूंजती थी, चारों ज़ोर से "हुर्रा" चिल्लाये।

गोमोज़ोव के पीछे-पीछे श्रारीना ने भी डग बढ़ाया। अब उसका सिर ऊंचा तना था, होंठ खुले थे और उसकी बांहें दोनों बाज़ू झूल रही थीं। उसकी फटी-फटी सी आंखें सामने की ओर ताक रही थीं, लेकिन शायद ही कुछ देख रही थीं।

"इनसे चुम्बन कराओ! हा-हा-हा!" सोफ़्या इवानोव्ना चिल्ला उठी।

"एक दूसरे को चूमो, नव दम्पति!" निकोलाई पेत्रोविच चिल्लाया। स्टेशन-मास्टर ने तो वृक्ष का सहारा ले लिया, क्योंकि हंसी के मारे उसके लिये खड़े रहना असम्भव हो गया था। बालटी खड़खड़ा रहा था, भोंपू चीख़-चिल्ला रहा था और लुका मटक-मटककर नाचता हुआ गा रहा था—

"गोभी का रसा आरीना ने बनाया—
जो डूब गया उसमें, वह तैर न पाया!"

निकोलाई पेत्रोविच ने अपने गाल फुलाकर फिर तुरही की आवाज़ की—

"पौम-पौम-पौम! तू-तू-तू-तू! पौम-पौम! तू-तू-तू!"

बारिक के दरवाज़े के निकट पहुंचने पर गोमोज़ोव खिसक गया। आरीना अहाते में अकेली खड़ी रह गई,—लोगों के एक उन्मत्त दल से घिरी हुई। वे चिल्ला रहे थे, ठहाके लगा रहे थे, उसके कानों में सीटियां बजा रहे थे और ख़ुशी से पगलाये हुए उसके चारों ओर उछल-कूद रहे थे। वह उसके बीच खड़ी थी—जड़वत् चेहरा, अस्त-व्यस्त बाल, गंदी-मंदी, दयनीय और हास्यास्पद।

"दुल्हा चम्पत हो गया,—इसे यहां अकेली छोड़कर!" आरीना की ओर इशारा करते और हंसी से दोहरा होते हुए स्टेशन-मास्टर ने अपनी पत्नी से पुकारकर कहा।

आरीना ने सिर घुमाकर उसकी ओर देखा और फिर बारिक के सामने से स्तेपी की ओर निकल गई। चीख़-चिल्लाहट और ठहाकों ने उसे विदा किया।

"बस करो! जाने दो उसे!" सोफ़्या इवानोव्ना ने चिल्लाकर कहा, "उसे ज़रा दम लेने दो—खाना भी तो पकाना होगा उसे!"

आरीना स्तेपी में निकल गई,—रेलवे सीमा-रेखा से परे, गेहूं के एक ऊबड़-खाबड़ से खेत में। वह बहुत ही धीरे-धीरे, विचारों में डूबे व्यक्ति की भांति चल रही थी।

"किस तरह, किस तरह? ज़रा बताओ तो?" इस मज़ाक़ में हिस्सा लेनेवालों से स्टेशन-मास्टर कुरेद-कुरेदकर पूछ रहा था, जो अब नव दम्पति के व्यवहार के ब्योरों को याद कर एक दूसरे को सुना रहे थे। हंसी के

मारे सब बेहाल थे। लेकिन निकोलाई पेत्रोविच तो इस मौक़े पर भी नहीं चूका और अपने भंडार में से बुद्धिमानी के कुछ कण खोज लाया—

"हंसना नहीं मना—
जो हो हंसने योग्य बना!"

उसने सोफ़्या इवानोव्ना से कहा, मगर साथ ही यह चेतावनी भी दे दी कि—"पर है बुरा अधिक हंसना!"

उस दिन स्टेशन पर हंसी की बाढ़ तो ख़ूब आई, लेकिन खाना ढंग का नहीं मिला, क्योंकि आरीना खाना पकाने के लिए नहीं लौटी और स्टेशन-मास्टर की पत्नी को ही चूल्हा फूंकना पड़ा। लेकिन बुरे खाने के बावजूद लोग रंग में ही बने रहे। गोमोज़ोव ड्यूटी का समय होने तक बारिक से बाहर नहीं निकला। और जब वह बाहर आया तो स्टेशन-मास्टर ने उसे अपने दफ़्तर में तलब किया जहां निकोलाई पेत्रोविच ने खोद-खोदकर उससे पूछा कि उसने अपनी सुन्दरी को अपने जाल में कैसे फंसाया। मत्वेई येगोरोविच और लुका को इसमें बेहद मज़ा आया।

"मौलिकता की दृष्टि से यह अव्वल नम्बर का गुनाह है," निकोलाई पेत्रोविच ने स्टेशन-मास्टर से कहा।

"गुनाह तो है ही," वक्र मुस्कान के साथ गोमोज़ोव ने गम्भीरता से कहा। वह अनुभव कर रहा था कि अगर वह ऐसा विवरण दे जिससे आरीना ही अधिक हास्यास्पद नज़र आए, तो उसका ज़्यादा मज़ाक़ नहीं उड़ाया जा सकेगा।

"शुरू-शुरू में तो वह आंख मारती रही," उसने कहा।

"आंख मारती रही? हा-हा-हा! ज़रा कल्पना तो करो, निकोलाई पेत्रोविच, कैसा तोबड़ा है उसका और कैसे आंख मारती होगी वह! बहुत ख़ूब!"

"बस, कनखियों से देखती और डोरे डालती रही, सो मैंने मन ही मन कहा—'कुछ नहीं बने-बनायेगा तुम्हारा!' इसके बाद एक दिन बोली—'अगर तुम कहो तो तुम्हारे लिये कुछ कमीज़ें सी दूं।"

"लेकिन 'महत्त्व नहीं था सूई का'," निकोलाई पेत्रोविच ने टिप्पणी जड़ी और फिर, उसे समझाते हुए, स्टेशन-मास्टर से कहा—

"जानते हैं, यह नेक्रासोव की एक कविता की पंक्ति है। हां तो, गोमोज़ोव, आगे क्या हुआ?"

और गोमोज़ोव कहता गया, पहले कुछ प्रयास के साथ, लेकिन बाद में अनुप्राणित होकर, क्योंकि उसने देखा कि उसके झूठ का रंग जम रहा है।

इस बीच वह, जिसकी गोमोज़ोव यहां चर्चा कर रहा था – स्तेपी में पड़ी थी। वह काफ़ी दूर गेहूं के सागर में जाकर धम्म से धरती पर गिर गई थी और देर तक एकदम निश्चल पड़ी रही थी। जब उसकी पीठ के लिये धूप असह्य हो उठी तो वह पलटकर सीधी हो गई और हाथों से अपना चेहरा ढक लिया ताकि अत्यधिक निर्मल आकाश और उसकी गहराई में चमचमाते सूरज को न देखे।

लाज से टूटी इस स्त्री के इर्द-गिर्द गेहूं की बालें सरसरा रही थीं, अनगिनत झिल्लियां निरन्तर ज़ोर से झंकार कर रही थीं। दिन तप रहा था। उसने प्रार्थना करने की कोशिश की, लेकिन शब्द याद नहीं आये। खिल्ली उड़ाते चेहरे उसकी आंखों के सामने नाच रहे थे। उसके कानों में हंसी, भोंपू की "तू-तू" और लुका की कर्कश आवाज़ गूंज रही थी। इस गूंज या तपन से उसे घुटन सी अनुभव हुई। उसने अपने ब्लाउज़ के बटन खोल डाले और सूरज के सामने अपना बदन उघाड़ दिया, – इस आशा से कि इस तरह सांस लेने में कुछ आसानी होगी। जहां सूरज उसकी त्वचा झुलस रहा था, वहां उसके भीतर जलती-सी कोई चीज़ मानो उसकी छाती को छेद रही थी। गहरी उसांस छोड़ती हुई कभी-कभी वह कह उठती –

"हे भगवान! दया करो..."

जवाब में गेहूं की बाल सरसरा उठतीं और झिल्लियों की झंकार ही सुनाई देती। सिर उठाकर उसने गेहूं की हिलोरों पर नज़र दौड़ाई – उसे सुनहरी आभा की झलक मिली, स्टेशन के पास पानी की काली टंकी और स्टेशन की इमारतों की छतें दिखाई दीं। आकाश के नीले गुम्बज से आच्छादित इस असीम पीले विस्तार में इनके सिवा और कुछ दिखाई नहीं दिया और आरीना को ऐसा मालूम हुआ जैसे वह समूची दुनिया में एकदम अकेली हो, जैसे वह इस दुनिया के ठीक बीचोंबीच पड़ी हो, जैसे उसके एकाकीपन का बोझ हल्का करने के लिये कभी, कोई भी नहीं आयेगा... कभी, कोई भी नहीं...

सांझ होने पर उसे कुछ आवाजें सुनाई दीं—

"आरीना! आरीना! अरी, शैतान की नानी!"

इनमें से एक आवाज लुका की थी और दूसरी फ़ौजी की। वह एक तीसरी आवाज सुनना चाहती थी, लेकिन वह नहीं आई और तब उसकी आंखों से आंसू का झरना फूट पड़ा जो उसके चेचकरू चेहरे से लुढ़कते हुए उसकी छाती पर गिरने लगा। वह रो रही थी और अपनी नंगी छाती को सूखी तप्त धरती से रगड़ रही थी,—उस भीतर की जलन को शांत करने के लिये, जिसकी यंत्रणा हर क्षण तीव्रतर होती जा रही थी। वह रोई और अपनी सुबकियों को दबाते हुए चुप हो गयी, जैसे उसे डर हो कि कोई उसका रोना सुन लेगा और डांटकर रोने की मनाही कर देगा।

जब रात घिर आई तो वह उठी और धीमे डगों से स्टेशन की ओर चल दी।

इमारतों के निकट पहुंच वह तहखाने की दीवार से सटकर खड़ी हो गई और देर तक स्तेपी के शून्य में ताकती रही। माल-गाड़ियां आईं और चली गईं। आरीना को सुनाई दिया कि कैसे फ़ौजी ने कंडक्टरों को उसके कलंक की दास्तान सुनायी और कैसे वे बेतहाशा हंसे। उनकी हंसी हवा में तैरती हुई दूर स्तेपी में पहुंच रही थी, जहां गिलहरियां धीमी-धीमी सीटियां बजा रही थीं।

"भगवान! दया करो..." दीवार के सहारे अपने बदन को टिकाते हुए वह उसांसें लेती रही। लेकिन इन उसांसों से उसके हृदय का भार हल्का नहीं हुआ।

सुबह की सफ़ेदी फैलने ही लगी थी कि वह स्टेशन की अटारी पर चढ़ गयी और कपड़े सुखाने की रस्सी का फंदा गले में डालकर झूल गई।

दो दिन बाद लाश की गंध से आरीना का पता लगा। पहले तो वे आतंकित हो उठे, इसके बाद बहस करने लगे कि जो कुछ हुआ है, उसके लिये कौन दोषी है। निकोलाई पेत्रोविच ने अकाट्य रूप से सिद्ध किया कि गोमोज़ोव ही दोषी है। स्टेशन-मास्टर ने स्विचमैन के जबड़े पर एक घूंसा रसीद किया और धमकाकर कहा कि वह अपना मुंह बन्द रखे।

अधिकारी आए और उन्होंने जांच-पड़ताल की। मालूम हुआ कि आरीना मैलन्कोलिया की शिकार थी... रेलवे मजदूरों को आदेश दिया गया कि

लाश को स्तेपी में ले जाकर दफ़ना आएं। इसके बाद स्टेशन पर फिर से शान्ति और व्यवस्था हो गयी।

स्टेशन के निवासी पहले की भांति प्रतिदिन फिर चार मिनट का जीवन बिताने लगे — एकाकीपन और ऊब में घुलते, तपन और काहिली में डूबे, ईर्ष्या-भरी आंखों से उन गाड़ियों को ताकते हुए, जो उन्हें पीछे छोड़ तेज़ी से गुज़र जाती थीं।

...और जाड़ों में, जब बर्फ़ीले तूफ़ान स्तेपी में चीख़ते-चिल्लाते और छोटे-से स्टेशन को बर्फ़ और भयानक आवाज़ों में डुबा देते तब यहां के निवासियों का जीवन और भी ऊब उठता।

१८९७

ओरलोव दम्पति

...सौदागर पेतुन्निकोव के काठ-कवाड़ से भरे और लकड़ी के जीर्ण-शीर्ण बाड़ों से घिरे एक छोटे-से अहातेवाले गंदे और पुराने घर के निचले तल्ले की दो खिड़कियों में से क़रीब-क़रीब हर शनिवार की शाम को, संध्या-प्रार्थना से पहले, एक स्त्री की उन्मत्त चीत्कार सुनाई देती थी—

"ठहर, जाता कहां है, पियक्कड़ शैतान!" भारी भरकम आवाज़ में स्त्री चीख़ती।

"जाने दे मुझे!" ऊंची परुष आवाज़ में जवाब सुनाई देता।

"नहीं जाने दूंगी, जंगली जानवर!"

"बकती है! जाने देगी!"

"बेशक मार डाल, तब भी नहीं जाने दूंगी!"

"तू? शैतान की खाला!"

"लोगो, मार डाला, लोगो!"

"जाने देगी!"

पहली चीख़ सुनते ही रंगसाज़ सुचकोव का चेला सेन्का चीजिक जिसका समूचा दिन अहाते के एक छोटे से झोंपड़ी में रंग मिलाते-घोलते बीतता था, चूहे जैसी अपनी काली आंखों को चमकाता हुआ लपककर बाहर निकल आता और गला फाड़कर चिल्लाता—

"ओ-हो, ओरलोव मियां-बीबी में कुश्ती हो रही है!"

रोमांचक परिस्थितियों के लिए सदा तैयार सेन्का तेज़ी से ओरलोव दम्पति की खिड़कियों के पास पहुंच मुंह के बल धरती पर पसर जाता, लाल-पीली धारियां पड़े चेहरे सहित उलझे बालों वाला उसका सिर मेड़ पर झूलने लगता और अपने उत्सुक दीदे निकाल वह अंधेरी खोली में

ताकने-झांकने लगता, जहां से फफूंदी, चमार के मोम और बदबूदार चमड़े की गंध के भभके निकलते।

वहां, निचले तल्ले में दो जने गुत्थम-गुत्था हो रहे थे, कांख-गुर्रा रहे थे और जोरों से कोस रहे थे।

"मेरी जान निकल जायेगी!" स्त्री हांफती हुई चिल्लाई।

"कोई बात नहीं!" पुरुष ने बड़े विश्वास और गुस्से से उसे तसल्ली दी।

किसी नर्म चीज़ पर भारी धमाधम, फिर चीखें, आह-कराह और चढ़ी हुई सांस की आवाज़, जैसे कोई भारी वज़न उठा रहा हो।

"ओ-हो, कितना करारा झापड़ था वह!" सेन्का ने कहा और अपने इर्द-गिर्द जमा भीड़ को हाव-भाव के साथ इसका भान कराने लगा कि खोली के भीतर क्या हो रहा है। बर्जी, कचहरी का हरकारा लेव्वेन्को, अकार्डियन-वादक किस्त्याकोव और निःशुल्क मनोरंजन के कुछ और प्रेमी सेन्का पर सवालों की बौछार लगाए थे और उसकी टांगों तथा रंग में डूबे पतलून को खींच-झटक कर पूछ रहे थे—

"हां तो?"

"अब वह उसकी चड्ढी गांठे है और उसकी नाक फ़र्श पर रगड़ रहा है," सेन्का ने रिपोर्ट दी। सुननेवालों पर जो प्रभाव पड़ रहा था उससे उसका रोम-रोम विह्वल हो उठा था।

अन्य सब भी, इस मार-पीट की हर तफ़सील को ख़ुद अपनी आंखों से देखने के लिए बुरी तरह बेचैन, खिड़की पर झुक आए और बावजूद इसके कि वे उन दांव-पेंचों से एक मुद्दत से परिचित थे, जिनका ग्रिगोरी ओरलोव अपनी पत्नी के साथ गुत्थम-गुत्था के दौरान इस्तेमाल करता था, वे अचरज प्रकट किए बिना न रहे—

"ओह, शैतान! तोड़ डाली क्या?"

"ख़ून से लथपथ है! फ़ौवारा सा छूट रहा है!" सेन्का ने एक ही सांस में कहा।

"हे भगवान!" स्त्रियां चीख़ उठीं, "पूरा पिशाच है!"

पुरुषों की टिप्पणियां अधिक तटस्थ थीं।

"वह निश्चय ही उसे मार डालेगा," वे बोले।

"मेरी बात गांठ-बांध लो, वह छुरा भोंके बिना नहीं छोड़ेगा,"

अकार्डियन-वादक ने भविष्यवाणी के अन्दाज में ऐलान किया, "आये दिन की इस मार-पीट से तंग आकर वह एक ही बार पूरी तरह ठंडा कर देगा!"

"बस, ख़त्म!" उछलकर खड़ा होते हुए सेन्का फुसफुसाया और लपककर, दूर कोने में, एक नये निरीक्षण-स्थल पर जा डटा। वह जानता था कि ओरलोव अब किसी भी क्षण बाहर निकल आएगा।

उबलते-फनफनाते मोची की नजर से बचने के लिए अन्य सब भी इधर-उधर बिखर गए। उसके सामने पड़ना ख़तरनाक था और इसके अलावा लड़ाई के ख़त्म हो जाने पर अब कोई दिलचस्पी भी बाक़ी नहीं रही थी।

आम तौर से जब ओरलोव बाहर निकलता था तो सेन्का के सिवा अहाते में और कोई जीव नजर नहीं आता था। सांस चढ़ी हुई, क़मीज फटी हुई, सिर के बाल अस्त-व्यस्त, उत्तेजित, पसीने से तर चेहरे पर नोच-खरोंच, वह ख़ूनी आंखों से अहाते को छानता, अपने हाथों को कमर के पीछे बांधकर धीमी चाल से उस पुरानी बर्फ़-गाड़ी के पास जा खड़ा होता जो लकड़ियों के एक बाड़े की बग़ल में औंधी पड़ी थी। कभी-कभी वह उद्दंडता से सीटी बजाता और इस तरह इधर-उधर देखता मानो पेतुन्निकोव के घर के सभी निवासियों को लड़ने के लिए ललकार रहा हो। इसके बाद वह बर्फ़-गाड़ी के रनर्स पर बैठ जाता, क़मीज की आस्तीन से अपने चेहरे का पसीना और ख़ून पोंछता, थके हुए अन्दाज में अपने बदन को ढीला छोड़ देता और ऊब-भरी नजर से घर की गंदी, पलस्तर उखड़ी और रंग-बिरंगी धारियों वाली दीवार की ओर ताकने लगता। सुचकोव के रंगसाज काम से लौटते हुए घर के इस भाग पर अपने ब्रशों को पोंछने के आदी थे।

ओरलोव कोई तीसेक साल का था। काली छोटी मूछें उसके सुन्दर नाक-नक्शेवाले स्पन्दनशील चेहरे की शोभा बढ़ाती थीं, जो उसके रसीले लाल होंठों को पूरी तरह उभार देती थीं। उसकी बड़ी हड्डीली नाक के ऊपर घनी भौंहें एक दूसरी को छूती-सी मालूम होती थीं। इनके नीचे काली आंखें झांकती थीं जिनमें हमेशा बेचैनी की लौ लपकती रहती थी। वह पुष्ट मांस-पेशियोंवाला मझोले आकार का गर्ममिजाज आदमी था, जिसकी कमर उसके मोची के काम ने कुछ झुका दी थी। वह सकते की हालत में वहीं बर्फ़-गाड़ी पर देर तक बैठा रहता, सांवली चौड़ी छाती से गहरी सांस लेता हुआ रंग-बिरंगी दीवार की ओर ताकता रहता।

सूरज छिप चुका था, लेकिन वायु अभी भी दमघोट बनी थी। तेल रंगों, कोलतार और सड़ी गोभी तथा अन्य कूड़े-कचरे की सड़ांध आ रही थी। घर के दोनों तल्लों की खिड़कियों में से गाने और लड़ने-झगड़ने की आवाजें सुनाई दे रही थीं। जब-तब किसी खिड़की में से शराब के नशे में चूर कोई चेहरा बाहर निकलता, क्षण भर के लिए ओरलोव की ओर घूरकर देखता और हंसी के साथ विलीन हो जाता।

रंगसाज़ काम से लौटकर अहाते में पांव रखते; गुज़रते हुए कनखियों से ओरलोव की ओर देखते, परस्पर आंख मारते और अहाते को अपनी तेज़ कोस्त्रोमा बोली से गुंजाते हुए कुछ हम्माम की ओर रुख़ करते, और कुछ शराबख़ाने की राह लेते। दर्ज़ी—दुबले-पतले, ख़मदार टांगों वाले अधनंगे जीव—दूसरे तल्ले से रेंगकर नीचे आते और रंगसाज़ों को उनकी चनों की तरह बिखरती बोली के लिए चिढ़ाना शुरू कर देते। शोर-गुल, हंसी, ठिठोली और खिलखिलाहट के फ़ौवारे छूटते। ओरलोव वैसे ही चुपचाप बैठा रहता, किसी की ओर नज़र तक उठाकर न देखता। कोई भी उसके पास न फटकता, उसे लेकर मज़ाक़ करने का साहस न करता—वे जानते थे कि ऐसे क्षणों में उसके वहशियाना गुस्से का कोई ठिकाना नहीं होता।

वह वहां बैठा रहता, अस्पष्ट और बोझिल गुस्सा उसकी छाती पर सवार रहता, उसके लिए सांस लेना मुश्किल कर देता, झल्लाहट से उसके नथुने फरफराते, उसके होंठों पर बल पड़ते और मज़बूत और बड़े पीले दांतों की दो पांतें दिखाई देने लगतीं। कोई अस्पष्ट और आकारहीन-सी चीज़ उसके हृदय में उमड़ती, उसकी आंखों के आगे लाल, धुंधले धब्बे तैरने लगते और ऊब तथा वोद्का की चाह उसकी आंतों को उमेठती। वह जानता था कि शराब पीने के बाद उसे चैन मिलेगा, लेकिन अभी अंधेरा गहराया नहीं था और ऐसी ख़स्ता तथा अटपटी हालत में मोहल्ले से गुज़रते हुए, जहां उसे सभी जानते थे, शराबख़ाने की ओर जाने में—ग्रिगोरी ओरलोव को—लाज आती थी।

वह अपने आपको मोहल्ले भर की हंसी का निशाना बनाना नहीं चाहता था, लेकिन घर लौटकर मुंह-हाथ धो ले और कपड़े बदल ले, वह यह भी नहीं कर सकता। वहां उसकी बीवी, जिसे उसने पीटा था, फ़र्श

पर पड़ी थी और उस समय उसकी बात तक सोचते हुए उसे घिन मालूम होती थी।

वह वहां पड़ी कराह रही थी, इस चेतना के साथ कि वह सही थी, कि वह उसकी बेगुनाह शिकार थी—वह यह जानता था। वह जानता था कि वास्तव में वह सही थी और वह ख़ुद ग़लत था। लेकिन यह चेतना केवल बीवी के प्रति उसकी घृणा को और भी बढ़ा देती, क्योंकि इस चेतना के साथ ही उसकी आत्मा में अंधा ग़ुस्सा भी उमड़-घुमड़ रहा था जो चेतना से कहीं ज़्यादा ज़बर था। उसके मन में सभी कुछ अस्पष्ट और बोझिल था और अपनी इस स्थिति को समझ पाने में असमर्थ वह इतना ज़रूर जानता था। केवल वोद्का की आधी बोतल ही उसके बोझ को कुछ हल्का कर सकती थी।

अकार्डियन-वादक किस्ल्याकोव चला आ रहा था। वह लाल रंग की रेशमी क़मीज़ और उसके ऊपर मख़मली वास्कट पहने था। अपने पतलून को वह लक़दक़ ऊंचे बूटों के भीतर खोंसे था, हरा गिलाफ़ चढ़ा अकार्डियन बग़ल में दबाये था। उसकी काली मूंछें तीर की भांति सीधी ऐंठी हुई थीं। उसकी टोपी बांकपन के साथ एक कान पर टिकी थी और उसके चेहरे से उद्दंडता तथा प्रसन्नता छलक रही थी। ओरलोव उसकी उद्दंड ख़ुशमिज़ाजी और अकार्डियन बजाने में उसकी दक्षता के लिए उसे चाहता था और उसके चिन्तामुक्त जीवन के लिए उससे ईर्ष्या करता था।

"बधाई हो, ग्रिगोरी, तुम्हें बधाई
जीत युद्ध में तुमने पाई
और साथ ही यह क्या पाया?
गुमटा उभर आंख पर आया।"

ओरलोव इस मज़ाक़ से नाराज़ नहीं हुआ यद्यपि वह इसे कम से कम पचास बार पहले भी सुन चुका था। फिर वह जानता था कि अकार्डियन-वादक दिल को ठेस लगाने की ग़रज़ से नहीं, बल्कि जी बहलाने के लिए इन पंक्तियों को दोहराता है।

"क्यों भाई, आज फिर जंग हुई?" मोची के सामने क्षण भर के लिए ठिठकते हुए किस्ल्याकोव ने कहा, "अरे ओ, ग्रिगोरी चूज़े, पके हुए खरबूज़े! अच्छा हो कि तुम उधर चलो, जिधर हम सब का रास्ता है..."

"कुछ देर बाद," बिना सिर उठाए ओरलोव ने कहा।

"इन्तजार करूंगा और वेदना सहूंगा..."

ओरलोव शीघ्र ही चला गया। तब तलघरे से एक नाटी-मोटी स्त्री दीवार का सहारा लेते हुए बाहर निकली। उसका सिर शाल से कसकर बंधा था जिसकी परतों के भीतर से सिर्फ़ एक आंख, थोड़ा-सा गाल और माथा झांक रहा था। लड़खड़ाते डगों से अहाते को पार कर वह भी उसी बर्फ़-गाड़ी पर आकर बैठ गई जिसपर उसका पति बैठा रहा था। उसे देखकर, किसी को अचरज नहीं हुआ – पति के चले जाने के बाद उसे इस तरह प्रकट होते देखने के वे आदी थे, और वे जानते थे कि वह उस समय तक वहां बैठी रहेगी जब तक, नशे में धुत्त और तोबा करता हुआ ग्रिगोरी, शराबख़ाने से वापिस नहीं आएगा। वह अहाते में इसलिए आकर बैठी थी कि खोली में उसका दम घुटता था और इसलिए भी कि नशे में धुत्त अपने पति को खोली की सीढ़ियां उतरने में उसे सहारा देना होता था: सीढ़ियां खड़ी और टूटी-फूटी थीं। एक बार ग्रिगोरी उनके ऊपर से गिर पड़ा था और उसकी कलाई की हड्डी टूट गई थी। दो सप्ताह तक वह काम नहीं कर सका था और दो जून खाना जुटाने के लिए उसे अपना सब कुछ गिरवी रखना पड़ा था।

तब से मात्र्योना बराबर उसकी प्रतीक्षा किया करती थी।

कभी-कभी उसके पड़ोसियों में से कोई एक उसके पास आ बैठता। आम तौर पर यह होता था अवकाश-प्राप्त फ़ौजी अफ़सर लेन्चेन्को – गम्भीर और समझदार, सिर घुटा हुआ और बैंगनी नाक तथा मूंछों वाला उक्रइनी।

"आज फिर सिर-फटौल हुआ?" उसके पास बैठते और जमुहाई लेते हुए वह पूछता।

"लेकिन तुम्हें इससे मतलब?" मात्र्योना झल्लाकर जवाब देती।

"मुझे कोई मतलब नहीं!" उक्रइनी कहता और इसके बाद लम्बी ख़ामोशी छा जाती।

मात्र्योना भारी सांस लेती जिससे उसकी छाती में कोई चीज घरघराती सी मालूम होती थी।

"तुम दोनों हमेशा लड़ते क्यों रहते हो? क्या चीज है जिसे लेकर तुम लोग उलझा करते हो?" उक्रइनी गम्भीरता से मामले की तह में जाना शुरू करता।

"यह हमारा निजी मामला है..." माल्योना ग्रोरलोवा संक्षिप्त उत्तर देती।

"हां, यह तो ठीक है," सिर हिलाते हुए लेव्चेन्को सहमति प्रकट करता।

"तब तुम बीच में टांग क्यों ग्रड़ाते हो?" ग्रोरलोवा सही तौर पर ही यह कहती।

"कैसी तेज ग्रौरत है! बोलते ज़बान पकड़ती है! तुम ग्रौर ग्रिगोरी दोनों बराबर की चोट हो। तुम दोनों की दिन में दो बार चमड़ी उधेड़ी जानी चाहिये – सुबह ग्रौर शाम। तब सारी चर्बी छंट जाएगी..."

झुंझलाकर वह उठ खड़ा होता ग्रौर वहां से चल देता। माल्योना को इससे बड़ी ख़ुशी होती। कुछ दिनों से ग्रहाते में यह कानाफूसी चल रही थी कि उक्रइनी उसे ग्रपने जाल में फंसा लेना चाहता है। माल्योना उससे ग्रौर उन सब लोगों से नाराज़ है जो दूसरों के मामलों में टांग ग्रड़ाते हैं। उक्रइनी चुस्त फ़ौजी डगों से ग्रहाते के दूसरे छोर पर पहुंच जाता। चालीस वर्ष का हो जाने पर भी मज़बूत ग्रौर चुस्त था वह।

ग्रचानक, जाने कहां से, सेन्का प्रकट हो उठता।

"लाल मिर्च की बुकनी है वह भी!" सिर से माल्योना की ग्रोर इशारा करते हुए वह लेव्चेन्को के कान में फुसफुसाया।

"लाल मिर्च की वह बुकनी मैं तुम्हारी ग्रांखों में झोंक दूंगा, समझे!" लेव्चेन्को ने धमकी दी, लेकिन मन ही मन वह मुस्कराया: वह चंचल सेन्का को पसन्द करता था ग्रौर उसकी बातों को बड़े ध्यान से सुनता था – उसे ग्रहाते के सभी भेदों की जानकारी जो रहती थी।

"उसे तुम उल्लू नहीं बना सकते," धमकी की उपेक्षा कर सेन्का कहता गया, "रंगसाज़ मक्सिम ने एक बार कोशिश की थी ग्रौर उसने उसकी ऐसी थूथनी रगड़ी थी कि मज़ा ग्रा गया था! मैंने ख़ुद ग्रपनी ग्रांखों से देखा था – उसने ख़ूब घूंसे बरसाए थे, जैसे ढोल बजा रही हो!"

जीवन से छलछलाता ग्रौर प्रभावशील, ग्राधा बच्चा ग्रौर ग्राधा वयस्क, केवल बारह वर्ष का सेन्का ग्रपने चारों ग्रोर की गन्दगी को उसी प्रकार जज़्ब कर रहा था जैसे स्पंज पानी को जज़्ब करता है। उसके माथे के ग्रार-पार एक महीन रेखा पड़ गई थी जो इस बात की सूचक थी कि सेन्का चीज़ों पर सोच-विचार भी करता है।

...अहाते में अंधेरा हो गया था। ऊपर गहरे नीले आकाश का एक चौरस खंड तारों से जगमगाता नजर आ रहा था। ऊपर से देखने पर ऊंची दीवारों से घिरा अहाता एक गहरे गड्ढे की भांति मालूम होता था। इस गड्ढे के एक कोने में बैठी एक छोटी-सी आकृति चोटों के दर्द को भुलाती हुई नशे में धुत्त होकर आनेवाले पति की प्रतीक्षा कर रही थी...

ओरलोव दम्पति का विवाह हुए चार साल हो गये थे। उनके एक बच्चा हुआ था, लेकिन वह अठारह महीने का होकर ही चल बसा था। इस निधन से दोनों को सदमा पहुंचा, लेकिन शीघ्र ही इस आशा ने उन्हें ढाढ़स बंधाया कि और बच्चा होगा।

निचले तल्ले की खोली, जिसमें वे रहते थे, लम्बी और अंधेरी थी। उसकी छत मेहराबदार थी। दरवाजे की बग़ल में, खिड़कियों की ओर मुंह किए, एक बड़ा रूसी तन्दूर था। तन्दूर और दीवार के बीच तंग रास्ता एक चौरस खोली तक जाता था जो अहाते की ओर खुलनेवाली दो खिड़कियों से आलोकित थी। खोली में रोशनी की तिरछी और धुंधली धारा प्रवेश कर पाती थी। सीलन और सड़ांध का उसमें ज़ोर था और बाक़ी दुनिया से वह अलग और कटी हुई मालूम होती थी। जीवन की हलचल कहीं ऊपर ही रहती थी और यहां उसका आभास केवल उन धुंधली और अस्पष्ट आवाज़ों के रूप में ही होता था जो धूल के रंगविहीन कणों के साथ उस खोह में आ गिरती थीं, जहां ओरलोव दम्पति रहते थे। तन्दूर के सामने पीले और गुलाबी फूलों वाले सूती पर्दे से ढकी दीवार के पास लकड़ी का एक बड़ा पलंग पड़ा था। दूसरी दीवार के पास एक मेज़ थी जिसपर मोची और उसकी बीवी खाते-पीते थे। पलंग और दीवार के बीच की जगह में, जहां रोशनी की दो धाराएं पड़ती थीं, वे अपना काम करते थे।

तिलचट्टे उदास भाव से दीवारों के ऊपर-नीचे रेंगते रहते थे और रोटी के गुंधे हुए कणों को – जिनसे पत्र-पत्रिकाओं से काटी हुई तस्वीरें दीवार पर चिपकायी गयी थीं – खाते रहते थे। बेजान-सी मक्खियां भनभनाती रहती थीं और दीवारों की गंदी भूरी पृष्ठभूमि में मक्खियों के दाग़ों से भरी हुई तस्वीरें काले पुचारों की भांति मालूम होती थीं।

ओरलोव दम्पति के दिन का कार्यक्रम इस प्रकार शुरू होता था।

सुबह छः बजे माल्योना उठती, हाथ-मुंह धोती, लड़ाइयों-झगड़ों में जहां-तहां से टूटे तथा टीन के पैबन्द लगे समोवार को गर्म करती; समोवार में पानी उबलने तक खोली को साफ़ करती और दुकान से सौदा ले आती, फिर अपने पति को जगाती और उसके उठने तथा हाथ-मुंह धोने तक मेज़ पर समोवार का संगीत शुरू हो जाता और वे दोनों चाय तथा एक पौंड सफ़ेद रोटी का नाश्ता करने बैठ जाते।

ओरलोव अच्छा मोची था और उसके पास हमेशा काम की भरमार रहती थी। नाश्ता करते समय वह दिन भर के कामों को बांटता। उन कामों को वह ख़ुद करता जिनके लिए उस्तादी दरकार होती, छोटे-मोटे कामों को—जैसे धागे में मोम लगाना, पतावे चिपकाना और नयी एड़ियों में कीलें ठोंकना—वह माल्योना के लिए छोड़ देता। नाश्ते के समय ही वे यह भी तय करते कि आज दोपहर को क्या भोजन बनेगा। जाड़ों में, जब अधिक खाना चाहिए, यह विषय ख़ासा दिलचस्प रहता। गर्मियों में वे किफ़ायत करते और केवल पर्व-त्योहारों पर ही तन्दूर गरमाते, और सो भी हर पर्व पर नहीं। तब उनका मुख्य भोजन होता या प्याज वाला क्वास का शोरबा, नमक लगी मछली और कभी-कभी मांस, जिसे वे अपने पड़ोसियों में से किसी एक के तन्दूर में पकवा लेते थे। नाश्ता ख़त्म करके वे काम में जुट जाते—ग्रिगोरी अचार के एक औंधे पीपे पर, जो एक बाज़ू से कटा हुआ था और जिसपर चमड़े की गद्दी बिछी थी, और माल्योना उसकी बग़ल में ही एक छोटे-से स्टूल पर।

शुरू-शुरू में वे चुपचाप काम करते—बातें करने के लिए उनके पास ऐसा था भी क्या? बीच-बीच में काम के बारे में इक्के-दुक्के शब्द उनके मुंह से निकलते और फिर निस्तब्धता छा जाती। इस तरह आधेक घंटा बीत जाता। हथौड़ी खुटखुट करती रहती और धागा चमड़े के बीच से खिंचने पर स्विश-स्विश की आवाज़ करता रहता। ग्रिगोरी जब-तब जमुहाई लेता जिनके अन्त में अदबदाकर उसके मुंह से गुर्राने या कराहने की आवाज़ निकलती। माल्योना लम्बी सांस खींचती। कभी-कभी ग्रिगोरी कोई गीत गुनगुनाने लगता। उसकी आवाज़ कुछ कर्कश थी, लेकिन वह गाता अच्छा था। गीत के उदास बोल कभी रेलपेल मचाते और इतनी उतावली के साथ ग्रिगोरी के कंठ से उमड़ते, मानो उन्हें डर हो कि कहीं वे मुंह में ही न रह जाएं, और कभी शोकपूर्ण लय में गुंथे, "आह" और "ओह" के

उद्‌गारों के साथ, ऊंचे और उद्वेगपूर्ण स्वर में खिड़कियों में से निकल अहाते में तैरने लगते। माल्योना की भारी कोमल आवाज़ पति की आवाज़ का साथ देती। दोनों के चेहरे उदास और चिन्तनशील हो जाते और ग्रिगोरी की काली आंखों में एक धुंध-सी छा जाती। माल्योना को जैसे कुछ सुध-बुध न रहती, एक तरह के आवेश में मंत्र-मुग्ध सी हो दायें-बायें डोलती, चरम आनन्द से विह्वल हो गीत की कड़ी को बीच में ही छोड़ देती और फिर से उसे पति की लय के साथ-साथ पकड़ लेती। गाते समय दोनों में से किसी एक को भी दूसरे का ध्यान न रहता और वे किसी और के शब्दों में ख़ुद अपने अंधकारमय जीवन की समूची ऊब और सूनापन भरने का प्रयास करते, अपने हृदय में जन्मे अस्पष्ट, अर्द्ध-आकारी विचारों और भावनाओं को उन शब्दों के द्वारा व्यक्त करने का प्रयत्न करते।

कभी-कभी ग्रिगोरी अपने मन से ही गीत के बोल गढ़ लेता—

"आह, यह जी-ई-व-न मेरा!
ओह, यह जीवन ऊब भरा!
आह, यह दुख की घोर घटा!
ओह, यह दुख से मरा मरा!"

माल्योना को यह मनगढ़ंत जोड़-तोड़ अच्छा न लगता।

"बन्द करो यह विलाप! किसी के मरने से पहले जैसे कुत्ता रो रहा हो!"

इससे वह हमेशा झुंझला उठता—

"वाह, भूतनी कहीं की! समझती कुछ ख़ाक-पत्थर नहीं! सुअर-मुंही कहीं की!"

"रोना ख़त्म हुआ तो अब भौंकना शुरू कर दिया..."

"बहुत ज़बान न चला और अपना काम कर। मुझे क्या तू अपना चेला समझती है जो लगी डांटने?"

माल्योना यह देखकर कि उसके गले की नसें उभर रही हैं और उसकी आंखों में एक कुत्सित चमक मंडरा रही है, अपना मुंह बन्द कर लेती और देर तक बन्द किए रहती, पति कुछ पूछता तो भी जान-बूझकर जवाब न देती। लेकिन वह था कि उसका पारा जितनी जल्दी चढ़ता था, उतनी ही जल्दी हमेशा उतर भी जाता था।

वह उसकी नजरों से, जिनमें फिर से मेल करने की चाह और मुस्कराहट देखने की इच्छा होती, अपनी नजरें न मिलने देती। साथ ही वह इस भय से भी कांपती रहती कि उसकी भावनाओं के साथ इस तरह का खिलवाड़ कहीं उसके जंगली गुस्से को न कुरेद दे। लेकिन फिर भी उससे नाराज होने और मेल करने के लिए उसके प्रयासों को देखने में उसे सुख मिलता – कम से कम वह अपने को जीवित, स्पन्दनशील और सूझबूझ से सम्पन्न अनुभव करती...

दोनों ही युवा और स्वस्थ थे, दोनों एक दूसरे से प्यार करते थे और दोनों को एक दूसरे पर गर्व था। ग्रिगोरी इतना बलशाली, इतना उत्साही और इतना ख़ूबसूरत था और माल्योना गोरी-चिट्टी, ख़ूब गुदगुदी और भूरी आंखों में एक चमक लिए थी – निरी रसभरी है, जैसा कि अहाते के लोग उसके बारे में कहा करते थे। वे एक दूसरे को प्यार करते थे, लेकिन वे जीवन से ऊबे हुए थे, उनकी ऐसी कोई दिलचस्पियां न थीं, कोई ऐसी नयी अनुभूतियां उन्हें नहीं होती थीं जो उन्हें एक दूसरे से उबारतीं और सोचने तथा अनुभव करने की – एक शब्द में सजीव जीवन बिताने की – साधारण मानवीय आकांक्षा को तुष्ट करतीं। यदि उनके जीवन का कोई उद्देश्य होता – चाहे वह कौड़ी-कौड़ी करके धन जमा करने का ही उद्देश्य होता, तब तो निस्सन्देह उनका जीवन कहीं आसान होता।

लेकिन उनके जीवन में तो यह भी नहीं था।

हमेशा एकसाथ गुंथे, वे एक दूसरे के – एक दूसरे के प्रत्येक शब्द और प्रत्येक हरकत के – अभ्यस्त हो गये थे। दिन के बाद दिन आते और चले जाते, बिना किसी ताजगी और मनबहलाव के। कभी-कभी छुट्टियों के दिनों में वे अपने मित्रों के यहां जाते जिनकी आत्माएं उन्हीं की भांति खोखली होतीं, और कभी-कभी मित्रों का उनके यहां आना होता, गाना-बजाना और पीना-पिलाना चलता और उतने ही सहज भाव से मार-पीट तक की नौबत भी आ जाती। इसके बाद फिर वही, एक अदृश्य जंजीर की कड़ियों की भांति, घटनाविहीन दिनों का सिलसिला चलता – प्रत्येक दिन काम के बोझ, ऊब और एक दूसरे के प्रति बेतुकी चिड़चिड़ाहट में डूबा हुआ।

कभी-कभी ग्रिगोरी कहता –

"यह भी कोई जीवन है कम्बख़्त! मुझे इससे क्या लेना? काम करो और ऊबो, ऊबो और काम करो..." क्षण भर के लिए रुककर वह अपनी आंखें उठाता और छत की ओर ताकता। फिर अपने होंठों पर मुस्कराहट की एक छाया-सी लाते हुए कहना जारी रखता, "ख़ुदा की मर्ज़ी से मेरी मां ने मुझे इस दुनिया में जन्म दिया—सो इसके ख़िलाफ़ मैं कुछ नहीं कह सकता। फिर मैंने अपना धंधा सीखा... लेकिन किसलिए? क्या दुनिया में मोचियों का टोटा था? अच्छी बात है, मैं मोची बन गया, लेकिन मिला क्या? बस, इस खोह में पड़े जूते बनाते रहो। और इसके बाद एक दिन मर जाओ। कहते हैं कि हैज़े का ज़ोर है... हुआ करे। कभी यहां ग्रिगोरी ओरलोव नाम का एक मोची रहता था जो हैज़े से मर गया। क्या इसमें कोई तुक है? किसे पर्वाह है इस बात की कि मैं जीवित था और जूते बनाता था और फिर मर गया?"

मात्र्योना कोई टिप्पणी न करती। अपने पति के शब्दों में उसे कुछ ऐसा मालूम होता जो भयानक था। कभी-कभी वह उससे अनुरोध करती कि ऐसी बातें मुंह से न निकाला करे क्योंकि उनसे ख़ुदा नाराज़ होता है जो जानता है कि लोगों के जीवन को कैसा क्या रूप दिया जाए। या फिर, जब उसका मिज़ाज ठिकाने पर न होता, तो व्यंगपूर्वक कहती—

"अगर तुम पीना छोड़ दो तो तुम्हारा जीवन अधिक सुखी हो जाए और तुम्हारे दिमाग़ में ऐसी बातें न आया करें। रोने-झींकने के बजाय दूसरे लोग एक-एक पैसा बचाकर अपना निजी वर्कशाप तक खड़ी कर लेते हैं और कुलीनों की भांति मज़े से जीवन बिताते हैं।"

"गोबर जैसा तेरा दिमाग़ है और गोबर जैसी तेरी बातें हैं! अक़्ल की डोर खींचकर ज़रा अपने से ही पूछ कि मैं पीना कैसे छोड़ सकता हूं—वही तो मेरे जीवन का एकमात्र आनन्द है! अन्य लोग! बहुत जानती हो तू ऐसे ख़ुशक़िस्मतों के बारे में? शादी से पहले क्या मैं ऐसा ही था? अगर सच पूछो तो तूने ही मेरा सारा रस सोख लिया है और मेरे जीवन में ज़रा-सा भी आनन्द बाक़ी नहीं रहने दिया है... बस, मेंढक की भांति टर्राना जानती है!"

मात्र्योना को ठेस लगती, लेकिन वह अपने पति के शब्दों की सचाई से इनकार नहीं कर सकती—नशा करने पर वह सचमुच प्रसन्नता और

प्यार से छलछलाने लगता था, और वे "अन्य लोग" सचमुच उसके अपने दिमाग़ की उपज थे, और ग्रिगोरी विवाह होने से पहले सचमुच ही एक मगन जीवन था—बहुत सहृदय और दिलचस्प...

"ऐसा क्यों है? क्या मैं सचमुच उसके लिए बोझ बन गई हूं?" वह मन ही मन अपने से पूछती।

इस विचार से उसका मन कसमसा उठता और उसे दोनों पर ही तरस आने लगता। उसके पास जाकर दुलार से वह उसकी आंखों में देखती और उसकी छाती से चिपक जाती।

"अब यह अपनी जीभ से मुझे चाटना शुरू कर देगी, बछिया कहीं की!" ग्रिगोरी उदास भाव से कहता और उसे धकियाकर अलग करने के लिए कुछ उचकता, लेकिन वह और भी अधिक सटकर उससे चिपक जाती, निश्चय के साथ यह जानते हुए कि वह उसे छिटकाकर अलग नहीं करेगा।

इसपर उसकी आंखों में लौ सी जल पड़ती, हाथ के काम को वह फेंक देता, अपनी बीवी को घुटनों पर बैठा लेता और उसे बारम्बार चूमता, गहरी उसांसें भरता और धीमी आवाज़ में—मानो इस डर से कि कोई सुन न ले—गुनगुनाता—

"सच, मात्र्योना, बड़े कुत्सित ढंग से जीवन बिताते हैं हम! जंगली जानवरों की भांति हम एक दूसरे पर टूटते हैं... और क्यों? इसलिए कि मेरा भाग्य ही ऐसा है—हर आदमी एक ख़ास ग्रह के असर में जन्म लेता है और वह ग्रह उसका भाग्य होता है!"

लेकिन इस व्याख्या से उसे सन्तोष न होता, वह अपनी बीवी को और भी निकट खींच लेता और सोच में डूब जाता।

बहुत देर तक वे अपनी अंधेरी खोली की गंदी हवा में इसी प्रकार बैठे रहते। वह उसांसें भरती और मुंह से कुछ न कहती, लेकिन कभी-कभी—सुख के इन क्षणों में—उन अपमानों और चोटों की उसे याद हो आती जो उसने बिला वजह उसके हाथों सहे थे। तब वह धीरे-धीरे रोती और गिला करती।

उसकी मृदु शिकायतों से उसका हृदय पिघल जाता, वह और अधिक उमड़कर उसे दुलराता जिससे उसकी आंखें और भी अधिक छलछला उठतीं। अन्त में वह खीज उठता।

"बन्द करो यह रोना-धोना! कौन कह सकता है कि जब मैं तुम्हें पीटता हूं तो उससे मुझे तुम्हारी निस्बत हजार गुना ज्यादा दुख नहीं होता, सुना तुमने? सो बन्द करो अपना मुंह! स्त्रियां होती ही ऐसी हैं, जरा ढंग से बोले नहीं कि सिर पर चढ़ बैठीं। बस, बहुत रिरिया चुकीं। उस आदमी से तुम क्या कहोगी जो जीवन से बुरी तरह तंग है?"

कभी-कभी पत्नी के मूक आंसुओं और हृदय से उमगी शिकायतों की बाढ़ के सामने वह नर्म पड़ जाता और चीजों को समझाने का निरीह प्रयास करता —

"अपने मिजाज का मैं क्या करूं? तुम्हारे साथ बुरा बर्ताव करता हूं, यह तो ठीक है। यह भी मैं जानता हूं कि सिवा तुम्हारे मेरा अन्य कोई नहीं है... लेकिन हमेशा मुझे यह ध्यान नहीं रहता। मान्योना, कभी-कभी तो तुम्हें फूटी आंखों देखना भी मुझे बरदाश्त नहीं होता। जैसे तुमसे मेरे जी भर गया हो। तब एक पागलपन सा मेरे हृदय में सरसराने लगता है, जी करता है कि तुम्हारी बोटी-बोटी नोच डालूं और साथ ही अपने को भी चीर फाड़कर फेंक दूं। और जितना ही अधिक तुम सही होती हो, उतना ही अधिक मैं तुम्हें पीटना चाहता हूं..."

ग्रिगोरी की बात मान्योना की समझ में चाहे आती या न आती, लेकिन कोमल और पश्चाताप-भरा उसका स्वर मरहम का काम करता।

"ख़ुदा ने चाहा तो सब ठीक हो जाएगा, हम दोनों एक दूसरे के अभ्यस्त हो जाएंगे," वह कहती और उसे इस बात का भान तक न होता कि वे एक मुद्दत से एक दूसरे के अभ्यस्त रहे हैं और एक दूसरे को पूरी तरह उबा चुके हैं।

"घर में अगर कोई बच्चा होता तो अच्छा रहता," उसांस भरते हुए वह कहती, "उससे जी भी लगता और उसकी देख-भाल में ध्यान भी बंटा रहता।"

"तो फिर तुम कोई बच्चा जनती क्यों नहीं?"

"जिस बुरी तरह तुम मेरी पिटाई करते हो, मैं बच्चा जन ही कैसे सकती हूं। तुम हमेशा पेट और पसलियों पर ही टूट पड़ते हो... कम से कम तुम अपने पांवों को ही बस में रखते..."

"हुंह," सकपकाकर ग्रिगोरी भुनभुनाया, "जैसे आदमी ऐसे क्षणों में यह सोच सकता हो कि उसे कहां प्रहार करना चाहिए और कहां नहीं।

मैं भी कोई राक्षस नहीं हूं... मैं क्या मजे के लिए ऐसा करता हूं? यह तो मेरी ऊब है जो मुझे इस तरह पागल बना देती है..."

"कहां से आ गई है यह ऊब तुममें?" माल्योना ने उदास भाव से पूछा।

"यह मेरा भाग्य है, माल्योना," ग्रिगोरी दार्शनिक की भांति कहता, "मेरा भाग्य और मेरा स्वभाव... मेरी ओर देखो, क्या मैं किसी से बुरा हूं? मिसाल के तौर पर जैसे उस उक्रइनी से? लेकिन फिर भी ऊब उसे नहीं दबोचती। वह एकदम अकेला है—न बीवी और न अन्य कोई... अगर तुम न होतीं, तो मैं तो मर जाता... उसे इन सब बातों की कोई चिन्ता नहीं। बस, वहां बैठा हुआ अपना पाइप पीता और मुस्कराता रहता है, इस बात से सन्तुष्ट कि उसके पास धुवां उड़ाने के लिए पाइप है—शैतान कहीं का। लेकिन मैं वैसा नहीं हूं... मैं हृदय में बेचैनी लिये जन्मा हूं। यह मेरा स्वभाव है... मैं स्प्रिंग की भांति हूं—जरा छुआ नहीं कि वह थरथराने लगता है... मिसाल के लिये, मैं बाहर सड़क पर जाता हूं और वहां तरह-तरह की चीजें देखता हूं। लेकिन मेरे पास कुछ भी नहीं है। और इससे मेरे दिल को बड़ी ठेस लगती है। वह उक्रइनी—वह कुछ पर्वाह नहीं करता, किसी भी चीज के बिना वह गुजारा कर सकता है। मुझे तो इस बात से भी ठेस लगती है कि वह मूंछों वाला कुछ नहीं चाहता, जबकि मैं... सब कुछ पाना चाहता हूं! लेकिन मैं हूं कि इस खोह में बैठा बस काम करता हूं और मेरे पास कुछ भी नहीं है। या तुम अपने को ही लो... तुम मेरी पत्नी हो, लेकिन इससे क्या? अन्य सब की भांति तुम भी एक स्त्री हो, स्त्रियों के सभी ताम-झाम और तीर-तरकश से लैस... तुम्हारे बारे में सभी कुछ मैं जानता हूं; यह तक कि कल तुम किस तरह छींकोगी, क्योंकि मैं तुम्हें और कुछ नहीं, तो एक हजार बार छींकते सुन चुका हूं... सो हृदय में कोई तरंग उठे भी तो किस चीज को लेकर? एक भी ऐसी चीज नहीं। इसीलिये मैं शराबख़ाने की राह नापता हूं क्योंकि वहां कुछ ख़ुशी तो मिलती है।"

"तो फिर तुमने विवाह क्यों किया?" माल्योना ने पूछा।

ग्रिगोरी हल्की-सी हंसी हंसा—

"यह केवल शैतान ही बता सकता है," उसने कहा, "सच तो यही है कि मुझे कभी इस जंजाल में नहीं फंसना चाहिए था... मैं आवारा

रहता तो अच्छा होता... बेशक भूखे मरो, लेकिन आजाद तो रहो। दुनिया के सारे ओर-छोर नाप डालो!"

"तो अब चले जाओ और मुझे भी आज़ाद कर दो," मात्योना ने कहा। उसकी आंखों में आंसू छलछला आए थे।

"तुम कहां जाना चाहती हो?" ग्रिगोरी ने भौंहें चढ़ाकर पूछा।

"कहीं भी जाऊं, तुमसे मतलब?"

"कहां जाओगी?" और उसकी आंखों में गुस्से की चिंगारी कौंध गई।

"चिल्लाओ नहीं–तुम मुझे डरा नहीं सकते..."

"तो क्या कोई और ढूंढ़ लिया? बोलो!"

"मुझे जाने दो!"

"कहां?" ग्रिगोरी गरजा।

ग्रिगोरी ने उसके बाल पकड़कर खींचे। उसके सिर का रूमाल झटके से अलग जा गिरा। उसकी इस हिंसा से वह आग बबूला हो गई लेकिन इस गुस्से से उसे भारी सन्तोष मिला। वह अपने हृदय की अन्ततम गहराइयों तक आन्दोलित हो उठी जिसके फलस्वरूप, बजाए इसके कि कोई ऐसा शब्द उसके मुंह से निकलता जो उसकी आशंकाओं को दूर करता, उसने लपटों को और भी भड़का दिया और भेद-भरी मुसकराहट के साथ सीधे उसकी आंखों में देखा। वह बेक़ाबू हो गया और उसे पीटने लगा–बेरहमी से पीटने लगा।

और रात को, जब वह उसकी बग़ल में बिस्तर पर पड़ी कराह रही थी–बुरी तरह नोची-खरोंची और टूटी हुई–ग्रिगोरी ने कनखियों से उसकी ओर देखा और गहरी उसांस भरी। वह बेहद दुखी था। उसकी आत्मा उसे कचोट रही थी–वह समझता था कि उसकी ईर्ष्या अकारण थी और उसने अकारण ही उसे पीटा था।

"बस, बस, बहुत हो चुका," उसने व्यथित स्वर में कहा, "क्या मैं ही दोषी हूं? तुम भी तो कुछ कम नहीं हो। मुझे कुरेदते जाने के बजाए तुमने कुछ कहा क्यों नहीं? तुमने ऐसा क्यों किया?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह जानती थी कि उसने ऐसा क्यों किया था। वह जानती थी कि अब जब वह नोची-खरोंची और लहूलुहान हुई पड़ी है, उसे प्यार और दुलार मिलेगा–कोमल और उमंगों से भरा दुलार–फिर से मेल करने के लिए। और इस के लिए दिन प्रति दिन अपने

हाड़ तुड़वाने की वेदना सहने को भी वह तैयार थी। इस आनन्द की पूर्वकल्पना करके उसकी आंखें छलछला उठीं, हालांकि उसके पति ने अभी उसके तन का स्पर्श तक नहीं किया था।

"बस करो, मात्योना, मेरी नन्ही चिरैया, रोओ नहीं, मुझे माफ़ करो, मेरी रानी!" कहते हुए उसने उसके बाल सहलाये, उसे चूमा और समूचे शरीर में उमड़ते पश्चात्ताप को दवाने के लिए ज़ोर से अपने दांत भींचे।

खिड़कियां खुली थीं, लेकिन आकाश के दृश्य को ईंटों की एक दीवार ने काटकर ओझल कर दिया था। सदा की भांति उनके कमरे में अंधेरा था, उमस थी और दम घुटता था।

"उफ़, क्या जीवन है यह! कुत्ते का जीवन!" अपनी समूची वेदना को, जिसे वह अनुभव कर रहा था, व्यक्त करने में असमर्थ ग्रिगोरी फुसफुसा उठा, "यह सब इस खोह की करतूत है, मात्योना, जिसमें हम रहते हैं। ऐसा मालूम होता है जैसे समय से पहले ही हमें धरती में दफ़ना दिया गया हो..."

"तो चलो, कहीं और चलें—किसी नयी जगह," उसके शब्दों को ज्यों का त्यों लेते हुए आंसुओं के बीच उसने कहा।

"नहीं, तुम मेरा मतलब नहीं समझीं! अगर हम किसी अटारी पर भी जा रहें, तब भी हमारा जीवन गड्ढे में ही रहेगा, क्योंकि गड्ढा यह खोली नहीं, बल्कि जीवन ख़ुद अपने आपमें एक गड्ढा है!"

मात्योना ने एक क्षण कुछ सोचा—

"ख़ुदा ने चाहा तो हमारे अच्छे दिन भी आएंगे..."

"अच्छे दिन आएंगे—तुम हमेशा यह राग अलापती रहती हो। लेकिन अच्छे होने के बजाए वे बदतर होते जा रहे हैं... अब हममें कहीं अक्सर लड़ाई होती है।"

यह सच था। उनके झगड़ों के बीच की अवधि अधिकाधिक कम होती जा रही थी, यहां तक कि अब हर शनिवार को जब ग्रिगोरी उठता था तो उसका हृदय उसके प्रति कड़ुवाहट से कसमसाता रहता था।

"आज मैं गंजू के शराबख़ाने में जाकर ख़ूब गहरी डुबकी लगाऊंगा..." वह ऐलान करता।

मात्योना अपनी आंखें सिकोड़ लेती और मुंह से कुछ न कहती।

11*

"एकदम चुप? यह ठीक है। अगर तुम्हें अपने हाड़ नहीं तुड़वाने तो मुंह बन्द ही रखना।"

दिन के दौरान वह अनेक बार अपने इस इरादे की उसे याद दिलाता, जैसे-जैसे सांझ निकट आती उसकी कटुता भी उतनी ही बढ़ती जाती। वह महसूस करता कि उसकी बात से बीवी को ठेस लगती है और वह आग बबूला हो उठता उसकी उस हठीली चुप से, जिससे माल्योना उसके ऐलानों की अभ्यर्थना करती और उसकी आंखों की उस निर्मम चमक से, जो कहती प्रतीत होती थी कि मैं तुम्हारा प्रतिरोध करने के लिए तैयार हूं।

सांझ को, उनके दुर्भाग्य का संदेशवाहक सेन्का चीजिक घोषणा करता कि युद्ध छिड़ गया है।

अपनी पत्नी को पीटने के बाद ग्रिगोरी ग़ायब हो जाता, बहुधा रात भर के लिए और कभी-कभी तो रविवार को भी न लौटता। जब वह आता तो माल्योना, समूचे बदन पर नोच-खरोंच तथा नील के निशान लिये, उसका स्वागत करती – चुपचाप और रुखाई से, लेकिन फटेहाल और गंदे-मंदे, अंगारे की तरह जलती आंखों वाले और अक्सर अपनी ही तरह पिटे-पिटाये ग्रिगोरी के प्रति हृदय में तरस की एक गुप्त भावना छिपाए हुए।

यह जानते हुए कि उसे खुमार होगा, वह उसे सहज बनाने के लिये आधी बोतल वोद्का तैयार रखती। उसे भी यह मालूम होता था।

"जाम लाओ," वह फटी-सी आवाज़ में कहता और दो-तीन जाम गले से उतारने के बाद अपना काम करने बैठ जाता...

दिन भर उसकी आत्मा उसे कचोटती, उसका हृदय वेदना से व्यथित हो उठता और यह वेदना बहुधा इतनी असह्य होती कि वह अपना काम बंद करके कोसता और गालियां देता, कमरे में पागलों की भांति मंडराता या बिस्तर पर औंधे मुंह गिर जाता। माल्योना उसे अपने आपको संभालने का समय देती और इसके बाद दोनों में फिर मेल हो जाता।

मान-मनुहार के ये क्षण पहले तो काफ़ी मधुर और मर्मवेधी होते थे, लेकिन धीरे-धीरे वे अधिकाधिक नीरस होते गए और अन्त में तो वे केवल इसलिए सुलह कर लेते थे कि अगले शनिवार के बीच में पड़नेवाले पांच दिनों तक एक दूसरे से बोले बिना रहा नहीं जा सकता था।

"तुम्हारी जान लेकर रहेगी यह बोतल," माल्योना उसांस भरती।

"बिल्कुल," ग्रिगोरी पुष्टि करता और इस अन्दाज़ से थूक की पिचकारी छोड़ता मानो उसे इस बात की रत्ती भर भी चिन्ता नहीं है कि शराब उसकी जान लेती है कि नहीं। "और तुम मुझे छोड़कर भाग जाओ," भविष्य के चित्र को पूर्ण करने के लिए वह इतना और जोड़ देता और यह कहते हुए कुरेदनेवाली नज़र से उसे देखता।

वह अपनी आंखें नीचे कर लेती। यह एक नयी चीज़ थी जो वह पहले कभी नहीं करती थी। ग्रिगोरी यह देखता, अपनी भौंहें सिकोड़ता और दांतों को ज़ोर से पीसता। अपने पति के अनजाने वह तक़दीर का हाल बतानेवालों और ओझाओं के पास जाती और मंत्र-सिद्ध जड़ी-बूटियां तथा कोयले के टुकड़े लिये घर लौटती। इन सब के कारगर सिद्ध न होने पर उसने सन्त बोनिफ़ेस की पूजा कराई जो पियक्कड़ों को सीधा करनेवाला सन्त माना जाता था। जब तक पूजा चली, घुटनों के बल बैठ वह ख़ूब आंसू बहाती रही और उसके कांपते होंठ चुपचाप हिलते रहे।

अपने पति के प्रति एक प्रकार की जंगली घृणा अब अधिकाधिक उसे दबोचती, एक से एक विकृत विचार उसके दिमाग़ में सरसराते और उसका हृदय उस आदमी के प्रति अधिकाधिक कठोर होता जाता था, जिसकी उमगती खिलखिलाहट, प्यार-दुलार और मधुर शब्दों ने तीन साल पहले उसका जीवन जगमगा दिया था।

इस प्रकार ये दोनों व्यक्ति, जिनमें से कोई भी हृदय का बुरा नहीं था, एक-एक दिन बिता रहे थे और किसी ऐसी घटना की प्रतीक्षा कर रहे थे, जो उनके जीवन के इस बीभत्स क्रम की यंत्रणा का अन्त कर देगी...

एक सोमवार की सुबह को जब ओरलोव दम्पति नाश्ता कर रहे थे, उनकी उदास खोली के दरवाज़े पर एक पुलिसमैन का रोबीला आकार नमूदार हुआ। ओरलोव चौंककर उछला, पिछले कुछ दिनों की घटनाओं की याद ताज़ा करने के लिए ख़ुमारी में डूबे अपने दिमाग़ से जूझा और अत्यन्त भयानक आशंकाओं से घिरा, नज़र गड़ाकर, धुंधली आंखों से आगन्तुक की ओर देखने लगा। उसकी बीवी सहमी और प्रश्नसूचक दृष्टि से देख रही थी।

"इधर आओ, इस तरफ़," पुलिसमैन ने बाहर किसी को आवाज़ दी।

"यह कम्बख़्त तो अंधी गुफा है। शैतान उठा ले जाए सौदागर पेतुन्निकोव को!" प्रसन्नता से छलछलाती एक युवा आवाज़ सुनाई दी और अगले ही क्षण यूनीवर्सिटी की सफ़ेद पोशाक पहने एक छात्र ने खोली में प्रवेश किया। वह अपनी टोपी को हाथ में थामे था, उसके बाल बारीक छंटे हुए थे, उसका माथा ऊंचा और सांवला था और आंखें सुनहरी थीं जो चश्मे के भीतर से मगन भाव से चमक रही थीं।

"नमस्कार," उसने गहरी आवाज़ में कहा, "पहले अपना परिचय दे दूं—मैं सफ़ाई का इन्स्पैक्टर हूं। मैं यह मुआयना करने आया हूं कि आप लोग कैसे रहते हैं—उस हवा को सूंघने, जिसमें आप लोग सांस लेते हैं, सचमुच, बुरी तरह गंधायी हुई है वह!"

ओरलोव मुस्कराया और उसने राहत की सांस ली। इस छात्र ने तुरत उसके हृदय में घर कर लिया—गेहुंवा गालोंवाला उसका चेहरा कुछ इतना गुलाबी, स्वस्थ और सहृदय था कि अनायास ही अपनी ओर खींचता था। वह कुछ इतने असाधारण और मिलनसार ढंग से मुसकरा रहा था कि उसकी वजह से ओरलोव की इस खोली में एक उजाला-सा भर गया और एक आनन्द-सा छलछला उठा।

"हां तो, भले लोगो," वह बिना रुके कहता गया, "कूड़ा-कचरा बाहर फेंकने पर अब और अधिक ध्यान देना, क्योंकि यह कूड़ा-कचरा ही है जिससे यह सड़ांध निकलती है। मालकिन, तुम्हें भी मेरी यही सलाह है कि मांजन-धोवन की अपनी बाल्टी को और ज्यादा साफ़ रखा करो। और तुम अपना चेहरा क्यों लटकाये हो?" कहते हुए उसने ओरलोव का हाथ अपने हाथ में लिया और उसकी नब्ज़ देखने लगा।

छात्र के फुर्तीले हाव-भाव और व्यवहार ने ओरलोव दम्पति को सन्न कर दिया। मात्योना सकपकाई-सी मुस्करा रही थी और मुंह से कुछ कहे बिना उसे देख रही थी। ग्रिगोरी की मुस्कान में अविश्वास था।

"और तुम्हारे पेटों का क्या हाल है?" छात्र ने पूछा, "लजाओ नहीं, पेट हम सभी के हैं... और अगर वे तुम्हें कुछ परेशान कर रहे हैं तो हम अनेक प्रकार की दवाइयां देंगे जिनसे सब ठीक हो जाएगा।"

"हम बिल्कुल ठीक हैं... किसी तरह की कोई शिकायत नहीं," ग्रिगोरी ने मुस्कराते हुए कहा, "और यह, जो तुम मुझे कुछ ढीला-ढाला

देख रहे हो, सो वह—सच पूछो तो वह इसलिए कि...अभी थोड़ा ख़ुमार बाक़ी है।"

"ठीक कहते हो। मेरी नाक भी मुझे ऐसा ही बता रही थी, रात तुमने थोड़ा रंग-पानी किया है, बहुत ही थोड़ा..."

उसने यह बात कुछ ऐसे मज़ाक़िया ढंग से कही और कुछ ऐसा अटपटा सा मुंह बनाया कि ग्रिगोरी ठहाका मारकर हंसने लगा। माव्योना भी ऐप्रन से मुंह ढके हंस रही थी। सबसे ज़ोरदार और सबसे गहरी हंसी थी छात्र की, लेकिन वह चुप भी सबसे पहले हो गया। उसके गदराए हुए होंठों और आंखों के इर्द-गिर्द से जब हंसी की सलवटें साफ़ हो गईं तो उसका खरा चेहरा पहले से भी अधिक भला मालूम होने लगा।

"मेहनतकश रंग-पानी करे, यह ठीक है—बशर्ते कि वह बस करना जानता हो। लेकिन आजकल के ज़माने को देखते हुए अच्छा यही है कि उससे अलग ही रहा जाए। क्या तुम उस बीमारी के बारे में कुछ जानते हो जो लोगों को रौंद रही है?"

और उसने उन्हें बड़ी गम्भीरता से और सीधे-सादे शब्दों में यह बताया कि हैज़ा क्या है और कैसे उसका मुक़ाबला किया जा सकता है। वह बताता जाता था और कमरे में टहल-टहलकर दीवारों को छूता था, कभी उस कोने में झांककर देखता था, जहां धोवन की बाल्टी और कूड़े का कनस्तर रखा था, कभी तन्दूर के दरवाज़े को झुककर सूंघता कि उससे जो गंध निकल रही है वह किस चीज़ की हो सकती है। उत्साह के प्रवाह में उसकी मन्द आवाज़ रह-रहकर ऊंची हो जाती थी। सीधे-सादे शब्द, जिन्हें वह इस्तेमाल कर रहा था, श्रोताओं की स्मृति में एक के बाद एक मज़बूती से सिलसिलेवार टंकते जाते थे—अपने आप, उनकी ओर से बिना किसी प्रयास के। उसकी आंखें चमक रही थीं और उसका रोम-रोम अपने कार्य के प्रति उत्साह से भरा था।

ग्रिगोरी उसे देख रहा था और उसके चेहरे पर एक उत्सुकतापूर्ण मुस्कराहट खेल रही थी। माव्योना अपनी नाक से फूं-फूं कर रही थी और पुलिसमैन ग़ायब हो गया था।

"सो आज से ही सफ़ाई शुरू कर दो। मोहल्ले में उस ओर एक घर बन रहा है। वहां से मजूर मिल जाएंगे। उन्हें पांच कोपेक देना और चाहे

जितना चूना लेना। श्रौर यह पीना भी बंद कर दो... श्रव मैं चलता हूं... फिर कभी श्राऊंगा..."

जिस श्राकस्मिकता के साथ वह श्राया था, वैसे ही वह श्रोझल भी हो गया। श्रोरलोव दम्पति के चेहरों पर खिली मुस्कानों के रूप में उसकी हंसती हुई श्रांखों की याद श्रंकित थी। उनके श्रंधकारमय जीवन में सोद्देश्य शक्ति के इस विक्षेप ने उन्हें श्रस्त-व्यस्त कर दिया था।

"हुंह!" श्रपना सिर हिलाते श्रौर स्वर को लम्बा खींचते हुए ग्रिगोरी ने कहा, "तो यह था रासायनिक! कहते हैं कि वे लोगों को जहर देकर मार डालते हैं! भला उस जैसी शक्ल-सूरत का लड़का क्या कभी ऐसा कर सकता है? नहीं, हरगिज़ नहीं। वह यहां श्राया—एकदम खुला हुश्रा श्रौर छल-कपट से श्रछूता, जैसे कह रहा हो—'यह लो, जैसा मैं हूं, ठीक वैसा ही तुम्हारे सामने खड़ा हूं! चूना—क्या तुमने कभी सुना है कि वह नुक़सानदेह होता है? श्रौर साइट्रिक एसिड—यह क्या चीज़ है? केवल मामूली तेजाब—श्रौर कुछ नहीं! सबसे बड़ी बात तो सफ़ाई है—साफ़ फ़र्श, साफ़ हवा, मांजन-धोवन का साफ़ बरतन... तिसपर तुर्रा यह कि वे जहर देते हैं... वाह, कितना मज़ेदार जीव था वह। कहता था—'मेहनतकश रंग-पानी करे, यह ठीक है—बशर्ते कि वह बस करना जानता हो।' मात्र्योना, सुना तुमने? सो दे दो तो मुझे एक जाम उंडेलकर। है क्या?"

वह जाने किस कोने में से एक बोतल निकाल लाई श्रौर श्राधा गिलास उंडेलकर ख़ुशी-ख़ुशी उसे दे दिया।

"सचमुच, बहुत श्रच्छा था वह। उसे पसन्द किए बिना कोई रह नहीं सकता," छात्र के चेहरे की याद कर मुसकराते हुए मात्र्योना ने कहा, "लेकिन श्रौर—श्रौरों की कौन जाने? हो सकता है कि उन्हें पैसा देकर..."

"किसलिए पैसा देकर? श्रौर उन्हें पैसा देता कौन है?" ग्रिगोरी बीच में ही बोल उठा।

"लोगों को मारने के लिए। कहते हैं कि ग़रीब कंगले ढेर सारे बढ़ गए हैं श्रौर हुकम निकला है कि जो फ़ालतू हों उन्हें ठिकाने लगा दिया जाए," मात्र्योना ने कहा।

"यह सब कौन कहता है?"

"हर कोई। रंगसाजों की बावर्चिन श्रौर श्रन्य बहुत सारे लोग..."

"मूर्ख हैं जो ऐसा कहते हैं! भला, ऐसे काम से किसको लाभ हो सकता है? तुम ख़ुद ही सोचो—रोगियों की देख-भाल! वह फोकट में नहीं होती! फिर उन्हें दफ़नाना—इसके लिए एक ताबूत, एक क़ब्र और बाक़ी सारा ताम-झाम चाहिए... सब कुछ राज्य कोष से... निरी बकवास! अगर वे सचमुच लोगों से पीछा छुड़ाना चाहते तो उन्हें साइबेरिया भेज देते—वहां जगह ही जगह है, चाहे जितने आदमी भेज दो! या फिर ग़ैर-आबाद द्वीपों पर... और उनसे काम कराते। इसे कहते हैं पीछा छुड़ाना! फिर यह लाभप्रद भी ख़ूब है... और निर्जन द्वीप पर अगर लोगों को न बसाया जाये, तो उससे कोई आमदनी नहीं हो सकती... लेकिन सरकारी ख़ज़ाने के लिए आमदनी पहली चीज़ है। सो सरकार अपने ख़र्च पर लोगों को मारने और दफ़नाने जैसी हरकत नहीं करेगी... समझीं? फिर वह छात्र... माना कि वह शरारती है, लेकिन उसकी शरारतों का लक्ष्य है विद्रोह। जहां तक लोगों को मारने का सम्बन्ध है—यह तुम उससे कभी नहीं करा सकतीं, न लल्लो-चप्पो से, न धन से। उसकी ओर देखने मात्र से क्या यह पता नहीं चल जाता कि वह ऐसा काम नहीं कर सकता? उसकी तो सूरत ही वैसी नहीं है..."

सारे दिन वे उस छात्र और उसने जो कुछ बताया था उसके बारे में ही बातें करते रहे। उन्होंने उसके चेहरे और जिस ढंग से वह हंसता था उसकी याद की, फिर उन्हें ध्यान आया कि उसके कोट का एक बटन ग़ायब था, और इस बात को लेकर कि किस बाज़ू का बटन नहीं था, उनमें झगड़ा तक होने की नौबत आ गई। माल्योना ज़ोर देकर कहती थी कि दाहिनी ओर का बटन ग़ायब था, उसका पति कहता कि बाईं ओर का। इस सिलसिले में दो बार वह उसपर बुरी तरह बिगड़ा भी, लेकिन यह याद कर कि जब वह गिलास में उसके लिए वोद्का उंडेल रही थी तो बोतल ख़ाली नहीं हुई थी, उसने हथियार डाल दिए। फिर उन्होंने तय किया कि अगले दिन से ही कमरे की सफ़ाई में जुटेंगे, और इसके बाद—ताज़ी हवा के झोंके के समान उस अनुभव से आह्लादित वे फिर से छात्र के बारे में बातें करने लगे।

"ओहो, शैतान का बच्चा!" ग्रिगोरी ने मुग्ध भाव से कहा, "आते ही ऐसा बर्ताव करने लगा जैसे दस साल से परिचित हो। यहां ताका, वहां झांका, हमें लेक्चर पिलाया और—गोली की भांति ग़ायब हो गया।

न चिल्लाया, न कुछ हल्ला-गुल्ला किया, हालांकि वह भी तुम्हारे उन्हीं ऊंचे लोगों में से एक था। जहन्नुम में फेंको सब! माल्योना, समझीं न, वह वास्तव में ही हमारा भला चाहता है। एकदम महसूस होने लगी यह बात। वे हम लोगों को जीवित रखना चाहते हैं, और कुछ नहीं... वह सब बकवास है, लोगों को जहर देने के बारे में—गपोड़शंखी कहानियां! 'तुम्हारे पेट कैसे हैं?' उसने पूछा। अगर उन्हें जहर देना होता तो वे यह चिन्ता क्यों करते कि हमारे पेट कैसे हैं? कितनी सफ़ाई से उसने हमें समझाया उन के बारे में... क्या कहते हैं भला उन्हें... जो पेट के भीतर रेंगते रहते हैं?"

"मनगढ़ंत बात या ऐसे ही कुछ," माल्योना ने मुस्कराते हुए कहा, "लेकिन वह सब तो केवल डराने के लिए उसने कहा था, जिससे हम सफ़ाई के काम में ढील न डालें..."

"कौन जाने? हो सकता है कि वह सब सच हो... आख़िर कीड़े सीलन से ही तो पैदा होते हैं। शैतान कहीं का! क्या कहा था उसने उन कीड़े-मकोड़ों को? मनगढ़न्त? नहीं.. वह शब्द बार-बार ज़बान पर आ रहा है, लेकिन कम्बख़्त बाहर नहीं निकलता..."

बिस्तर पर पहुंच जाने के बाद भी वे वैसे ही बातें करते रहे जैसे छोटे बच्चे सरल उछाह में भरे अपने पहले उल्लेखनीय अनुभवों का आदान-प्रदान करते हैं। उनकी ये बातें उस समय भी चल रही थीं, जब नींद अपने दामन में दबोचकर उन्हें अपने साथ उड़ा ले गई।

अगली सुबह रंगसाज़ों की मोटी बावर्चिन ने उन्हें जगाया। वह उनके पलंग के पास आकर खड़ी हो गई और उसका चेहरा, जो साधारणतया गोल और लाल दमकता था, लटका हुआ और फक-सा था।

"अब भी क्या सोते ही रहोगे?" अपने मोटे होंठों को विचित्र ढंग से हिलाते हुए उसने उतावली में कहा, "हैज़ा हमारे घर भी आ गया... भगवान की मर्ज़ी है!" और वह फूट-फूटकर रो पड़ी।

"अरे नहीं, तुम झूठ बोल रही हो?" ग्रिगोरी चिल्लाया।

"और मुझे देखो," माल्योना ने विनीत भाव से कहा, "मैं तो पिछली रात धोवन की बाल्टी ही साफ़ करना भूल गई!"

"जहां तक मेरी अपनी बात है," बावर्चिन ने कहा, "मैं अपना यह धंधा छोड़ रही हूं। मैं यहां से चली जाऊंगी... अपने गांव।"

"किसे हो गया?" बिस्तर पर से उठते हुए ग्रिगोरी ने पूछा।

"अकार्डियन-वादक को। रात में ही उसे धर दबोचा... सीधे पेट में घुस गया, जैसे संखिया खा लिया हो..."

"अकार्डियन-वादक?" ग्रिगोरी बुदबुदा उठा। उसे विश्वास नहीं हुआ। इतना हंसमुख और जिन्दादिल आदमी। कल ही तो वह अहाते में से जा रहा था—उसी प्रकार, मोर की भांति, इठलाता हुआ। "मैं चलकर उसे देखता हूं," ओरलोव ने अविश्वास-भरी हंसी के साथ कहा।

दोनों स्त्रियां भय से चिल्ला उठीं—

"ग्रिगोरी, यह रोग उड़कर चिपटता है!"

"यह क्या करने जा रहे हो तुम?"

ग्रिगोरी ने कोसा, पांव में जूते डाले और बालों में कंघा तथा क़मीज़ के कालर का बटन बन्द किए बिना दरवाज़े की ओर बढ़ चला। उसकी पत्नी ने उसका कंधा पकड़ लिया। ग्रिगोरी ने उसके हाथ का कम्पन अनुभव किया। इससे, जाने क्यों, वह भड़क उठा।

"दूर हट, नहीं तो तेरा तोबड़ा तोड़ दूंगा," उसकी छाती पर धक्का मारते हुए वह गरजा।

अहाता शांत और सूना था। अकार्डियन-वादक के घर की ओर पांव बढ़ाते समय उसके बदन में भय की कंपकंपी सी हुई। इसके साथ ही साथ उसे एक सन्तोष की भी अनुभूति हुई—यह सोचकर उसे भारी सुख मिला कि घर के तमाम लोगों में वही अकेला ऐसा है जो बीमार के पास जाने का साहस कर रहा है। यह सन्तोष उस समय और भी सुखद हो गया जब उसने देखा कि दर्जों लोग दूसरी मंज़िल की अपनी खिड़कियों से उसकी ओर झांक रहे हैं। वह सीटी बजाने लगा और उसने अपना सिर उद्धत भाव से झटका। लेकिन दरवाज़े पर पहुंचकर उसे एक हल्की निराशा का सामना करना पड़ा—सेन्का चीज़िक वहां पहले से ही मौजूद था।

सेन्का ने दरवाज़े को थोड़ा-सा खोला और उसमें से अपनी पैनी नाक अंदर बढ़ाई। सदा की भांति वह अपने निरीक्षण में इस हद तक डूबा था कि उसने केवल उसी समय मुड़कर देखा जब ग्रिगोरी ने उसके कान में चुटकी काटी।

"रोग ने उसे एकदम मरोड़ डाला है, चचा ग्रिगोरी!" उसने रंग के दाग़-धब्बे लगा अपने चेहरा, जो उसके नवीनतम अनुभवों के दबाव से

ग्रौर भी ग्रधिक चुरमुरा गया था, ऊपर उठाते हुए फुसफुसाकर कहा, "वह बिल्कुल ऐसा नज़र ग्राता है जैसे सूखा कुकुरमुत्ता!"

कमरे में से सड़ांध का एक झोंका ग्राया। बिना कोई जवाब दिए ग्रिगोरी वहीं खड़ा सेन्का की बातें सुन रहा था ग्रौर दरवाज़े की दरार में से रोगी की एक झांकी पाने की कोशिश कर रहा था।

"चचा ग्रिगोरी, क्या मैं उसे थोड़ा-सा पानी दे दूं?" सेन्का ने पूछा।

ग्रिगोरी ने सेन्का के चेहरे को ग़ौर से देखा। वह इतना विचलित था कि उसके समूचे चेहरे पर बल पड़ रहे थे। ख़ुद ग्रिगोरी भी कुछ कम विचलित नहीं था।

"जाग्रो, थोड़ा पानी ले जाग्रो," उसने ग्रादेश दिया, इसके बाद दृढ़ता से दरवाज़े को झटाक से खोला ग्रौर चौखट के भीतर खड़ा रह गया। उसका बदन ग्रपने ग्राप पीछे की ग्रोर खिंच गया।

उसे किस्त्याकोव की एक धुंधली-सी झलक दिखाई दी। ग्रकार्डियन-वादक, बढ़िया सूट पहने ग्रपनी छाती को मेज़ पर सटाए, दोनों हाथों से मेज़ को मज़बूती से दबोचे, ग्रौंधा पड़ा था ग्रौर उसके पांव – जिनमें वह पेटेंट चमड़े के जूते पहने था – गीले फ़र्श पर बेजान-से हिल रहे थे।

"कौन है?" उसने बैठी हुई ग्रौर भावशून्य ग्रावाज़ में पूछा।

ग्रिगोरी सम्भला, फ़र्श पर सावधानी से डग रखता हुग्रा उसके पास पहुंचा ग्रौर ग्रपनी ग्रावाज़ में प्रसन्नता का – यहां तक कि मज़ाक़ का भी – भाव लाते हुए बोलने का प्रयास करने लगा –

"ग्ररे मैं हूं, द्मित्री पाव्लोविच... यह क्या हुग्रा, भाई, रात इतनी पी गए कि छर्रे छूटने लगे, क्यों?" उत्सुकता ग्रौर भय से ग्रभिभूत, ग्रांखें गड़ाए, वह किस्त्याकोव को ताक रहा था ग्रौर उसे पहचानने में कठिनाई ग्रनुभव कर रहा था।

ग्रकार्डियन-वादक का चेहरा लम्बा खिंचा था, उसके गालों की हड्डियां दो तेज़ कोणों में उभर ग्राई थीं, उसकी ग्रांखें कोटरों में धंसी थीं, उनके इर्द-गिर्द हरे धब्बे पड़े थे ग्रौर वह एक ग्रजीब धुंधली, पथराई-सी नज़र से ताक रहा था। उसके गालों का रंग गर्मियों के चिलचिलाते दिनों में लाश के रंग की याद दिलाता था। उसका चेहरा डरावना, मुर्दे जैसा, हो गया था। केवल जबड़ों में एक हल्की-सी हरकत थी जो उसके जीवित होने का सबूत देती थी। उसकी धुंधली नज़र जैसे ग्रिगोरी पर ही थिर

होकर रह गई थी और उसके रोम-रोम में भय का संचार कर रही थी। वह वहीं, रोगी से कोई तीन डग दूर, खड़ा अपने पतलून की सीवन को नोच रहा था और उसे ऐसा मालूम हो रहा था जैसे किसी ने अपने ठंडे और चिपचिपे हाथों से उसका गला दबोच लिया हो और धीरे-धीरे उसे घोटता जा रहा हो। वह कमरे से बाहर जाने के लिए छटपटाने लगा—उस कमरे से, जो कभी इतना उजला और सुहाना था, लेकिन अब एक अजीब शीत तथा सड़ांध से भरा था।

"हां तो..." उसने अपने पलायन की तैयारी करते हुए कहना शुरू किया। पर अकार्डियन-वादक के राख जैसे चेहरे पर एक छाया-सी तैर गई। उसने अपने होंठ खोले, जिनके सिरों पर काले झाग उफन आए थे और टूटती आवाज़ में बोला—

"मैं... मैं... मर रहा हूं..."

ये अवर्णनीय भावशून्यता से कहे गए शब्द, मूक प्रहारों की भांति ग्रिगोरी के सिर और सीने से आकर टकराए। अटपटा-सा मुंह बनाकर वह दरवाज़े की ओर मुड़ चला, लेकिन तभी सेन्का हाथ में पानी का डोल लिए, हांफता और पसीने से तर, भीतर लपक आया।

"यह लो... स्पिरिदोनोव के कुएं से लाया हूं... हरामी के पिल्ले, वे मुझे पानी तक नहीं लेने देते..."

उसने डोल फ़र्श पर रख दिया, झपटकर एक कोने की ओर गया, वापिस लौटा और ग्रिगोरी के हाथ में एक गिलास थमा दिया। उसकी ज़बान बराबर चल रही थी—

"'सुना है कि तुम लोगों के यहां हैज़ा फैला है?' उसने कहा। 'तो इससे क्या?' मैंने कहा, 'आज हमारी बारी है, कल तुम्हारी भी आ जाएगी—सभी तरफ़ यह फैलेगा, जैसे कि उस बार हुआ था,' मैंने कहा और—तड़ाक—उसने मेरी थूथनी पर जड़ दिया!"

ग्रिगोरी ने डोल में से गिलास भरा और एक ही घूंट में उसे गले के नीचे उतार गया। उसके कानों में जीवन से शून्य वे शब्द गूंज रहे थे—

"मैं... मैं... मर रहा हूं..."

लेकिन सेन्का फिरकी बना था—पूरी तरह से चुस्त और चेतन।

"पानी," मेज़ के सहारे उनकी ओर खिसकते हुए अकार्डियन-वादक बुदबुदाया।

सेन्का लपककर बढ़ा ग्रौर पानी का गिलास उसके काले पड़ गये होठों से लगा दिया। ग्रिगोरी दरवाज़े के पास दीवार के साथ सटा हुग्रा खड़ा था। उसे ऐसा मालूम हुग्रा जैसे रोगी के ज़ोरों से पानी पीने की ग्रावाज़ वह सपने में सुन रहा हो। फिर उसे सेन्का की ग्रावाज़ सुनाई दी जो कह रहा था कि ग्रकार्डियन-वादक का लबादा उतारकर उसे बिस्तरे पर लेटा दिया जाए, ग्रौर इसके बाद रंगसाज़ों की बावर्चिन की ग्रावाज़ उसे सुनाई दी। उसका मोटा चेहरा, भय ग्रौर संवेदना के भाव लिए, खिड़की से चिपका था ग्रौर ग्रांसुग्रों से भीगी ग्रावाज़ में वह कह रही थी –

"डच काजल मिलाकर इसके मुंह में थोड़ी रम उंडेल दो – एक गिलास रम ग्रौर दो चम्मच डच काजल।"

ग्रहाते के एक ग्रन्य निवासी ने सलाह दी कि लकड़ी के तेल, ग्रचार के पानी ग्रौर गन्धक तथा शोरे के तेज़ाब का घोल बना कर दो।

सहसा उस बोझिल ग्रौर गहरे ग्रंधेरे को बेधकर, जो ग्रिगोरी पर छा गया था, उसकी स्मृति में प्रकाश की एक रेखा उभर ग्राई। उसने ग्रपने माथे को ज़ोर से रगड़ा, मानो प्रकाश की उस रेखा को ग्रौर तेज़ बनाने की कोशिश कर रहा हो, फिर एकाएक मुड़ा, कमरे से बाहर लपका ग्रौर भागता हुग्रा ग्रहाते को पार कर सड़क पर विलीन हो गया।

"हे भगवान्, मोची को भी रोग ने पकड़ लिया! वह ग्रस्पताल भागा गया है," बावर्चिन ने रुग्रांसी ग्रावाज़ में ग्रोरलोव के ग्रचानक दौड़ जाने का रहस्य प्रकट किया।

मात्र्योना, जो उसके पास ही खड़ी थी, पीली पड़ गयी, ग्रांखें फटी-फटी हुई सी हो गयीं ग्रौर वह सिर से पांव तक कांप उठी।

"यह झूठ है," फटी हुई ग्रावाज़ में वह बुदबुदाई। उसके सफ़ेद पड़ गये होंठ मुश्किल से हरकत कर रहे थे, "यह मनहूस बीमारी ग्रिगोरी को नहीं पकड़ सकती – वह कभी ऐसा नहीं होने देगा!"

लेकिन बावर्चिन, जो ग्रभी भी विलाप कर रही थी, भागी हुई वहां से चली गई ग्रौर इसके पांच मिनट बाद गली में सौदागर पेतुन्निकोव के घर के सामने पड़ोसियों ग्रौर राहचलतों की एक छोटी-सी भीड़ जमा हो गई। सभी के चेहरों से एक ही प्रकार के भावों की ग्रभिव्यक्ति हो रही थी – उत्तेजना, बेबसी में डूबी निराशा, कभी कुत्सा ग्रौर कभी सप्रयास

प्रदर्शित निर्ममता। सेन्का नंगे पांव ग्रहाते में बाहर आता, भीड़ को ग्रकार्डियन-वादक की हालत बताता और फिर लौट जाता।

लोग एक दूसरे से सटकर खड़े थे, उनकी आवाजों की भनभनाहट गली की धूल भरी तथा गंधपूर्ण हवा में गूंज रही थी, जिसे बेधकर कभी-कभी कुत्सित और अर्थहीन गालियों की आवाज सुनाई दे जाती थी।

"वह देखो, ग्रोरलोव!"

ग्रोरलोव एक गाड़ी के बम पर बैठा फाटक की ओर आ रहा था। एकदम सफ़ेद कपड़े पहने एक उदास आदमी गाड़ी को हांक रहा था।

"रास्ता छोड़ो!" गाड़ीवान गहरी आवाज में चिल्लाया और अपने घोड़े का मुंह सीधे भीड़ की ओर मोड़ दिया।

गाड़ी के आने और गाड़ीवान की चिल्लाहट ने भीड़ के उछाह पर पानी डाल दिया। सब इस तरह चुप हो गए जैसे उन्हें सांप सूंघ गया हो, और कुछ तो वहां से खिसक भी गए।

गाड़ी के पीछे वह छात्र था जिससे ग्रोरलोव दम्पति परिचित थे। उसकी टोपी खिसककर गुद्दी से जा चिपकी थी, उसके माथे से पसीना चू रहा था, बदन पर वह एक लम्बा, आंखें चौंधियानेवाला सफ़ेद लबादा डाले था, जिसमें कत्थई किनारेवाला एक बड़ा-सा छेद था। ऐसे प्रतीत होता था, जैसे यह छेद अभी-अभी किसी चीज से जलाकर कर दिया गया था।

"हां तो, रोगी कहां है?" उसने तेज आवाज में पूछा और फाटक के पास कोने में जमा भीड़ पर कनखियों से नजर डाली। लोगों के चेहरों से शत्रुता का भाव झलक रहा था।

"यह देखो, एक नया ख़ानसामां आया है!" किसी ने आवाज कसी।

"देखते जाओ, यह तुम्हारी कैसी ख़ातिर करता है!" दूसरा धीमे और द्वेष से बुदबुदाया।

"यह तुम्हें ऐसा शोरबा खिलाएगा कि भीतर तक की सफ़ाई हो जाएगी!" किसी विनोदी ने कहा जो हर भीड़ में मौजूद रहते हैं।

इसपर एक आह्लादविहीन हंसी भीड़ में दौड़ गई जिसमें भय और अविश्वास झलक रहा था।

"देखो, उन्हें जरा भी डर नहीं लगता। इसमें क्या रहस्य है?" एक

ग्रादमी ने, जिसके चेहरे पर खिंचाव ग्रौर ग्रांखों में विक्षोभ भरा था, घबरा देनेवाला सवाल पैदा किया।

लोगों के चेहरे फीके पड़ गए ग्रौर वे दबी ग्रावाज़ में फुसफुसाने लगे...

"वे उसे बाहर निकाल रहे हैं!"

"बड़ा हरामी है, यह ग्रोरलोव!"

"कम्बख़्त को डर नहीं लगता!"

"ऊंह, पियक्कड़ जो ठहरा!"

"सावधानी से, ग्रोरलोव, सावधानी से। पांवों को ग्रौर ऊंचा उठाग्रो... हां, ऐसे! बिल्कुल ठीक। प्योत्र, ग्रब तुम गाड़ी को हांक ले जाग्रो," छात्र ने ग्रादेश दिया, "मैं ग्रभी ग्राता हूं। हां तो, श्रीमान ग्रोरलोव, इसकी छूत साफ़ करने के लिए मैं तुम्हारी मदद चाहूंगा... इससे लगे हाथ तुम्हें यह भी मालूम हो जाएगा कि यह कैसे किया जाता है – कभी काम ग्राएगा... क्यों, तुम्हें कोई ग्रापत्ति तो नहीं?"

"नहीं," ग्रोरलोव ने कहा ग्रौर गर्व से ग्रपने चारों ग्रोर नज़र डाली।

"मैं भी मदद दे सकता हूं," सेन्का ने कहा।

उस भयावह गाड़ी को विदा करने वह फाटक तक चला गया था ग्रौर ग्रब ग्रपनी सेवाएं ग्रर्पित करने के लिए ठीक मौक़े पर लौट ग्राया था। छात्र ने चश्मे के भीतर से उसकी ग्रोर देखा।

"ग्रौर तुम हो कौन?"

"रंगसाजों के साथ काम करता हूं। उनका चेला हूं," सेन्का ने बताया।

"तुम्हें हैज़े से डर नहीं लगता?"

"मुझे?" सेन्का ने ग्रचरज से कहा, "नहीं, मैं किसी चीज़ से नहीं डरता!"

"सच? भई, वाह! ग्रच्छा तो ग्रब..." छात्र एक ढोल पर बैठ गया, जो ज़मीन पर पड़ा था, ग्रौर ग्रागे-पीछे झूलते हुए उसने ग्रिगोरी तथा सेन्का को ग्रच्छी तरह हाथ-मुंह धोने को कहा।

चेहरे पर भयभीत मुस्कान लिए मात्र्योना ग्रागे ग्रा गई। उसके साथ-साथ ग्रपने मैले ऐप्रन से ग्रांखें पोंछती बावर्चिन भी बढ़ ग्राई। थोड़ी देर बाद कुछ ग्रौर लोग भी उनके साथ ग्रा मिले – वैसे ही दबे पांव जैसे बिल्ली चिड़िया की ग्रोर बढ़ती है। क़रीब दस लोग छात्र के इर्द-गिर्द जमा

हो गए, जिससे वह उत्साहित हुआ। वह उनके बीच में खड़ा था और जोश से, खूब ज़ोरों से हाथ हिलाता हुआ उन्हें लेक्चर दे रहा था जिसे सुनकर कभी उनके चेहरों पर मुसकराहट खेल जाती, कभी वे एकदम विभोर हो बहुत ध्यान से सुनने लगते और कभी – बिना किसी छिपाव के – अविश्वास या व्यंग्यपूर्ण खिल्ली का परिचय देते।

"सभी रोगों से लड़ने का सबसे महत्त्वपूर्ण हथियार सफ़ाई है – शरीर की सफ़ाई और उस हवा की सफ़ाई जिसे तुम अपने फेफड़ों में भरते हो," छात्र ने विश्वास दिलाते हुए कहा।

"भगवान् भला करे," रंगसाज़ों की बावर्चिन कराह उठी, "केवल पवित्रात्मा सन्त बारबरा की पूजा-अर्चना ही हमें बेवक़्त ही मौत से बचा सकती है..."

"बहुतेरे लोग साफ़ रहते और साफ़ हवा में सांस लेते हैं, फिर भी मौत उन्हें नहीं बख़्शती," श्रोताओं में से एक ने कहा।

ओरलोव अपनी पत्नी की बगल में खड़ा छात्र को देख रहा था और मन ही मन किसी विचार में डूब-उतरा रहा था। उसने अपनी आस्तीन में एक हल्का सा झटका अनुभव किया।

"चचा ग्रिगोरी," सेन्का फुसफुसाया, जिसकी आंखें अंगारे की भांति दहक रही थीं, "ऐसा लगता है कि किल्त्याकोव बचेगा नहीं और उसका कोई सगा-सम्बन्धी भी नहीं है। उसका अकार्डियन किसे मिलेगा?"

"मुंह बन्द कर, शैतान का बच्चा!" हाथ हिलाकर ओरलोव ने कहा।

सेन्का वहां से खिसक गया और अकार्डियन-वादक के कमरे की खिड़की में से भीतर झांकने लगा। उसकी आंखें जैसे कुछ खोज रही थीं।

"चूना, कोलतार..." छात्र ऊंची आवाज़ में गिना रहा था।

उस हलचलपूर्ण दिन की सांझ को, जब वे भोजन कर रहे थे, मात्योना ने अपने पति से पूछा –

"उस छात्र के साथ तुम कहां गए थे?"

ग्रिगोरी ने खोई-खोई नज़र से उसकी ओर देखा। जवाब कुछ नहीं दिया।

अकार्डियन-वादक के कमरे को धोने के बाद वह छात्र के साथ चला गया था। वहां से तीन बजे जब वह लौटा तो विचारों में डूबा और एकदम मौन था। आते ही वह बिस्तर पर ढह गया और भोजन के समय तक

उसी प्रकार गुमसुम पड़ा रहा, हालांकि उसकी पत्नी ने उससे बातचीत करने की कई बार कोशिश की। उसने उसे बुरा-भला तक नहीं कहा। यह इतना अजीब और उसके स्वभाव के इतना विरुद्ध था कि मात्र्योना का हृदय बेचैन हो उठा।

एक स्त्री की सहज वृत्ति से, जिसका समूचा जीवन अपने पति में केन्द्रित हो, उसके हृदय में यह खटका पैदा हुआ कि कहीं उसे तो कोई छूत नहीं लग गई, और छूत के इस भय ने उसकी व्यग्र उत्सुकता को और भी अधिक भड़का दिया। वह क्या चीज़ है जो उसे परेशान कर रही है?

"तुम्हारी तबीयत तो ठीक है न, ग्रिगोरी?"

उसने चाय का आख़िरी घूंट गले के नीचे उतारा, अपनी मूंछों को पोंछा और अलस भाव से ख़ाली गिलास मेज़ के उधर अपनी पत्नी की ओर खिसका दिया।

"छात्र के साथ मैं बारिक में गया था..." उसने भौंहें चढ़ाते हुए कहा।

"हैज़े की बारिक में?" मात्र्योना के मुंह से निकला और फिर, आतंकित भाव से वह फुसफुसा उठी, "क्या वहां काफ़ी लोग हैं?"

"हमारे अकार्डियन-वादक को मिलाकर तिरपन... कुछ अच्छे हो रहे हैं। वे उठने-बैठने भी लगे हैं। एकदम पीले और हड्डियों के ढांचे..."

"हैज़े के बीमार? सच? ऐसे ही, दिखावे के लिए, उन्होंने कुछ अच्छे-विच्छे लोगों को पकड़ लिया होगा, जिससे यह मालूम हो कि वे रोगियों को अच्छा कर सकते हैं।"

"तुम्हारे दिमाग़ में तो भूसा भरा है," ग्रिगोरी ने रुखाई से कहा और उसकी आंखों में ग़ुस्सा कौंध गया, "तुम सब के सब यहां कठदिमाग़ हो। मूर्ख और जाहिल हैं तुम जैसे लोग। ऐसे कूढ़ दिमाग़ों के साथ रहकर आदमी न मरता हो तब भी मर जाए... तुम्हारे इन ठस दिमाग़ों में कोई चीज़ नहीं धंस सकती!" उसने दोबारा भरा हुआ अपना चाय का गिलास झपटकर तेज़ी से अपनी ओर खींचा और फिर चुप हो गया।

"तुम यह सब कुछ कहां से जान गये?" उसांस छोड़ते हुए मात्र्योना ने व्यंग से पूछा।

उसने कोई जवाब नहीं दिया—वह इतना कठोर और विचारों में

इतना डूबा था कि कोई भी चीज उसे छूती प्रतीत नहीं होती थी। ठंडा होता हुआ समोवार उबा देनेवाले हल्के सुरों में भनभना रहा था। खिड़की में से रंग-रोग़न, कार्बोलिक एसिड और उल्टे-पल्टे गए कूड़े के ढेर की गंध आ रही थी। सांझ का धुंधलका, यह गंध और समोवार की भनभनाहट — सब एकाकार हो गए थे, तन्दूर अपना काला मुंह फाड़े इस तरह चिड़चिड़ा रहा था जैसे पहला मौक़ा मिलते ही वह इस दम्पति को कच्चा ही निगल जाएगा। वे दोनों चीनी की डलियों को चबा रहे थे, अपनी रकाबियों को खनखना रहे थे और चाय को गले के नीचे उतार रहे थे। मात्योना रह-रहकर लम्बी उसांसें छोड़ रही थी और ओरलोव की उंगलियां मेज पर तबला बजा रही थीं।

"सफ़ाई इतनी कि तुमने पहले कभी न देखी होगी," अप्रत्याशित ही उसने फिर कहना शुरू किया, "वहां काम करनेवालों में से प्रत्येक सफ़ेद लबादा पहने था। रोगियों को हर मिनट नहलाया जाता है... और मदिरा — ढाई रूबल में एक बोतल! और खाना... एक बार सूंघ लो तो उसी से पेट भर जाए... और उनकी देख-भाल का ढंग — बिल्कुल मां की भांति। हुंह! बोलो, क्या तुक है इसमें? आदमी सालों साल जीता है और कोई उसके मुंह पर थूकने तक नहीं आता, घर तक आना और यह पूछना कि क्या हाल-चाल है, जीवन कैसा गुज़र रहा है — यह सब तो और भी दूर की बात है। लेकिन जब वह मरने की ठानता है तो वे उसे मरने नहीं देंगे। इतना ही नहीं, उसे जीवित रखने के लिए वे ख़ुद बेहाल हो जायेंगे। बारिक... मदिरा... ढाई रूबल में पूरी बोतल! क्या वे इतना भी नहीं देख सकते कि इसमें कोई तुक नहीं है? मदिरा और बारिक पर वे अंधाधुंध ख़र्च करते हैं। उसी धन को वे उस समय क्यों नहीं ख़र्च करते जब वह अच्छा होता है — उसके जीवन को सहज बनाने के लिए — आए साल थोड़ा-थोड़ा देकर?"

उसकी पत्नी ने यह समझने की कोई कोशिश नहीं की कि वह क्या कह रहा है। उसके लिए यह जानना ही काफ़ी था कि वह कोई ऐसी बात कह रहा है जो नयी है। इससे जो सही नतीजा उसने निकाला वह यह कि ग्रिगोरी की आत्मा को चाहे जो भी चीज मथ रही हो उसके लिए वह शुभ नहीं है। वह केवल इतना ही जानना चाहती थी कि उसपर उसका क्या असर पड़ेगा, और इस बात को वह जहां तक भी हो जल्दी से जल्दी

12*

जान लेना चाहती थी। उसकी यह आकांक्षा भय और आशा से और अपने पति के प्रति एक हद तक बैर की भावना से भरी थी।

"वे क्या कर रहे हैं, यह बात शायद वे तुमसे ज्यादा अच्छी तरह जानते हैं," उसकी बात ख़त्म होने पर अपने होंठों को भींचते हुए माल्योना ने कहा।

ग्रिगोरी ने अपने कंधे झटके, कनखियों से उसपर एक नज़र डाली, क्षण भर के लिए रुका और फिर अपने स्वर में और भी अधिक तीखापन भरते हुए कहने लगा—

"जानते हैं या नहीं जानते यह वे जानें। लेकिन मैं उन लोगों में से हूं जो वास्तविक जीवन का मुंह देखे बिना ही इस दुनिया से कूच कर जाते हैं, तो निश्चय ही मुझे यह कहने का हक़ है कि कौन क्या है। मुझे कहना यह है कि इस जीवन से मेरा पेट पूरी तरह से भर गया है और मेरा यह इरादा नहीं है कि हाथ पर हाथ धरे बैठा रहूं और प्रतीक्षा करूं कि हैजा आए और मेरी गठरी बना दे। मैं यह नहीं कर सकता। प्योत्र इवानोविच ने कहा—'सामने डटकर टक्कर लो—तुम भाग्य के विरुद्ध, भाग्य तुम्हारे विरुद्ध—और देखो कि कौन जीतता है। खुलकर युद्ध हो, बिना किसी माया-ममता के।' तो मैं क्या करूं? बारिक में काम, और बस। समझ गई न? सीधे शेर के जबड़े में सिर डालना है—वह दांत गड़ाता है तो बस मैं अपनी टांगों से झटका दूंगा। बीस रूबल महीना और शायद बोनस अलग... हो सकता है कि इसमें जान देनी पड़े। ठीक, लेकिन यहां रहने पर तो मैं और भी जल्दी चीं बोल जाऊंगा।"

यह कहते हुए ग्रिगोरी ने इतने जोरों से मेज़ पर घूंसा मारा कि रकाबियां उछल पड़ीं।

उसके बोलने के प्रारम्भ में माल्योना अपने चेहरे पर व्यग्रता और जिज्ञासा के भाव लिए सुन रही थी; लेकिन जब उसने बोलना ख़त्म किया तो उसने अपनी विद्वेषपूर्ण आंखें सिकोड़ लीं।

"यह सब करने की सलाह क्या उस छात्र ने तुम्हें दी है?" उसने अपने को संयत रखते हुए पूछा।

"मेरे पास अपना दिमाग़ है। मैं ख़ुद अपनी बात सोच सकता हूं," ओरलोव ने प्रश्न को टालते हुए कहा।

"हां तो, लगे हाथ यह भी बता दो कि उसने मेरे साथ क्या करने की तुम्हें सलाह दी है?" माव्योना कहती गई।

"तुम्हारे साथ?" इस सवाल से वह कुछ परेशान हो उठा। अपनी पत्नी के बारे में सोचने का उसे अभी तक समय ही मिला था। वह उसे घर पर ही छोड़ सकता था। अन्य लोगों ने भी ऐसा किया है, लेकिन माव्योना को छोड़ना ख़तरनाक होगा। उसपर निगाह रखने की जरूरत है। यह अनुभव करते ही वह गुर्राया—"तुम यहीं रहोगी। अपनी पगार में तुम्हें दे जाया करूंगा..."

"यह बात है," उसकी पत्नी ने शान्त भाव से कहा और स्त्रियों की उस भेद-भरी मुसकान के साथ उसे देखा जो पुरुषों के हृदय में ईर्ष्या की छुरी भोंक देती है।

ग्रिगोरी ने, जो अत्यन्त भावनाशील था, तुरत इसे अनुभव किया। लेकिन उसके अहम् ने अपनी पत्नी के सामने उसे अपने भावों को प्रकट नहीं करने दिया।

"चिचियाने और कांय-कांय के सिवा तुम और क्या कर सकती हो?" उसने कहा और जवाब का इन्तजार करने लगा।

वह मुस्कराई—गुदगुदा देनेवाली वह मुसकराहट फिर उसके होंठों पर खेल गई और उसने कहा कुछ नहीं।

"तो क्या करेंगे हम?" ग्रिगोरी ने फिर पूछा।

"मतलब?" गिलासों को शान्त भाव से साफ़ करते हुए माव्योना ने पूछा।

"नागिन! ज्यादा बनो नहीं, नहीं तो यहीं थूथनी रगड़कर रख दूंगा!" ग्रिगोरी ने फुंकार छोड़ी, "कौन जाने, मैं मौत से ही गले मिलने जा रहा हूं!"

"लेकिन मैं तो तुम्हें धक्के नहीं दे रही हूं, मत जाओ।"

"तुम्हारे मन की मुराद तो उससे पूरी हो जाएगी। मैं ख़ूब जानता हूं!" वह तीखे अन्दाज में चिल्लाया।

माव्योना ने अब भी कुछ नहीं कहा। इससे वह झुंझला उठा, लेकिन उसने पहले की भांति अपने गुस्से को भड़कने नहीं दिया। वह इसलिए कि एक बहुत ही चतुर बात—कम से कम वह ऐसा ही समझता था—उसके दिमाग़ में अभी-अभी कौंध गई थी। वह द्वेषपूर्ण मुस्कराकर बोला—

"मैं जानता हूं कि तुम्हारे लिए इससे बढ़कर और कोई ख़ुशी न होगी कि पांव के कांटे की भांति तुम मुझे रफ़ा-दफ़ा दर दो। लेकिन ज़रा ठहरो। मैं भी दो-चार दांव-पेंच जानता हूं—तुम्हें वह रंग दिखाऊंगा कि तबीयत तर हो जाएगी!"

वह उछलकर खड़ा हो गया, झपटकर खिड़की की ओटक पर से अपनी टोपी उठाई और बाहर चला गया। उसकी पत्नी अकेली रह गई—अपने व्यवहार के लिए अपने को कोसती, उसकी धमकियों पर झुंझलाती और भविष्य के लिए दुश्चिन्ताओं में डूबती-उतराती।

"ओ भगवान्! ओ मां मरियम, स्वर्ग की देवी!" उसने उसांस छोड़ी।

बहुत देर तक मेज़ पर बैठी वह यह अन्दाज़ लगाने का प्रयत्न करती रही कि ग्रिगोरी अब क्या करने पर उतारू है। उसके सामने धुली हुई रकाबियां पड़ी थीं। छिपते हुए सूरज की रोशनी का एक गुलाबी धब्बा खिड़की के सामनेवाली सफ़ेद दीवार पर पड़ रहा था और दीवार से छितराकर उनकी खोली में बिखर रहा था। उसका एक अंश मात्र्योना के सामने मेज़ पर रखी कांच की चीनीदानी के छोरों पर झिलमिला रहा था। इस हल्की झिलमिल ने उसका ध्यान खींचा और अपनी भौंहों को सिकोड़े एकटक वह उसे देखती रही—देखते-देखते उसकी आंखें दुखने लगीं। तब उसने रकाबियों को समेटकर रख दिया और बिस्तरे पर जाकर पड़ रही।

ग्रिगोरी जब लौटा तब अंधेरा हो गया था। सीढ़ियों पर उसके पांवों की आवाज़ से ही मात्र्योना ने अन्दाज़ लगाया कि वह प्रसन्न मुद्रा में है। खोली में छाए अंधेरे को कोसता हुआ वह पलंग की ओर बढ़ा और उसपर बग़ल में बैठ गया।

"जानती हो?" उसने खिलखिलाते हुए कहा।

"क्या?"

"तुम भी मेरे साथ वहां काम करने चलोगी।"

"कहां?" उसने कांपती आवाज़ में पूछा।

"उसी बारिक में, जहां मैं काम करूंगा," उसने विजयी अन्दाज़ में कहा।

मात्र्योना ने उसके गले में बांहें डाल दीं, कसकर उसे भींचा और

उसके होंठों का चुम्बन लिया। यह इतना अप्रत्याशित था कि उसने सकपकाकर मात्योना को धकेल दिया।

"यह सब छरछन्द है," उसने सोचा, "वह वहां क़तई काम नहीं करना चाहती, चालाक लोमड़ी... आंखों में धूल झोंकना चाहती है–समझती है कि उसका पति निरा बुद्धू है..."

"यह नाटक किसलिए?" सन्देह-भरी आवाज़ में उसने जवाब मांगा और अचानक उसे उठाकर फ़र्श पर पटकने की इच्छा उसके हृदय में उमड़ आई।

"बस, यों ही!" उसने फुर्ती से जवाब दिया।

"ज़्यादा छरछन्द न दिखाओ! मैं तुम्हें ख़ूब पहचानता हूं!"

"मेरे सूरमा!"

"बस करो, मैं कहता हूं!"

"ग्रिगोरी, मेरे राजा!"

"हटाओ भी!"

मात्योना के दुलार-प्यार से जब उसका ग़ुस्सा कुछ ठंडा पड़ गया तो वह उसकी ओर मुड़ा और व्यग्र भाव से बोला–

"तुम्हें डर नहीं लगता?"

"जब दोनों साथ रहेंगे, तो डर कैसा?" उसने सहज भाव से जवाब दिया।

उसके मुंह से यह सुनना बड़ा सुखद था।

"तुम कितनी अच्छी हो!" उसने कहा और इतने ज़ोरों से उसके चुटकी काटी कि वह चिचिया उठी।

ओरलोव दम्पति के पहले दिन की ड्यूटी में ही बारिक में काफ़ी संख्या में मरीज़ लाए गए और वे दोनों नवसिखुवे, जो एकरस जीवन के अभ्यस्त थे, क्रियाशीलता के इस भंवर में पड़कर घबरा और खो गए। अपने फूहड़पन से, जो कुछ करने को कहा जाता उसे न समझ पाने और दृश्यों की वीभत्सता से वे हतबुद्धि हो गए। अपनी ओर से वे पूरी कोशिश करते, लेकिन केवल दूसरों की राह में रुकावट डालने में ही सफल हो पाते। कई बार ग्रिगोरी को लगा कि अब उसपर ज़रूर डांट पड़ेगी या उसकी अयोग्यता के लिए उसे सख़्त चेतावनी दी जाएगी,

लेकिन यह एक भारी अचरज की बात थी कि कोई भी उसपर नहीं चिल्लाया।

डाक्टरों में से एक ने, जिसका क़द लम्बा, मूंछें काली, नाक तोते जैसी और दाहिनी भौंह के ऊपर एक बड़ा सा मस्सा था, जब ग्रिगोरी से एक रोगी को नहलाने में मदद देने के लिए कहा तो उसने रोगी को इतनी मज़बूती से बांहों के नीचे से पकड़ा कि वह चीख़ उठा और दर्द के मारे उसका चेहरा विकृत हो उठा।

"इसका कचूमर न निकालो, मित्र, ऐसा करो कि यह सही सालिम स्नान कर ले..." डाक्टर ने गम्भीरता से कहा।

ग्रिगोरी शर्म से गड़ गया। रोगी ने, जो क्षीणकाय लम्बा आदमी था, मुस्कराने का प्रयास करते हुए कहा—

"नया आदमी है न... सीखते-सीखते ही सीखेगा।"

ओरलोव दम्पति के बारिक में पहुंचते ही एक वृद्ध डाक्टर ने, जिसकी सफ़ेद और नोकदार दाढ़ी और बड़ी-बड़ी चमकीली आंखें थीं, उन्हें एक भाषण दिया कि रोगियों के साथ कैसे क्या करना चाहिए, किस प्रकार उन्हें उठाकर एक जगह से दूसरी जगह ले जाना चाहिए और विभिन्न परिस्थितियों में उन्हें कौनसे तरीक़े बरतने चाहिए। अन्त में उसने ग्रिगोरी और मात्र्योना से पूछा कि पिछले दिन वे स्नान कर चुके हैं अथवा नहीं, और उन दोनों को एक-एक सफ़ेद लबादा दिया। डाक्टर की आवाज़ कोमल थी और वह जल्दी-जल्दी बोलता था। ओरलोव दम्पति को वह बेहद पसन्द आया। सफ़ेद लबादा पहने लोग तेज़ी से आ जा रहे थे। आदेश दिए जा रहे थे और उन्हें जैसे हवा में ही लपक लिया जाता था। रोगी कांख और कराह रहे थे। पानी छलछला और बिखर रहा था और ये सब आवाज़ें हवा में तैर रही थीं जो अरुचिकर गंधों से इतनी अधिक पगी थीं कि डाक्टर के मुंह से निकला प्रत्येक शब्द और रोगियों के मुंह से निकली प्रत्येक कराह अपनी एक अलग तीखी गंध का संचार करती मालूम होती थी...

शुरू-शुरू में तो ग्रिगोरी को ऐसा मालूम हुआ जैसे वहां सभी कुछ अस्त-व्यस्त है—गड़बड़-झाले के सिवा उसे और कुछ नज़र नहीं आता था। उसे लगा कि चाहे जो हो, वह कभी यहां फ़िट नहीं बैठ सकेगा, वह यहां सांस तक न ले सकेगा और बीमार पड़ जाएगा... लेकिन कुछ ही घंटे

बाद वह भी उस स्फूर्ति से अछूता नहीं रहा जो यहां हर कहीं उमड़ रही थी। उसमें चेतनता और चुस्ती का संचार हुआ, यह जानने के लिए वह व्यग्र हो उठा कि कैसे अपने को उपयोगी बना सकता है। उसे लगा कि इस हलचल में शामिल होकर वह अधिक स्वस्थ और अधिक शांत अनुभव करेगा।

"बाइक्लोराइड ग्राफ़ मर्करी!" डाक्टर की आवाज़ आई।

"गर्म पानी!" दुबले-पतले, लाल और सूजी हुई पलकों वाले एक छात्र ने आदेश दिया।

"अरे, तुम... क्या नाम है तुम्हारा?.. हां, ओरलोव... जरा इसकी टांगों पर मालिश करो! इस तरह... समझे? हां, ठीक ऐसे ही... जरा धीरे-धीरे, कहीं उसकी खाल न खींच लेना!" एक अन्य छात्र ने, जिसके बाल लम्बे और मुंह पर चेचक के दाग़ थे, मालिश का तरीक़ा बताते हुए ग्रिगोरी से कहा।

"एक और रोगी लाया गया है!" किसी ने सूचना दी।

"उसे भीतर ले आओ, ओरलोव!"

और ग्रिगोरी–चकित, पसीने में तर, धुंधलाई आंखों और चकराए दिमाग़ के साथ–अपने बस भर कोई कसर न छोड़ रहा था। कभी-कभी एकसाथ इतनी अधिक चीजों की छाप उसके हृदय और मस्तिष्क पर पड़ती कि उसे अपने अस्तित्व तक का ज्ञान न रहता। मिट्टी के रंग के चेहरे, पथराई-सी आंखों के इर्द-गिर्द हरे धब्बे, रोग द्वारा सुखाए-निचोड़े अंग, चिपचिपी दुर्गंध वाली खाल, प्रायः जीवनशून्य शरीरों की भयानक ऐंठन–ये सब चीजें उसके हृदय में पंजे गड़ातीं और उसके पेट को उलटती मालूम होती थीं।

एक या दो बार बारिक के गलियारे में उसे अपनी पत्नी की उड़ती हुई झलक दिखाई दी। वह अब कुछ छरहरी हो गई थी, चेहरे का रंग मटियाला पड़ गया था, और वह कुछ खोई सी नज़र आती थी।

"कहो, कैसे चल रहा है?" उसने बैठी हुई आवाज़ में पूछा।

उसने एक क्षीण मुस्कराहट के साथ उसकी ओर देखा और बिना कुछ कहे आगे बढ़ गई।

सहसा ग्रिगोरी के दिमाग़ में एक ऐसा ख़्याल आया जो उसकी प्रकृति के विरुद्ध था–इस अभिशप्त जगह में अपने साथ अपनी स्त्री को भी

खींचकर कहीं उसने ग़लती तो नहीं की? अगर उसे कुछ हो गया तो? सो अगली बार जब वह उसे दिखाई पड़ी तो उसने कड़ी आवाज़ में कहा—

"सुनो, अपने हाथों को अच्छी तरह और बार-बार धोना और अपनी खूब देख-भाल रखना!"

"और अगर मैं न रखूं तो?" उसने पलटकर कहा और उसके छोटे-छोटे सफ़ेद दांत हंसी में चमक उठे।

इसपर वह झुंझला उठा। बुद्धू कहीं की, यह भी भला कोई मज़ाक़ करने की जगह है? कुछ तमीज़ नहीं होती इन स्त्रियों को। लेकिन मार्ल्योना ने उसकी आंखों में चिनगारी उछलते देख ली थी और इससे पहले कि वह पलटकर कुछ कहता, स्त्रियों के वार्ड में ग़ायब हो गई।

कुछ मिनट बाद वह अपनी जान-पहचान के एक पुलिसमैन को मुर्दा-घर में ले जा रहा था। पुलिसमैन स्ट्रेचर पर निश्चल झूल रहा था, विकृत पलकों के नीचे से उसकी पथराई हुई आंखें जैसे एकटक तप्त उजले आकाश पर जमी थीं। ग्रिगोरी ने उसकी ओर देखा और एक अनबूझ भय उसके बदन में सरसरा गया—केवल तीन दिन पहले तो उसने उसे अपने हल्क़े में चक्कर लगाते देखा था और उसे गाली तक दी थी—इस पुलिसमैन से उसकी कुछ खींचातानी चल रही थी। और अब वह यहां पड़ा था—वह, जो इतना हट्टा-कट्टा और इतना झगड़ालू था—बेजान, वीभत्स, ऐंठनों से विकृत।

ग्रिगोरी ने अनुभव किया कि कुछ है जो इसमें ग़लत है—अगर आदमी का यही हश्र होना है कि एक ही दिन में ऐसा घिनौना रोग उसे उठा ले जाए, तो इस दुनिया में वह जन्म ही क्यों ले? उसने ऊपर से नीचे तक पुलिसमैन पर एक नज़र डाली और उसका हृदय उसके लिए दुख से भर गया।

अचानक लाश का दाहिना हाथ हिला और सीधा तन गया और उसके ऐंठे हुए मुंह का बायां हिस्सा, जो अब तक अधखुला था, बन्द हो गया।

"रुको! प्रोनिन..." स्ट्रेचर के अपने छोर को जमीन पर टेकते हुए ग्रिगोरी ने हांफते हुए कहा, "यह ज़िन्दा है!"

दूसरे छोर वाला आदमी घूमकर मुड़ गया और नज़र गड़ाकर उसने मृत आदमी को एक क्षण तक देखा।

"झूठ क्यों बोलते हो?" उसने तीखी आवाज़ में कहा, "उसने अपनी बांह को ज़रा ताबूत के लिए सीधा किया है... क्या तुम इतना भी नहीं जानते? चलो, उठाओ स्ट्रेचर!"

"लेकिन वह हिला-डुला था," ग्रिगोरी ने भय से कांपते हुए ज़ोर देकर कहा।

"बस, चले चलो! तुम भी निरे चूज़े हो। एक बार बता दिया, लेकिन तुम समझो तब न? मैं कहता हूं, उसने अपनी बांह ताबूत के लिए सीधी की, सो वह बिलाशक हिला। तुम्हारा यह अज्ञान किसी दिन तुम्हें ले डूबेगा... ज़िन्दा है!—मुर्दा लाश के लिए भी कभी कोई ऐसी बात मुंह से निकालता है? अपने सिर मुसीबत मोल लेना चाहते हो क्या? कान खोलकर सुन लो, अब उनके हिलने का किसी के सामने नाम तक न लेना—वे सब ऐसा करते हैं। सारे नगर में ख़बर फैल जाएगी, मक्खी हाथी का रूप धारण कर लेगी और तब भुगतान करते नहीं बनेगा। 'ओह, वे ज़िन्दा लोगों को दफ़नाते हैं!'—लोगों की भीड़ यहां टूट पड़ेगी और वे हमारी बोटी-बोटी तक नोच डालेंगे... और तुम भी नहीं बच पाओगे। समझे? हां तो, इसे बाईं ओर पटक दो।"

उस आदमी की अविचलित आवाज़ और सहज अन्दाज़ से ग्रिगोरी ने कुछ थिरता का अनुभव किया।

"दिल छोटा न करो। धीरे धीरे आदत पड़ जाएगी। ऐसी बुरी जगह नहीं है यह। अच्छा खाना, अच्छा बरताव और अन्य सब बातें। हम सब भी एक दिन लाश बनेंगे, यह तय है। सो तब तक अपने होंठों को कसे रहो—असल चीज़ यही है। क्या तुम रंग-पानी करते हो?"

"हां," ग्रिगोरी ने कहा।

"बहुत ठीक। वहां, उधर, एक गड्ढे में मैंने बोतल छिपा रखी है। तो आओ, ज़रा चलकर गला तर कर लें।"

वे बारिक के पीछे उस गड्ढे के पास गए और उन्होंने अपना गला तर किया। इसके बाद चीनी की एक डली पर प्रोनिन ने पीपरमेंट की कुछ बूंदें डालीं और उसे ग्रिगोरी की ओर बढ़ाते हुए बोला—

"यह लो, इसे मुंह में डाल लो। फिर गंध नहीं आएगी। वोद्का के बारे में वे यहां बहुत सख़्त हैं। नुक़सानदेह जो है।"

"क्या तुम यहां के आदी हो गए हो?" ग्रिगोरी ने पूछा।

"एकदम शुरू से ही। मेरे देखते-देखते यहां बहुत से लोग मर चुके हैं – सैकड़ों। सच पूछो तो यह जीवन वैसा नहीं है जिसे आराम-चैन का जीवन कहते हैं, लेकिन यह बुरा भी नहीं है। यह भगवान् का काम है। जैसा युद्ध में होता है। युद्ध की नर्सों और डाक्टरों के बारे में कभी सुना है? तुर्को वाले युद्ध में मैंने उन्हें ख़ूब देखा। अरदागान और कार्स में। ये लोग हम सैनिकों से ज़्यादा बहादुर होते हैं। हम हाथों में बन्दूक़, गोलियां और संगीन लेकर युद्ध में उतरते हैं। लेकिन वे गोलियों की बौछारों के बीच इस तरह इधर से उधर घूमते हैं जैसे किसी बाग़ में टहल रहे हों। वे हमें या तुर्कों को लादकर फ़ील्ड-अस्पताल ले जाते और उनके चारों ओर गोलियां सनसनाती रहतीं। कभी-कभी किसी डाक्टरी दस्ते के आदमी की गुद्दी में गोली आकर लगती – ठांय! – और वह वहीं ढेर हो जाता।"

इस सम्भाषण और वोद्का के गहरे घूंट के बाद ग्रिगोरी की कुछ हिम्मत बंध गयी थी।

"एक बार जब लगाम हाथों में थाम ली तो उसे छोड़ना कैसा?" – किसी रोगी की टांगों पर मालिश करते हुए उसने मन ही मन कहा। उसके पीछे कोई कराह रहा था और रुआंसी आवाज़ में पुकार रहा था –

"पा-नी! ओह, दया, कोई..."

"ओफ़! और गरम! आराम मिलता है, डाक्टर साहब! ख़ुदा साक्षी है! कुछ गरम पानी और मिला लें!"

"इसे कुछ मदिरा दे दो," डाक्टर वाश्चेन्को ने आवाज़ दी।

काम के ज़ोर और उसमें रम जाने पर ग्रिगोरी ने अनुभव किया कि वास्तव में चीज़ें इतनी भयानक और घिनौनी नहीं हैं जितनी उसे शुरू-शुरू में मालूम हुई थीं, और जिसे वह गड़बड़-झाला समझा था वह एक महान् और बुद्धिमान शक्ति का सम्यक् संचालन था। यह सब होने पर भी हर बार जब कभी उसे पुलिसमैन की याद आती तो वह कांप उठता और नज़र बचाकर खिड़की में से बाहर अहाते में झांकने लगता। वह उसे मरा हुआ ही मानता था, लेकिन उसका यह विश्वास थिर नहीं था। अगर पुलिसमैन अचानक उछलकर खड़ा हो जाए और चीख़ उठे तो? उसे याद आ जाती वह बात, जो उसने किसी के मुंह से सुनी थी – यह कि एक बार

हैजे के शिकार लोग अपने तावूतों में से उछलकर बाहर निकल आए थे और दूर भाग गए थे।

अपनी पत्नी के बारे में वह रह-रहकर सोचता कि उसे यह सब कैसा लग रहा होगा। कभी-कभी उसके मन में हल्की-सी हूक उठती कि अपने काम से एक क्षण बचाकर खिसक जाए और मात्योना से मिल आए। लेकिन ऐसी तरंगों से उसे शर्म मालूम होती और मन ही मन वह उसे सम्बोधित करता—

"जाओ, खूब काम करो और काम करते-करते चुक जाओ, मेरी डबल रोटी! घबराओ नहीं, यहां तुम एकदम सींकिया हो जाओगी और तुम्हारे सारे मन्सूबे यों ही धरे रह जाएंगे..."

अपनी पत्नी के प्रति सन्देह का यह कोड़ा उसके हृदय को सदा कुरेदता रहता था कि पति के रूप में उसे नीचा दिखाने के लिए वह बराबर जोड़-तोड़ लगाया करती है। जब कभी सन्देह के मारे वह वस्तुस्थिति को जांचकर देखता तो उसे मानना पड़ता कि उसका ऐसे मन्सूबे बांधना ग़लत नहीं है। ऐसा न करे तो वह और क्या करे? क्या वह भी कोई जीवन है जो उसे बिताना पड़ा है? एकदम गया-बीता। ऐसे जीवन में दुनिया भर की बातें दिमाग़ में उठ सकती हैं। इस तरह तटस्थ तरीक़े से जब वह सोचता तो उसका सन्देह विश्वास में बदल जाता, कम से कम उस समय के लिए। इसके बाद वह अपने से सवाल करता कि उसे यह क्या सूझी जो उस खोली में से निकलकर इस उबलते हुए कड़ाहे में आ गिरा? इसका वह कोई जवाब न दे पाता, और उसके भीतर, कहीं ख़ूब गहराई में, उसकी यह उधेड़-बुन चलती रहती। उसकी दिमाग़ी उलझन उसके काम में बाधक न हो, इसलिए वह पूरा ज़ोर लगाकर ध्यान से डाक्टरों की गतिविधि का अनुसरण करता। उसने लोगों को पहले कभी इतने निःस्वार्थ भाव से काम करते नहीं देखा था जितने निःस्वार्थ भाव से लोग यहां काम करते थे। डाक्टरों और छात्रों के थककर चूर हुए चेहरों पर वह नज़र डालता और सोचता—"ये लोग सच्ची मेहनत की कमाई खाते हैं।"

काम ख़त्म हो जाने पर थकान से निढाल ग्रिगोरी बारिक के अहाते में निकल गया और दवाईघर की खिड़की के नीचे लेट गया। उसकी कनपटी बज रही थी, पेट में कोई जैसे पंजे गड़ा रहा था और उसके पांवों में दर्द हो रहा था। बिना किसी विचार या इच्छा के वह घास पर लम्बा

लेट गया, वहां पड़ा छिपते हुए सूरज की लाली से ख़ूब रंजित बादलों की ओर ताकता रहा और जल्दी ही नींद में डूब गया।

उसने सपने में देखा कि उसे और उसकी पत्नी को एक डाक्टर ने दावत दी है। एक बहुत बड़ा कमरा है जिसकी दीवार के साथ कुर्सियां सटी हैं। इन कुर्सियों पर बारिक के सभी रोगी बैठे हैं। डाक्टर और माल्योना कमरे के बीचोंबीच एक "रूसी" नृत्य कर रहे हैं और वह ख़ुद अकार्डियन बजा रहा है और हंस रहा है, क्योंकि डाक्टर की लम्बी टांगें झुक नहीं पातीं और उस समय जब रस्मी अन्दाज़ में शान के साथ माल्योना का अनुसरण करता हुआ वह कमरे में चक्कर लगाता था तो एकदम ऐसा मालूम होता था जैसे दलदल में सारस चल रहा हो। सब के सब मरीज़ भी उसे देख-देखकर हंसी से लोट-पोट हो रहे थे।

सहसा पुलिसमैन दरवाज़े में आकर खड़ा हो गया।

"अहा!" वह आतंकित करनेवाली आवाज़ में चिल्लाया, "सो तुमने समझ लिया था कि मैं मर गया, ठीक है न, ग्रिगोरी? मुझे तो मुर्दाघर में फेंक दिया और ख़ुद यहां अकार्डियन बजा रहे हो! अच्छा तो, चलो अब मेरे साथ! उठो!"

ग्रिगोरी जल्दी से उठ बैठा। उसका समूचा बदन थरथर कांप रहा था और ठंडा पसीना छूट रहा था। डाक्टर वास्चेन्को उसपर झुका हुआ था।

"तुम कैसे परिचारक हो, मेरे मित्र, जो यहां ज़मीन पर लम्बी ताने हो, सो भी पेट के बल?" उसने शिकायत के स्वर में कहा, "अगर तुम्हारे पेट में ठंड पहुंच गई, तो तुम अपने आपको रोग के चंगुल में फंसा पाओगे और इससे पहले कि तुम्हें इसका भान हो, इस दुनिया से कूच कर चुके होगे... नहीं, मित्र, ऐसे नहीं चलेगा। बारिक के भीतर तुम्हारे लिए बिस्तर मौजूद है, क्या उन्होंने तुम्हें यह नहीं बताया? तुम पसीने में तर हो और तुम्हें झुरझुरी चढ़ी हुई है। चलो मेरे साथ, तुम्हें कुछ दे दूं।"

"मैं कुछ थक गया था," ग्रिगोरी ने बुदबुदाकर कहा।

"यह और भी बुरा है। तुम्हें अपनी देख-भाल रखनी चाहिए। ये ख़तरे के दिन हैं और हमें तुम्हारी ज़रूरत है।"

ग्रिगोरी चुपचाप डाक्टर के पीछे-पीछे गलियारे में गया और वैसे ही चुप्पी साधे हुए एक गिलास में से कोई दवाई उसने अपने गले में उंडेल ली,

इसके बाद दूसरे गिलास की दवा ख़ाली की, मुंह बिचकाया और थूककर गला साफ़ किया।

"अब जाओ और थोड़ा सो लो," डाक्टर ने कहा और अपनी लम्बी-पतली टांगों से डग भरता वहां से चला गया।

ग्रिगोरी उसे जाते हुए देखता रहा और फिर अचानक अपनी पूरी बत्तीसी चमकाता डाक्टर के पीछे लपका।

"धन्यवाद, डाक्टर!"

"किसलिए?" उसने रुककर पूछा।

"आपने इतना कष्ट जो किया, इसलिए। विश्वास करें, आपके लिए मैं कुछ भी उठा नहीं रखूंगा! आपने मेरे लिए इतना कष्ट उठाया है... और... और यह कि मेरी यहां जरूरत है... बहुत-बहुत धन्यवाद!"

बारिक के इस परिचारक की ओर, जिसका चेहरा किसी नयी ख़ुशी से छलछला रहा था, डाक्टर ने अचरज से देखा और ख़ुद उसका चेहरा भी मुस्कराहट से खिल गया।

"तुम भी अजीब आदमी हो," उसने कहा, "ख़ैर, कोई बात नहीं। सब ठीक है, बिल्कुल ठीक है। सच पूछो तो तुम सब कुछ बहुत ही अच्छे ढंग से करते हो, सच्चे दिल से। बस, डटे रहो और अपनी कोशिश में कोई कसर न छोड़ो—मेरे लिए नहीं, रोगियों के लिए। हमें लोगों को इस रोग से बचाना है—जैसा कि कहते हैं, उसके पंजों में से उन्हें खींच लाना है। हम उसपर क़ाबू पाने में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे, ठीक है न? लेकिन पहले जाओ और थोड़ी नींद ले लो।"

इसके एक मिनट बाद ही ग्रिगोरी बिस्तर पर पड़ा ऊंघ रहा था और अपने पेट के भीतर किसी सुहावनी और सहलानेवाली चीज़ का अनुभव कर रहा था। वह ख़ुश था और यह सोचकर गर्व का अनुभव कर रहा था कि उसने डाक्टर के साथ कुछ सीधे-सादे शब्दों का आदान-प्रदान किया।

नींद में खो जाने से पहले आख़िरी बात जो उसके दिमाग़ में आई वह यह थी कि अगर मात्र्योना भी उनकी बातों को सुन पाती, तो कितना अच्छा होता। अगले दिन वह उसे सारा हाल बताएगा... वह उसका विश्वास नहीं करेगी, मिर्च की पुड़िया!

अगली सुबह पत्नी की आवाज़ ने उसे जगा दिया—

"चलो, चाय पी लो, ग्रिगोरी," उसने कहा।

उसने अपना सिर उठाकर उसकी ओर देखा। वह मुस्करा रही थी। बाल सफ़ाई के साथ कंघी से संवारे हुए थे और अपने सफ़ेद कपड़ों में वह अद्भुत रूप से साफ़-सुथरी तथा ताज़ादम मालूम हो रही थी।

इस रूप में वह बहुत ही सुहावनी लग रही थी और यह सोचकर वह कुछ विचलित हो उठा कि बारिक में भी वह इसी रूप में अन्य सब के सामने प्रकट होगी।

"चाय पीने का यह क्या चक्कर है? मेरी अपनी चाय मौजूद है, उसके लिए मैं अन्य कहीं क्यों मुंह मारूं?" उसने मुंह फुलाकर कहा।

"मेरे साथ चलो, और हम दोनों एक साथ चाय पिएंगे," अपनी आंखों में मृदु मुस्कान लिए उसने कहा।

ग्रिगोरी ने आंखें बचाते हुए कहा कि मैं अभी आता हूं।

उसके चले जाने के बाद वह फिर अपने बिस्तर पर लेट गया और सोचने लगा।

"उसके मन में क्या है? मुझे अपने साथ चाय पीने के लिए बुलाना और मुझे ऐसी प्यार भरी नज़रों से देखना... एक ही दिन में कुछ दुबली भी हो गई है।" उसके लिए उसने तरस का अनुभव किया और उसके जी में आया कि उसे ख़ुश करने के लिए कुछ करे। चाय के लिए कुछ मिठाई ख़रीदना कैसा रहेगा? लेकिन हाथ-मुंह धोते न धोते उसने यह विचार रद्द कर दिया। स्त्री को सिर चढ़ाने में कोई तुक नहीं। मिठाई के बिना भी वह मर नहीं जाएगी!

एक छोटे से कमरे में उन्होंने चाय पी। कमरे में दो खिड़कियां थीं जो उगते हुए सूरज की सुनहरी किरनों से सिंगार किए एक खेत की ओर खुलती थीं। खिड़की के पास घास की पत्तियों पर ओस के मोती अभी भी जगमगा रहे थे और ख़ूब दूर—सुबह के धुंधलके में—राजमार्ग के पेड़ों की पांत नज़र आ रही थी। आकाश स्वच्छ था और खिड़की में से सुबह की हवा के साथ ओस में भीगी धरती तथा घास की भीनी गंध आ रही थी।

मेज़ दोनों खिड़कियों के बीच दीवार से सटी थी और मेज़ पर तीन जने बैठे थे—ग्रिगोरी, मात्र्योना और मात्र्योना की एक सहेली—मझोली आयु की दुबली-पतली लम्बे क़द की स्त्री, मुंह पर चेचक के दाग़ और

बहुत ही भली भूरी आंखें। उसका नाम फ़ेलीत्साता येगोरोव्ना था। अभी उसका विवाह नहीं हुआ था और वह किसी कालेजिएट असेसर की लड़की थी। अपने लिए चाय का पानी वह हमेशा अपने समोवार में ही उबालती थी, क्योंकि अस्पताल की टंकी में उबला हुआ पानी पीते उसे घिन आती थी। अपनी फटी हुई आवाज में ओरलोव को यह सब बताकर और खिड़की के पास बैठकर "सच्ची देवी वायु" अपने फेफड़ों में भरने की सलाह देती हुई वह बाहर चली गई।

"कल क्या तुम बहुत थक गई थीं?" ग्रिगोरी ने अपनी पत्नी से पूछा।

"बुरी तरह," उसने प्रफुल्लता से कहा, "ऐसा मालूम होता था जैसे मेरे पांव टूटकर गिर पड़ेंगे और मेरा सिर इस तरह घूम रहा था कि उनकी एक भी बात, जो वे मुझसे कहते थे, मेरे पल्ले नहीं पड़ रही थी। डर के मारे कि कहीं मैं यहीं ढेर न हो जाऊं, मेरी जान सूख रही थी। बड़ी मुश्किल से, जाने कैसे, मैं सांझ तक खड़ी रह सकी। मेरे मुंह से बार-बार यही एक प्रार्थना निकल रही थी–'हे भगवान्, मेरी मदद करना'।"

"तुम्हें डर तो नहीं लगता?"

"लगता है–मुर्दों से। और क्या तुम्हें पता है," आगे की ओर झुकते हुए आतंक भरी फुसफुसाहट में वह बोली, "मरने के बाद वे हरकत करते हैं–सच, भगवान् साक्षी है!"

"यह तो मैंने ख़ुद अपनी आंखों से भी देखा है," अनमनी हंसी के साथ ग्रिगोरी ने कहा, "नजारोव पुलिसमैन ने तो मरने के बाद, कल मेरा जबड़ा ही तोड़ दिया होता, लेकिन बच गया। मैं उसे मुर्दाघर ले जा रहा था कि अचानक उसने बायां हाथ तड़ाक से मारा–मुझे मुश्किल से ही झुककर बचने का मौक़ा मिला। बोलो, कैसा लगता है यह तुम्हें?" बात को उसने कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कहा था, लेकिन यह अपने आप, उसकी इच्छा के बिना ही हो गया था।

इस उजले साफ़-सुथरे कमरे में, जिसकी खिड़कियों में से सीमाहीन हरे-भरे खेत और नीला आकाश नजर आता था, चाय पीना उसे बड़ा अच्छा मालूम हुआ। इसके सिवा कुछ और भी था जो उसे अच्छा लग रहा था, लेकिन यह कुछ और क्या था–उसकी पत्नी या वह ख़ुद–इसका उसे निश्चय नहीं था। जो भी हो, उसकी सर्वोपरि इच्छा यही थी कि अपनी प्रकृति का श्रेष्ठतम पहलू ही वह दर्शाए, दिन का हीरो बने।

"बस, काम का ग्रादी होने की देर समझो, फिर देखना, धरती किस प्रकार मेरे पांव के नीचे घूमती है। और उसकी वजह भी है। एक तो यह कि यहां जैसे लोग दुनिया भर में नहीं मिलेंगे!"

उसने उसे डाक्टर के साथ अपनी बातचीत का ब्योरा सुनाया—अनजाने में ही फिर बढ़ा-चढ़ाकर—और इससे उसका मूड और भी खिल गया।

"दूसरे, यह काम ही ऐसा है! यह एक महान् कार्य है, मिसाल के तौर पर युद्ध की भांति। एक ओर हैजा, दूसरी ओर लोग—जीत का सेहरा किसके सिर बंधेगा? यह काम ऐसा है जिसमें दिमाग़ लगता है और हर कील-कांटे से चौकस रहना पड़ता है। आख़िर, हैजा है क्या? पहले यह जानो और फिर उसपर प्रहार करो, ठीक उसके मर्मस्थल पर। डाक्टर वाश्चेन्को ने मुझसे कहा, 'इस काम में हमें तुम्हारी जरूरत है! डरो नहीं, पांवों से सूत कर उसे तुम रोगियों के पेट में खदेड़ दो और वहां बहुत ही तेज दवा से मैं उसकी गर्दन दबोच लूंगा। वह वहीं चीं बोल जाएगा और रोगी अच्छा होकर तुम्हें और मुझे उम्र भर दुआ देगा, क्योंकि उसे मौत के मुंह में से किसने छुड़ाया? हमने!'"

ग्रिगोरी का सीना गर्व से फूल गया और उसने चमकती हुई आंखों से अपनी पत्नी की ओर देखा।

जवाब में वह कुछ सोचती हुई मुस्कराई। ग्रिगोरी इस समय बहुत ही सुन्दर दिख रहा था—ठीक वैसा ही जैसा विवाह से पहले दिखाई देता था।

"हमारे वार्ड में भी ऐसे ही लोग हैं—बहुत भले और मेहनती। उनमें एक है—डाक्टर, ख़ूब मोटी-ताजी और डील-डौल वाली स्त्री। वह चश्मा लगाती है। सभी बहुत अच्छे हैं और इतनी अच्छी तरह बोलते हैं कि उनकी बात हमेशा समझ में आ जाती है।"

"सो तुम्हें शिकायत नहीं? तुम सन्तुष्ट हो?" ग्रिगोरी ने पूछा जिसका उछाह अब कुछ हल्का पड़ चला था।

"मैं? हाय भगवान्, यह भी कोई पूछने की बात है! तुम ख़ुद ही देखो—मुझे बारह रूबल मिलते हैं और बीस तुम पा जाते हो, कुल मिलाकर हर महीने बत्तीस रूबल हुए और ख़र्च कुछ भी नहीं। अब तुम्हीं सोचो, अगर यह हैजा चलता रहा तो जाड़ों तक हम कितना बचा लेंगे? भगवान् ने चाहा तो हमें अब उस गुफा में रेंगने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी..."

"हुंह, तुमने यह अच्छी सुझाई," ग्रिगोरी गुनगुनाया। फिर कुछ देर रुककर आशा से हुमकते हुए उसने अपनी पत्नी के कंधे थपथपाये और विह्वल आवाज़ में बोला, "ओह माल्योना, वह दिन अब आया ही समझो, जब सूरज हम पर भी अपनी किरनों की वर्षा करेगा! बस, अपनी ठोड़ी ऊंची रखना!"

वह प्रसन्न थी।

"केवल इतना ही है कि तुम अपना रंग-ढंग बदल लो..."

"अरे छोड़ो उसे! जैसा चमड़ा वैसी सुई, जैसा मौसम वैसे जूते... जब हमारा जीवन बदलेगा तो वह भी बदल जाएगा!"

"ओ, भगवान, काश कि ऐसा हो जाये!" औरत ने आह भरी।

"अब बस!"

"ग्रिगोरी!"

जब वे अलग हुए, उनके हृदय एक दूसरे के प्रति एक नयी भावना से उमग रहे थे। उनकी आशा-आकांक्षाओं ने उनमें आह्लाद और साहस का संचार कर दिया था और जी-जान से काम में जुटने की तत्परता उनमें छलछला रही थी।

अगले तीन या चार दिनों में ग्रिगोरी ने अपनी फुर्ती और कार्यकुशलता के लिए कई बार सराहना प्राप्त की, साथ ही उसने यह भी देखा कि प्रोनिन तथा कई अन्य परिचारक उससे जलते थे और उसे छोटा-मोटा नुक़सान पहुंचाने की कोशिश करते थे। वह चौकस हो गया और थलथल मुंहे प्रोनिन से घृणा करने लगा जिसे वह पहले अपना मित्र बनाने तथा जिसके सामने अपना हृदय खोलकर रखने के लिए तैयार रहता था। यह देखकर उसे बड़ा दुख होता कि उसके साथी पूरी बेशर्मी से उसे नीचा दिखाने के लिए जुटे हैं।

"शैतान कहीं के!" उसने मन ही मन कहा और अपने दांतों को ज़ोर से पीसा। उसने निश्चय किया कि वह भी अब तुर्की ब तुर्की जवाब देगा। फिर अनायास ही उसे अपनी पत्नी का ध्यान हो आया, जिसे वह सभी कुछ बता सकता है, जो न तो उसकी सफलता से जलेगी और न उसके बूटों पर कार्बोलिक तेज़ाब ही डालेगी, जैसा कि प्रोनिन ने किया था।

बाद के दिन भी उतने ही व्यस्त और हलचलपूर्ण बीते जितने शुरू के, लेकिन अब ग्रिगोरी को उतनी थकान नहीं मालूम होती थी। कारण कि

अब उसकी शक्ति का ख़र्च दिन प्रति दिन अधिक सुसंगत और नियमित होता जा रहा था। विभिन्न दवाइयों को उनकी गंध से ही वह पहचान लेता था और जब ईथर से उसका परिचय हो गया तो नजर बचाकर वह उसे ख़ूब सूंघता। इसका नतीजा उतना ही सुखद होता जितना कि वोद्का से भरे एक अच्छे ख़ासे जाम का। डाक्टर और छात्र भी उसे अधिकाधिक पसन्द करने लगे थे। एक तो इसलिए कि वह उनके आदेश बहुत ही फुर्ती से पूरे करता था और इसके अलावा वह सहृदय था और ख़ूब बतियाना तथा मरीजों को ख़ुश रखना जानता था। कुल मिलाकर जीवन के इस नये ढब की जो छाप उसके हृदय पर पड़ी थी, उसने ग्रिगोरी में एक विचित्र आह्लादपूर्ण मूड का संचार कर दिया था। उसे ऐसा अनुभव होता जैसे वह असाधारण गुणों वाला व्यक्ति है। उसके हृदय में कोई ऐसा काम करने की इच्छा का उदय हो गया था जो सब का ध्यान उसकी ओर खींचे, कोई ऐसा काम, जो सब को चकित कर दे। उसकी यह इच्छा किसी ऐसे व्यक्ति की महत्वाकांक्षा की इच्छा से कम या अधिक कुछ भी नहीं थी, जिसने अकस्मात ही अपने मानव रूप को पहचाना हो, पर जो अब भी उस प्रति नवीन तथ्य के प्रति संदिग्ध हो और अपने को तथा अन्यों को उस वास्तविकता के सम्बन्ध में आश्वस्त करने का माध्यम खोज रहा हो। धीरे धीरे महत्वाकांक्षा की वह भावना कोई निस्स्वार्थ महान् कार्य कर डालने की प्यास में परिवर्तित हो गई।

इससे प्रेरित होकर ग्रिगोरी अनावश्यक ख़तरों में हाथ डाल देता। मिसाल के तौर पर, किसी मदद की प्रतीक्षा किए बिना, उसने अकेले ही एक भारी-भरकम मरीज़ को बिस्तर से उठाया और उसे ग़ुसलख़ाने की ओर ले चला। वह सबसे गंदे मरीजों की टहल का काम अपने जिम्मे लेता, छूत लगने के ख़तरे का जान-बूझकर मुंह चिढ़ाता और मृतों को इतनी सरलता से अपनाता मानो वह उनकी मौत का ही इन्तज़ार कर रहा हो। उसे इतने से ही सन्तोष नहीं होता था। कोई बड़ा काम करने की हूक उसे चैन नहीं लेने देती थी। वह बराबर बढ़ती ही जाती, उसके हृदय को कचोटती और उसमें उदासी का संचार करती। ऐसे क्षणों में वह अपनी पत्नी के सामने अपना हृदय उंडेलकर रख देता। कारण, उसके सिवा अन्य कोई ऐसा नहीं था जिससे वह बातें कर सकता।

एक सांझ, जब उनका काम ख़त्म हो चुका था और वे भोजन कर

चुके थे, दोनों टहलने के लिए खेतों में निकल गए। बारिक नगर से कुछ दूर एक लम्बे हरे-भरे मैदान में बनी थी। मैदान के एक बाजू काले जंगल की एक पट्टी फैली थी और दूसरे बाजू नगर की इमारतों की पांत दिखाई देती थी। उत्तर की ओर, ख़ूब दूर तक, खेत फैले थे जिनका हरा विस्तार धुंधले नीले क्षितिज के साथ घुल-मिलकर एकाकार हो गया था। दक्षिण की ओर, नदी की खड़ी ढाल उसे काट देती थी। खड़ी चट्टान पर पथ था, जहां सम अन्तर पर पुराने और ख़ूब फैले हुए पेड़ों की पांत खड़ी थी। सूरज छिप रहा था और बगीचों की घनी हरियाली के ऊपर गिरजों के क्रॉस चमक रहे थे और प्रकाश की सुनहरी किरनों को छितरा रहे थे। बाहरी छोर पर स्थित घरों की खिड़कियां भी उसी प्रकार सूर्यास्त की लाल लपटों को छितरा रही थीं। कहीं से संगीत की ध्वनि आ रही थी। घाटी में से, जो फ़र के पेड़ों से ख़ूब घनी आच्छादित थी, राल की गंध आ रही थी। पेड़ अपनी बोझिल रसीली गंध हवा में उंडेल रहे थे और सुगंधित हवा के कोमल और सुहावने झोंके, नगर की ओर प्रवाहित हो रहे थे। दूर-दूर तक फैले थे निराले खेत बड़े ही प्यारे मालूम होते थे—कुछ इतने शान्त, इतने मधुर और इतने उदास थे वे!

ग्रिगोरी और माल्योना चुपचाप खेतों में टहल रहे थे। बारिक की गंध की तुलना में इस स्वच्छ हवा को अपने फेफड़ों में भरना उन्हें बड़ा आनन्दप्रद मालूम हो रहा था।

"न जाने यह संगीत की ध्वनि कहां से आ रही है—नगर की ओर से या छावनी की ओर से?" माल्योना ने अपने पति से पूछा जो विचारों में खोया था।

उसे उसका विचारों में खोना अच्छा नहीं लगता था। जब भी ऐसा होता था तो वह उसे पराया और अपने से बहुत दूर-सा लगता था। आजकल, वे एक दूसरे से बहुत ही कम मिल पाते थे, उसके लिए एक-एक क्षण मूल्यवान होता था।

"संगीत?" जैसे सपने से चौंककर ग्रिगोरी ने कहा, "भाड़ में जाए वह संगीत! तुम्हें वह संगीत सुनना चाहिए जो मेरी आत्मा के तारों से झंकृत हो रहा है.. यह है संगीत!"

"यह तुम क्या कह रहे हो?" अपने पति की आंखों में व्यग्र भाव से देखते हुए माल्योना ने पूछा।

"मैं... मैं नहीं जानता... मेरी आत्मा दहक रही है... वह विस्तार चाहती है... असीम शक्ति अनुभव करता हूं मैं अपने में। मिसाल के लिए अगर यह हैजा किसी महावीर का रूप धारण कर ले... ख़ुद इल्या मूरोमेत्स* ही क्यों न मेरे सामने आ जाए, मैं उसे ऐसे हाथ दिखाऊं कि वह भी याद रखे! जान की बाज़ी लगाकर युद्ध हो! तुम तगड़े हो और यह ग्रिगोरी भी कुछ कम नहीं है। सो दो-दो हाथ हो जाएं, देखें कौन जीतता है। मैं हैज़े की जान निचोड़ लूं और इसके बाद धरती पर गिरकर ख़ुद भी जान दे दूं... बाहर खेतों में मेरी क़ब्र होगी और उसपर क्रॉस लगाते हुए वे कहेंगे – 'यहां ग्रिगोरी अन्द्रेयेविच ओरलोव सोया है जिसने रूस को हैज़े से मुक्त किया'। बस, इतना ही और कुछ नहीं..."

जब वह बोल रहा था तो उसका चेहरा चमक रहा था और आंखें कौंध रही थीं।

"मेरे सूरमा!" मात्र्योना बुदबुदाई और उसके और भी निकट हो गई।

"अगर मुझे यह जंच जाए कि इससे कुछ भला होगा, जीवन कुछ और सहज हो जाएगा, तो सैकड़ों संगीनें भी मुझे नहीं रोक पायेंगी, क्योंकि मैं देख चुका हूं कि लोग क्या हो सकते हैं – मिसाल के लिए जैसे डाक्टर वास्चेन्को और वह छात्र ख़ोख़रियाकोव। तुम सोच भी नहीं सकतीं कि वे किस तरह काम करते हैं। इसे आश्चर्य ही समझो जो वे अब तक जीवित हैं... क्या तुम समझती हो कि वे धन के लिए ऐसा करते हैं? धन के लिए कोई इस तरह काम नहीं कर सकता। भगवान की दया से डाक्टर के पास धन की कोई कमी नहीं है, लेकिन पिछली बार जब वृद्ध डाक्टर बीमार पड़ा तो डाक्टर वास्चेन्को ने लगातार चार दिन तक काम किया – क्षण भर के लिए भी उसने अपने घर का रुख़ नहीं किया... यहां पैसा कोई मानी नहीं रखता – बड़ी चीज़ है दया की भावना। दूसरों के लिए तरस, और ख़ुद अपने लिए कोई तरस नहीं... वे किसपर तरस खाते हैं? हर किसी पर... मिसाल के तौर पर मिश्का ऊसोव को लो जिसका

---

*इल्या मूरोमेत्स रूसी आल्हों का एक बहादुर है जो अपनी वीरता के लिए मशहूर है। सं०

उपयुक्त स्थान—जैसा कि सभी जानते हैं—जेल है, क्योंकि मिश्का चोर है और भी जाने कितने ऐब उसमें भरे हैं... लेकिन उन्होंने मिश्का को चंगा करने में कोई कसर न छोड़ी... जब वह बिस्तर से उठा तो वे इतने ख़ुश हुए कि बस—हंसने लगे... मैं भी उस ख़ुशी का स्वाद लेना चाहता हूं—ख़ूब जी भरकर—इतना कि मैं उसमें डूब जाऊं! कारण, जब वे ख़ुशी से हंसते हैं, तो हृदय में चोट लगती है और मैं वहां खड़ा हुआ बस ताकता रहता हूं। मेरा रोम-रोम कसकता और जलने लगता है। ओह, भाड़ में जाए यह सब!"

और ग्रिगोरी फिर विचारों में डूब गया।

माल्योना ने कुछ नहीं कहा, लेकिन उसका हृदय चिन्ता से धड़क रहा था। उसके पति की उत्तेजना ने उसे भयभीत कर दिया था। उसके शब्दों के पीछे उसने उसकी आकांक्षा की गहराई को साफ़ तौर पर अनुभव किया और यह एक ऐसी आकांक्षा थी जो उसकी समझ में नहीं आती थी क्योंकि उसे समझने की उसने कभी कोशिश नहीं की थी। उसे कोई सूरमा नहीं, अपना पति ही प्यारा था, उसी की उसे जरूरत थी।

घाटी के कगार पर पहुंच कर वे दोनों अगल-बगल बैठ गए। नौउम्र भोज वृक्षों की घुंघराली कलगियां नीचे से उनकी ओर देख रही थीं। नीली धुंध घाटी की तलहटी से चिपकी थी और उसकी गहराइयों में से सीलन, फर वृक्षों और पिछले साल की पत्तियों की गंध उठ रही थी। रह-रहकर हवा का झोंका आता, भोज वृक्षों की टहनियां झूम उठतीं और इसी प्रकार नन्हे फ़र वृक्ष लहराने लगते। समूची घाटी में एक सहमी-सी कांपती हुई मर्मर-ध्वनि गूंज रही थी, मानो पेड़ों का कोई प्रिय उनकी टहनियों के साये में सो रहा था और वे इस डर से कि कहीं उसकी नींद न उचट जाए, बहुत ही धीमे स्वरों में एक दूसरे से फुसफुसाकर बतिया रहे थे। नगर में रोशनियां चमचमा रही थीं, जैसे बगीचों की धुंधली पृष्ठभूमि में उजले फूल खिले हों। ओरलोव दम्पति चुप बैठे थे। ओरलोव उंगलियों से अपने घुटने पर ताल दे रहा था, माल्योना आंखें ऊंची किए उसकी ओर देख रही थी और धीमी उसांसें भर रही थी।

सहसा उसने अपनी बांहें उसके गले में डाल दीं और अपना सिर उसके सीने से सटा लिया।

"ग्रिगोरी, मेरे प्यारे, मेरे जीवन-धन!" वह फुसफुसा उठी, "एक बार

फिर कितने अद्भुत हो उठे हो तुम, मेरे सूरमा, ऐसा मालूम होता है... जैसे हमारा वह जीवन लौट आया है... जो हम उस समय बिताते थे... जबकि हमारी शादी हुई थी–तुम ऐसी कोई बात नहीं कहते, जो मुझे चोट पहुंचानेवाली हो, और तुम मुझसे हर समय बातें करते हो, अपने मन की सारी बातें खोलकर रख देते हो... मुझे पीटते नहीं हो..."

"तो क्या पिटने के लिए तुम्हारी हड्डियां कुड़मुड़ा रही हैं? अगर चाहो तो मैं अभी धमाधम कर सकता हूं," प्रेम की रमक में हुमकते और पत्नी के लिए तरस अनुभव करते हुए कोमल स्वर में उसने कहा।

उसने उसके बालों को थपथपाना शुरू किया और यह उसे इतना सुखद और इतना पितृतुल्य मालूम हुआ, जैसे वह बच्ची हो–और माल्योना सचमुच बच्ची के समान थी, उसकी बांहों में वह एक मुलायम गेंद की भांति दुबक गई थी और उसके सीने से सटी कुनमुना रही थी।

"मेरे प्रिय," वह गुनगुनाई।

उसने एक गहरी सांस ली और उसके मुंह से अपने आप शब्दों की एक ऐसी धारा बहने लगी जो ख़ुद उसके लिए और माल्योना के लिए भी नयी थी।

"मेरी गुड़िया! तुम कुछ भी कहो, लेकिन पति जैसा मित्र कोई नहीं होता। और तुम हो कि किसी अन्य की ताक-झांक में लगी रहती हो... अगर मैंने तुम्हारे साथ कभी-कभी सख़्ती बरती तो इसका कारण मेरी वेदना था– वहां उस खोह में रहना, कभी रोशनी का मुंह तक न देखना, लोग वास्तव में कैसे होते हैं इसकी जानकारी न होना। लेकिन उस खोह से बाहर निकलते ही मेरी आंखें खुल गईं, उससे पहले मैं अंधा था। अब मैं जानता हूं कि पत्नी–सबसे अच्छी मित्र है। कारण, सच पूछो तो ज़्यादातर लोग निरे सांप हैं... वे सिर्फ़ ज़हर उगलना जानते हैं। मिसाल के लिए जैसे प्रोनिन और वस्युकोव। लेकिन जहन्नुम में जाएं वे... ख़ैर, कोई बात नहीं, माल्योना। सब ठीक हो जाएगा... तुम बस अपनी ठोड़ी ऊंची रखो। हम बढ़िया और संगत जीवन बिताना शुरू करेंगे। अरे, यह क्या? तुम यह क्या करने लगीं, मेरी भोली रानी?"

उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे–ख़ुशी के आंसू–और चुम्बनों से उसने उसके प्रश्नों का जवाब दिया।

"मेरी गुड़िया!" वह फुसफुसाया और उसने भी उसे चूम लिया।

दोनों ने एक दूसरे के आंसुओं को चुम्बनों से धो दिया और दोनों ने उनके खारेपन की बानगी ली। बहुत देर तक ग्रिगोरी ऐसे शब्दों का उच्चारण करता रहा जो उसके लिए नये थे।

अंधेरा घिर आया। तारों भरा आकाश गम्भीर उदासी से नीचे धरती की ओर ताक रहा था और खेत भी आकाश की भांति ही शांत थे।

एकसाथ कलेवा करने की आदत उन्होंने डाल ली थी। खेतों में अपनी बातचीत के बाद अगली सुबह ग्रिगोरी अपनी पत्नी के कमरे में आया। उसका चेहरा भारी और कुछ परेशान-सा था। फ़ेलीत्साता बीमार थी, इसलिए मात्योना कमरे में अकेली थी। उसने अपना प्रसन्न चेहरा उसकी ओर घुमाया, लेकिन उसपर तुरत एक छाया सी तिर गई—

"क्यों, बात क्या है? तबीयत तो कुछ गड़बड़ नहीं है?"

"मैं बिल्कुल ठीक हूं," कुर्सी पर बैठते हुए उसने रुखाई से जवाब दिया।

"तो फिर क्या बात है?"

"रात मैं सो नहीं सका। सारी रात जागता और सोचता रहा। किस तरह पिछली रात... हम कूके और चहके... पूरे अल्हड़पन के साथ... अब मैं शर्म से कटा जा रहा हूं। वह सब नहीं चलेगा। तुम स्त्रियां हमेशा यही चाहती हो कि पुरुष को अपनी उंगली पर नचाओ... लेकिन यह न समझना कि तुम मेरे साथ भी वैसा ही कर सकती हो—ऐसा करने से कुछ पल्ले नहीं पड़ेगा... तुम मुझे अपने जाल में नहीं फंसा सकतीं—मैं तुम्हारे धोखे में नहीं आऊंगा। यह तुम अच्छी तरह से समझ रखना!"

उसने यह सब बहुत जोर देकर कहा, लेकिन बिना अपनी पत्नी की ओर देखे। मात्योना अपनी आंखें उसके चेहरे पर गड़ाए थी और उसके होंठों में विचित्र बल पड़ रहे थे।

"सो तुम्हें इस बात का दुख है कि पिछली रात हम दोनों एक दूसरे के इतना निकट थे, यही न?" उसने बुदबुदाते हुए कहा, "तुम्हें दुख है कि तुमने मुझे चूमा और प्यार किया, यही कहना चाहते हो न? काश तुम्हें पता होता कि ऐसी बातें कहकर तुम मुझे कितनी चोट पहुंचा रहे हो! अपने निर्मम शब्दों से तुम मेरा हृदय तोड़ डालोगे। आख़िर तुम चाहते

क्या हो? क्या तुम मुझसे ऊब गए हो? क्या तुम अब मुझसे प्रेम नहीं करते, या कोई और बात है?"

उसने सन्देह-भरी नजर से अपने पति की ओर देखा। उसकी आवाज में चुनौती और तीखापन था।

"न... नहीं," ग्रिगोरी ने बेचैनी से कहा, "तुम जानती ही हो कि तुम्हें और मुझे कैसा जीवन बिताना पड़ा है। उसका ख़याल आते ही आंतें उलटने लगती हैं। अब हम उससे उबर आए हैं... और मैं सहम गया हूं। सभी कुछ इतनी आकस्मिकता से बदल गया... जैसे मैं और साथ ही तुम भी दूसरे आदमी हों। इसका क्या मतलब है? इसके बाद अब और क्या होनेवाला है?"

"जो भगवान् चाहेगा, वही होगा, ग्रिगोरी," मात्र्योना ने गम्भीरता से कहा, "लेकिन इसके लिए दुखी न होवो कि पिछली रात तुम इतने प्यार और दुलार से भरे थे।"

"ख़ैर, हटाओ इस बात को..." ग्रिगोरी ने बीच में ही कहा और फिर आत्मचेतन हो गया, "फिर भी मुझे लगता है कि कुछ ढंग से नहीं गुजर पायेगी हमारी जिन्दगी। हमारा पुराना जीवन भी कोई ख़ास आह्लाद-पूर्ण नहीं था और यह नया जीवन भी मुझे पसन्द नहीं है। बेशक यह सही है कि मैं अब पीता नहीं हूं, तुम्हें मारता-पीटता नहीं, गालियां भी नहीं देता, फिर भी..."

मात्र्योना जोर से हंस पड़ी—

"यह सब करने का अब तुम्हें समय ही कहां मिलता है।"

"पीने के लिए मैं जब भी चाहता, समय निकाल लेता," ओरलोव ने मुस्कराते हुए कहा, "लेकिन मैं चाहता ही नहीं, है न आश्चर्य की बात! कुल मिलाकर मैं नहीं जानता कि ऐसा क्यों है... शर्म की वजह से अथवा मेरे मन में डर है इसलिए..." उसने सिर पीछे की ओर झटका और फिर कुछ सोचने लगा।

"भगवान ही जानता है कि तुम्हें क्या हो गया है," गहरी सांस भरते हुए मात्र्योना ने कहा, "यहां हम अच्छा जीवन बिता रहे हैं, हालांकि काम बहुत करना पड़ता है। डाक्टर तुम्हें पसन्द करते हैं, तुम कोई ऐसा काम नहीं करते जो तुम्हें नहीं करना चाहिए। अब और क्या चाहते हो? तुम्हारे जैसा बेचैन जीव मिलना मुश्किल है!"

"यह सच है, मैं बेचैन हूं... सारी रात मैं सोचता रहा। प्योत्र इवानोविच का कहना है कि सभी लोग बराबर हैं। क्या मैं ठीक वैसा ही नहीं हूं जैसा कि अन्य कोई? लेकिन डाक्टर वास्चेन्को मुझसे ज्यादा अच्छा है। इसी प्रकार प्योत्र इवानोविच तथा अन्य बहुत-से लोग मुझसे अच्छे हैं... दूसरे शब्दों में यह कि वे मेरे बराबर नहीं हैं, मैं उनके बराबर नहीं हूं और यह मुझसे छिपा नहीं है। उन्होंने मिश्का ऊसोव को अच्छा किया, इससे उन्हें ख़ुशी हुई... लेकिन यह एक ऐसी बात है जो मेरी समझ में नहीं आती। अगर एक आदमी अच्छा हो गया तो इसके लिए ख़ुश क्यों हुआ जाए? अगर सच कहा जाए तो जिस तरह का जीवन वह बिताता है, वह हैज़े के मरोड़ों से कहीं ज्यादा बुरा है। वे यह जानते हैं और फिर भी ख़ुश होते हैं... मैं भी उनकी भांति ख़ुश होना चाहता हूं, लेकिन नहीं, मैं ख़ुश नहीं हो सकता... क्योंकि इसमें ख़ुशी की ऐसी बात ही क्या है?"

"लोगों के लिए उनके हृदय में तरस जो है," मात्र्योना ने विरोध किया, "हमारे वार्ड में भी जब कोई स्त्री अच्छी होने लगती है तो... काश कि तुम उस समय का दृश्य देख पाते! अगर वह ग़रीब होती है तो पैसा, दवाई और सलाह देकर वे उसे उसके घर के लिए विदा करते हैं... देखकर आंखें छलछला उठती हैं—इतने अच्छे हैं वे!"

"आंखें छलछला उठती हैं... और मुझे तो केवल अचरज होता है। बस, और कुछ नहीं," ग्रिगोरी ने अपने कंधों को झटका और सिर खुजलाते हुए अपनी पत्नी की ओर चकराई आंखों से देखा।

मात्र्योना ने यह सिद्ध करने के लिए कि लोगों पर तरस खाना जरूरी है, अपने पति के सामने अचानक शब्दों की एक झड़ी-सी लगा दी। वह उसकी ओर आगे को झुकी थी, उसकी कोमल आंखें उसके चेहरे पर टिकी थीं और वह लोगों और उनके जीवन की कठोरता के बारे में कहती जा रही थी। ग्रिगोरी उसे देखता हुआ सोच रहा था—

"ओह, ऐसे रही है! इसके पास इतने शब्द कहां से आ गए?"

"और ख़ुद तुम भी उनपर तरस खाते हो। क्या तुमने यह नहीं कहा था कि तुम इतने सशक्त बनना चाहते हो कि हैज़े को दबोचकर उसकी जान निकाल डालो? भला क्यों? तुम तो हैज़ा फैलने से ही अच्छा जीवन बिताने लगे हो?"

ग्रिगोरी खिलखिलाकर हंस पड़ा –

"यह एकदम सच है! सचमुच, जीवन तब से अच्छा बीत रहा है। ओह, जहन्नुम में जाए यह सब! लोग मर रहे हैं और मैं उसकी वजह से बेहतर जीवन बिताने लगा हूं। देखा, ऐसा है यह जीवन!"

हंसते हुए वह उठकर खड़ा हो गया और अपना काम करने चल दिया। गलियारे में से गुजरते समय वह सोच रहा था, "कितना अच्छा होता अगर अन्य लोगों ने भी मात्र्योना को बोलते सुना होता। उसने एक अच्छा ख़ासा भाषण दे डाला। है तो औरत, फिर भी कुछ समझती है!" जब वह मर्दों के वार्ड में पहुंचा तो उसका हृदय ख़ुशी से उमंग रहा था। वार्ड से रोगियों के कराहने और घरघराकर सांस लेने की आवाजें आ रही थीं।

मात्र्योना ने अनुभव किया कि अपने पति की नजरों में उसका महत्त्व अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है और इसके लिए वह अपनी भरपूर शक्ति से हर प्रयत्न करती। व्यस्त और स्फूर्तिशील जीवन ने, जो वह बिता रही थी, ख़ुद अपनी नजरों में भी उसे ऊंचा उठा दिया था। विचारों में डूबने और चीजों को तौलने की उसे आदत नहीं थी, लेकिन खोली के जीवन को जब भी वह याद करती – जहां पति और छोटी-सी गृहस्थी की देख-भाल में ही उसका समूचा जीवन सिमटकर रह गया था – तो उसकी वर्तमान से तुलना किए बिना न रहती। इस प्रकार, धीरे-धीरे, उस खोह में उनके जीवन की दुखद स्मृति उसके मस्तिष्क से मिटती जा रही थी। बारिक के अधिकारी उसकी उद्यमशीलता और दक्षता के लिए उसे चाहते थे, सभी उसपर मेहरबान थे और इन्सान की भांति उसके साथ व्यवहार करते थे। यह एक ऐसी चीज थी जो उसने पहले कभी नहीं जानी थी और उसे अधिकाधिक बड़े प्रयास करने के लिए प्रेरित करती थी...

एक दिन रात की पाली में मोटी डाक्टर ने उससे उसके पहले जीवन के बारे में पूछा और वह बड़ी तत्परता से खुलकर उसे हर चीज बताने लगी। अचानक वह मुस्कराते हुए बीच में ही रुक गई।

"अरे, तुम हंसने क्यों लगीं?" डाक्टर ने पूछा।

"कोई ख़ास बात नहीं... भयानक जीवन था वह... और – क्या आप विश्वास करें, मेरी प्यारी मालकिन, मैं यह जानती तक न थी! सच, ठीक इस क्षण तक मुझे यह मालूम नहीं था!"

अतीत के इस अवलोकन के बाद अपने पति के प्रति उसके रवैये में एक विचित्र परिवर्तन हो गया। प्यार तो वह अब भी उसे उतना ही अधिक करती थी जितना कि पहले, नारी के अनियंत्रित अंधे आवेग के साथ, लेकिन अब उसे ऐसा अनुभव होता था मानो ग्रिगोरी उसका ऋणी हो। कभी-कभी जब वह उससे बातें करती तो उसके स्वर में संरक्षक का भाव झलकता, क्योंकि ग्रिगोरी के बेचैन उद्‌गार उसके हृदय में बहुधा तरस की भावना का संचार करते। लेकिन कभी-कभी ऐसे क्षण भी आते जब उसे सन्देह होने लगता कि वह और उसका पति कभी एक थिर और शांतिमय जीवन बिता सकेंगे, हालांकि वह विश्वास करती थी कि ग्रिगोरी में थिरता आएगी और उसकी यह वेदना, जो उसे बेचैन बनाए है, शांत हो जाएगी।

भाग्य का विधान था कि वे एक दूसरे से मिले और वे दोनों युवा, मजबूत और उद्यमशील प्राणी–दो जून रोटी के दैनिक संघर्ष में पूर्णतया फंसे अपना भयानक अधभूखा जीवन बिताते रहते, अगर ग्रिगोरी के शब्दों में, "उसके हृदय की उथल-पुथल" ने उन्हें उबार न लिया होता जो दैनिक चक्र के ख़िलाफ़ उसके हृदय को विक्षुब्ध किए रहती थी।

सितम्बर की एक उदास सुबह को बारिक के अहाते में एक घोड़ा-गाड़ी आई। उस गाड़ी में से ओनिन ने रंग-रोग़न के धब्बों से आच्छादित एक छोटे लड़के को निकाला–बेजान, क्षीण, सांस तक लेने में असमर्थ।

"मोक्राया सड़क के, पेतुन्निकोव घर का एक और रोगी," यह पूछा जाने पर कि उसे कहां से लाया गया है, गाड़ीवान ने जवाब दिया।

"सेन्का!" ग्रिगोरी दुख से चिल्ला उठा, "मेरे नन्हे! सेन्का, तुम मुझे पहचानते हो, क्या?"

"हां-आं-आं!" सेन्का बड़ी कठिनाई से फुसफुसाया और ओरलोव को देखने के लिए, जो स्ट्रेचर का ऊपरी सिरा थामे आगे की ओर झुका था, अपनी आंखों को घुमाया।

"ओह, इतना चपल कि टिड्डे की भांति यहां से वहां फुदकता-फिरता था! तुम इसके चंगुल में कैसे फंस गये, सेन्का?" ग्रिगोरी ने पूछा। रोग से बुरी तरह जकड़े इस बच्चे को देखकर ग्रिगोरी बहुत परेशान हो उठा था। एक दूसरे से टकरानेवाले भावों का उसके हृदय में उदय हुआ और

अन्त में वे एक प्रश्न बनकर रह गये—"लड़के को इस रोग ने क्यों पकड़ लिया? उसने किसी का क्या बिगाड़ा था?" वह वहीं खड़ा व्यथा से सिर हिला रहा था।

सेन्का कांप उठा। उसने कुछ कहा नहीं।

उन्होंने उसे बिस्तर पर लेटा दिया और उसके चिथड़े उतारने लगे जिनमें इन्द्रधनुष के सभी रंग पुते थे।

"मुझे ठंड लग रही है," सेन्का ने कहा।

"हम अभी तुम्हें गर्म स्नान कराएंगे, और सब ठीक हो जाएगा," ग्रिगोरी ने कहा।

"तुम मुझे अच्छा नहीं कर सकते," सेन्का फुसफुसाया, "चचा ग्रिगोरी... जरा नीचे झुको... अपना कान मेरे पास... मैंने अकार्डियन चुरा लिया... लकड़ियों के बाड़े में है... चुराने के तीन दिन बाद पहली बार मैंने उसे हाथ से छुआ... अद्भुत है वह... मैंने उसे छिपा दिया... और तभी... देखो न, तभी पेट में ऐंठन हुई... मैंने पाप किया इसलिए... सीढ़ियों के नीचे दीवार पर लटका है... उसके आगे मैंने कुछ लकड़ियां चुन दीं... उसे वापिस कर देना, चचा ग्रिगोरी! अकार्डियन-वादक की एक बहन है... उसने उसे मांगा था... उसे लौटा देना..." उसके मुंह से एक कराह निकली और वह बेसुध हो गया। उसका बदन ऐंठ रहा था।

उसे बचाने के लिए जो कुछ भी हो सकता था किया गया, लेकिन सेन्का के अधभूखे शरीर में जीवन अपने पांव जमाए रखने में समर्थ नहीं हो सका और सांझ को ग्रिगोरी उसे उठाकर मुर्दाघर ले गया। उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे किसी ने ख़ुद उसके दिल को कोई भारी ठेस लगाई हो।

मुर्दाघर में ग्रिगोरी ने बच्चे के अंगों को सीधा करने की कोशिश की, लेकिन कर नहीं सका। वह वहां से लौट आया—टूटा हुआ, हताश और इस छोटे बच्चे के ऐंठे हुए बदन का चित्र अपने दिमाग़ में लिए, जो कभी अत्यन्त जीवन्त था।

मृत्यु के सामने अपनी लाचारी की अनुभूति ने उसे निःसत्व कर दिया। कितनी सावधानी से उसने उसकी देख-भाल की, कैसे जान खपाकर डाक्टरों ने उसके लिए कोशिश की, फिर भी वह मर गया। इसपर वह विक्षुब्ध हो उठा... ऐसे ही किसी दिन रोग उसे भी जकड़ लेगा, गांठों में उसे बांध डालेगा, और इसके बाद अन्त! एकाकीपन की भावना से ग्रस्त वह

भय से कांप उठा। काश वह किसी समझदार आदमी के सामने इस सब के बारे में अपना हृदय खोलकर रख सकता! कई बार छात्रों में से किसी एक से उसने बातें करने की कोशिश की, लेकिन उनमें से किसी के पास भी दार्शनिक चर्चा करने के लिए समय नहीं था। सो इसके सिवा अब और कोई चारा नहीं था कि अपनी पत्नी के पास जाकर वह उससे ही बातें करे। वह चला भी गया—उदास और दुःखी।

माव्योना कमरे के एक कोने में मुंह-हाथ धो रही थी और मेज पर रखे समोवार में पानी उबल रहा था। कमरे में उसके भनभनाने और भाप छोड़ने की आवाज गूंज रही थी।

ग्रिगोरी बिना कुछ बोले बैठ गया और अपनी पत्नी के चिकने कंधों पर उसने अपनी आंखें जमा दीं। समोवार खलबला रहा था, पानी छलक रहा था, माव्योना नाक साफ़ कर रही थी, गलियारे में क़दमों की चहल-पहल थी और ग्रिगोरी उनकी आवाज पर कान लगाए उन्हें पहचानने की कोशिश कर रहा था।

सहसा उसे ऐसा अनुभव हुआ जैसे माव्योना के कंधे वैसे ही ठंडे और चिपचिपे हो गए हों जैसे कि सेन्का के उस समय थे जब उसका बदन ऐंठनों में जकड़ा था। वह कांप उठा।

"सेन्का मर गया..." उसने धीमी आवाज में कहा।

"सेन्का? भगवान् उसकी आत्मा को शांति दे," माव्योना ने श्रद्धा से गुनगुनाते हुए कहा और इसके बाद थूकने-खखारने लगी—साबुन उसके मुंह में चला गया था। "उसके लिए बड़ा अफ़सोस हो रहा है," ग्रिगोरी ने उसांस छोड़ी।

"ओह, बड़ा ही शैतान था।"

"वह अब मर चुका है। तुम्हें यह नहीं कहना चाहिए कि वह कैसा था... वह मर गया, यह बड़े दुख की बात है। वह बहुत ही तेज था और वह अकार्डियन, अब... हुंह! बहुत चपल था वह! कभी-कभी उसे देखकर मेरे दिल में ख़्याल आता कि उसे अपना चेला बना लूं... अनाथ... हमारा आदी हो जाता और बेटे की भांति हमारे साथ रहता... यों तुम हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ स्त्री हो, लेकिन बच्चे नहीं जनतीं... एक हुआ था और बस। है न बुरी बात? अगर घर में नन्हे-मुन्ने खेलते-दौड़ते होते तो जीवन इतना सूना न रहता... तुम्हीं सोचो, किसलिए हम अपने हाड़-

गोड़, घिस रहे हैं? अपना पेट भरने के लिए। मगर क्यों? इसलिए कि हम और अधिक दिनों तक हाड़-गोड़, घिस सकें? और यह अंधा चक्का चलता रहेगा, ऐसे ही घूमता रहेगा... अगर बच्चे होते तो यह जीवन कुछ और ही होता।"

वह सिर झुकाए बोल रहा था। उसका स्वर उदास और शिकायत-भरा था। मात्र्योना, जो उसके सामने खड़ी थी, उसकी बातें सुन रही थी और उत्तरोत्तर अधिक पीली पड़ती जा रही थी।

"मैं स्वस्थ हूं, तुम स्वस्थ हो, फिर भी हमारे कोई बच्चा नहीं," ग्रिगोरी कहता गया, "ऐसा क्यों? मैं इस बारे में दिन-रात सोचता रहता हूं और इस सोच को डुबाने के लिए... पीता हूं।"

"यह झूठ है!" मात्र्योना ने जोरों से कहा, "यह झूठ है! ऐसी गंदी बात फिर कभी मुंह से न निकालना! सुन रहे हो न? हां, फिर कभी ऐसा कहने की हिम्मत न करना। तुम इसलिए पीते हो कि तुम्हें पीने में मज़ा आता है, इसलिये कि तुम अपने को क़ाबू में नहीं रख सकते, न कि इसलिये कि बच्चे नहीं हैं। झूठ बोलते ज़बान भी नहीं गिर पड़ती!"

ग्रिगोरी सन्न रह गया। वह कुर्सी पर पीछे की ओर झुक गया, उसने पत्नी की ओर देखा और उसे विश्वास नहीं हुआ कि यह वही है। इतने गुस्से में उसने पहले कभी उसे नहीं देखा था और न ही उसने इतनी झुलसा देनेवाली घृणा या अंगारों की भांति धधकते शब्दों की पहले कभी अपने पति पर बौछार की थी।

"हां, हां, कहती जाओ न?" चुनौती की आवाज़ में लम्बा करते और दोनों हाथों से कुर्सी का छोर दबोचते हुए ग्रिगोरी ने कहा।

"कहूंगी! अगर तुमने इस तरह मेरे मुंह पर न थूका होता, तो मैं अपना मुंह न खोलती! मैं तुम्हारे लिये बच्चे नहीं जनती? और कभी जनूंगी भी नहीं! मैं जन ही नहीं सकती... तुम कभी बच्चे का मुंह नहीं देख सकोगे!" और उसकी यह चीख़ सुबकियों में डूब गई।

"चिल्लाओ नहीं," ग्रिगोरी ने कहा।

"मैं क्यों बच्चे नहीं जनती? याद करो, कितनी बार जब जी चाहता था, तुम मुझे पीटते थे? कितनी बार तुमने मेरे पेट में ठोकरें मारीं? हिसाब लगाओ! याद करो, किस तरह तुम मुझे धुनते थे! क्या तुम्हें मालूम है कि तुम्हारे कोड़ों ने मेरा कितना ख़ून बहाया है? मेरे कपड़े ख़ून

में तर हो जाते थे। यही वजह है कि मैं बच्चे नहीं जन सकती, मेरे प्यारे! और अब तुम उलटे मेरे ही मुंह पर थूकने का साहस करते हो? तुम्हें शर्म नहीं आती और अपनी इस थूथनी को लेकर मेरे सामने आ खड़े होते हो! तुम हत्यारे हो, यही तुम्हारी असलियत है! ख़ुद तुमने अपने बच्चों की हत्या की है! और दोष मेरे कंधों पर थोपते हो कि मैं बच्चे नहीं जनती... मैंने बहुत कुछ सहा है, बहुत कुछ दरगुजर किया है, लेकिन इन शब्दों के लिए मैं तुम्हें जीते जी माफ़ नहीं कर सकती! मरने की आख़िरी घड़ी तक मैं इन्हें नहीं भूलूंगी! क्या तुम नहीं जानते कि इसके लिए ख़ुद तुम जिम्मेदार हो, यह कि तुम्हारे मारने-पीटने की वजह से ही ऐसा हुआ है? क्या मैं अन्य स्त्रियों से कुछ भिन्न हूं जो मैं बच्चों की मां बनना नहीं चाहती? रात-रात भर जागकर मैंने भगवान् से बिनती की है कि मेरे पेट के बच्चे की तुम्हारे आघातों से रक्षा करे, हत्यारे... दूसरे लोगों के बच्चे को देखकर ईर्ष्या से मेरा जी घुटने लगता था और मुझे अपने पर तरस आता था... मां मरियम, मेरी कितनी इच्छा थी कि मैं मां बनूं... लुक-छिपकर मैं उस सेन्का को दुलराती थी... मैं... बंध्या... ओ, दयामय भगवान्!"

वह हांफ रही थी। असम्बद्ध शब्द उसके मुंह से निकल रहे थे। उसके चेहरे पर सियाही पुत गई थी, उसका समूचा बदन कांप रहा था, अपनी गर्दन को वह नोच रही थी और सुबकियां उसके गले तक उमड़ आई थीं। ग्रिगोरी, पीला और सकपकाया-सा, फटी आंखों से इस स्त्री की ओर ऐसे ताक रहा था मानो उसने उसे पहले कभी देखा ही नहीं था। वह उससे भयभीत था—भयभीत था कि वह अभी उछलकर उसकी गर्दन पर झपटेगी और उसका गला घोंट डालेगी। प्रतिशोध की लपटों से लपलपाती उन बनैली आंखों में यह ख़तरा मौजूद था। अब वह उससे दूनी मजबूत थी—यह वह समझ रहा था और डर रहा था। वह उठकर अब उसपर प्रहार नहीं कर सकता था जोकि वह निश्चय ही करता, अगर यह समझ न गया होता कि किसी ताक़त ने उसे यह नया रूप प्रदान कर दिया है।

"तुमने मेरी आत्मा को घायल किया है... भारी गुनाहों का बोझ तुमपर लदा है। लेकिन मैंने वह सब सहा और मुंह से एक शब्द नहीं निकाला... इसलिए कि मैं तुम्हें प्यार करती हूं। लेकिन मैं तुम्हें इस तरह अपने मुंह पर थूकने नहीं दूंगी! यह मेरे बस के बाहर है... जो शब्द

14—1681

तुमने अपने मुंह से निकाले हैं, उनके लिये तुम्हें नरक भी भोगना पड़े, ईश्वर के दिये वरदान मेरे!"

"ज़बान बन्द करो!" अपने दांत दिखाते हुए ग्रिगोरी बड़बड़ाया।

"अरे, झगड़ालुओ! क्या तुम्हें इतना भी ध्यान नहीं कि तुम कहां हो?"

ग्रिगोरी की आखों पर एक धुंध-सी चढ़ी थी। वह कुछ देख नहीं सका कि दरवाज़े में कौन खड़ा है। उसने एक भयानक गाली दी और उस आदमी को धकियाते हुए तेज़ी से बाहर खेतों की ओर निकल गया। माल्योना एक क्षण वहीं कमरे के बीचोंबीच खड़ी रही और फिर, अंधे की भांति हाथों को फैलाए, लड़खड़ाती हुई बिस्तर की ओर बढ़ी और एक कराह के साथ उसपर ढह गई।

अंधेरा घिर आया था। छितरे हुए बादलों की ओट में छिपा सुनहरी चांद, कौतुक में भरा, कमरे के भीतर झांक रहा था। लेकिन शीघ्र ही बारिश की महीन बौछारें—जो शरद् की अन्तहीन झड़ियों की अग्रदूत थीं—बारिक की दीवार और खिड़कियों पर पटापट गिरने लगीं।

दीवार-घड़ी का पेंडुलम टिक-टिक की आवाज़ कर क्षणों के बीतने की सूचना दे रहा था, बारिश की बूंदें खिड़कियों के शीशों से टकरा रही थीं। एक के बाद एक घंटा बीत रहा था, बारिश हो रही थी और स्त्री बिस्तर पर निश्चल पड़ी थी। उसकी सूजी हुई आंखें छत पर टिकी थीं, उसके दांत भिंचे थे और उसके गालों की हड्डियां उभर आई थीं। लेकिन बारिश थी कि अभी तक दीवारों और खिड़कियों पर पटापट गिर रही थी। ऐसा मालूम होता था जैसे वह अलसाहट-भरे किसी एक ही सुर को बार-बार बुदबुदा रही हो, जैसे वह किसी को किसी चीज़ का विश्वास दिलाने के लिए चिन्तित हो, लेकिन अपने आलसी स्वभाव के कारण इस काम को फुर्ती और सुन्दरता से सम्पन्न करने के बजाए किसी बेरस मंत्र को बार-बार दोहराकर—जिसमें सच्चे विश्वास की लगन का कोई चिन्ह नहीं था—इस काम को पूरा करने की आशा बांधे हो।

आकाश में सुबह का क्षीण उजाला जब दिन की सूचना देने लगा था, बारिश उस समय भी हो रही थी। माल्योना की आंखें रात भर नहीं झपकी थीं। बारिश की एकरस टपाटप एक भयप्रद प्रश्न ध्वनित कर रही थी।—

"आगे क्या होनेवाला है?"

इसका उत्तर नशे में धुत्त उसके पति के रूप में उसकी आंखों के सामने कौंध गया। प्रेम में पगे शान्तिपूर्ण जीवन के सपने को तिलांजलि देना उसके लिए कठिन था। इस सपने को उसने अपने हृदय में संजोकर रखा और तमाम भयंकर तथा डरावनी आशंकाओं को अपने मस्तिष्क से निकाल बाहर किया था। लेकिन इतना वह अच्छी तरह से जानती थी कि अगर ग्रिगोरी ने फिर पीना शुरू कर दिया तो वह उसके साथ जीवन नहीं बिता सकेगी। वह उसे भिन्न रूप में देख चुकी थी, वह ख़ुद भी भिन्न हो गई थी और पहले के जीवन का ख़याल उसे भयानक और घिनौना मालूम होता था – यह नये अनुभव थे, जिनसे वह पहले अपरिचित थी। लेकिन वह स्त्री थी और पति के साथ इस मनमुटाव के लिए ख़ुद को दोष देने लगी –

"हे भगवान, यह सब कैसे हो गया? मैं कैसे इतनी बेलगाम हो गई?"

उजाला फैल चला था। खेतों के ऊपर घनी धुंध छाई थी जिसने आकाश को छिपा लिया था।

"मात्योना ओरलोवा! ड्यूटी पर चलो..."

आवाज़ सुनकर वह उठी, उतावली में हाथ-मुंह धोए और बारिक में चली गई। उसका जी ठीक नहीं था और वह कमजोरी अनुभव कर रही थी। उसकी गिरी हुई हालत, पथराई-सी आंखों और मुरझाये चेहरे ने वार्ड में सभी को अचरज में डाल दिया।

"क्या तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं है?" डाक्टर ने उससे पूछा।

"नहीं, कोई बात नहीं..."

"हमें बताने में संकोच न करो। तुम्हारी जगह किसी और की ड्यूटी लगा देंगे..."

मात्योना लजा गई। वह अपनी आशंकाओं और वेदना को इस स्त्री के सामने प्रकट नहीं करना चाहती थी जो सहृदय होते हुए भी आख़िर ग़ैर थी। क्षत-विक्षत आत्मा में साहस के नाम पर जो कुछ भी बच रहा था, उसे उसने बटोरा और एक हल्की हंसी हंसते हुए बोली –

"कोई ख़ास बात नहीं! मुझमें और मेरे आदमी में ऐसे ही कुछ तनातनी हो गई... सब ठीक हो जाएगा... यह कोई पहली बार ही ऐसा नहीं हुआ है..."

14*

"ओह, बेचारी!" डाक्टर ने, जो जानती थी कि कैसा जीवन वह बिता चुकी है, उसांस भरते हुए कहा।

माल्योना के जी में आया कि इस स्त्री के वक्ष में मुंह छिपाकर अपने हृदय का भार हल्का कर ले... लेकिन वह केवल अपने होंठों को मजबूती से भींचकर रह गई और हाथ से उसने अपना गला दबा लिया जिससे अपनी सुबकियों को नीचे धकेलकर फिर वहीं पहुंचा दे जहां से वे उमड़ आई थीं।

जब उसका काम खत्म हो गया तो वह अपने कमरे में लौट आई और खिड़की से बाहर देखने लगी। खेतों को पार कर एक गाड़ी बारिक की ओर आ रही थी सम्भवतः किसी रोगी को लिए हुए। महीन बौछारें पड़ रही थीं... और कुछ नजर नहीं आ रहा था। एक आह भरकर माल्योना खिड़की से हट गई और मेज पर जा बैठी।

"आगे क्या होनेवाला है?" उसके रोम-रोम में यह सवाल सरसरा रहा था।

सकते की हालत में वह देर तक वहीं बैठी रही। हर बार जब भी गलियारे में कोई पदचाप सुनाई देती वह चौंक उठती, अपनी कुर्सी में उचकती और मुड़कर दरवाजे की ओर देखती...

लेकिन अन्त में जब दरवाजा खुला और ग्रिगोरी ने भीतर पांव रखा तब न तो वह चौंकी और न ही वह उठकर खड़ी हुई। ऐसा मालूम होता था जैसे शरद् के बादल आकाश से नीचे उतर आए हों और अपनी समूची शक्ति से उसे नीचे दबा रहे हों।

ग्रिगोरी दरवाजे पर एक क्षण के लिए ठिठका, अपनी गीली टोपी को उतारकर उसने फ़र्श पर पटक दिया और पैरों से आवाज करता पत्नी की ओर बढ़ गया। उसके कपड़ों से पानी चू रहा था। उसका चेहरा लाल था, आंखें धुंधलाई, होंठ एक प्रशस्त और बोड़म हंसी में फैले हुए। उसके बूटों में पानी पिच-पिच हो रहा था। वह बहुत ही अस्तव्यस्त और त्रस्त नजर आ रहा था। माल्योना को ऐसी आशा नहीं थी।

"यह अच्छा हुलिया बना रखा है," उसने कहा।

उसने मूर्खों की भांति सिर हिलाया—

"कहो, तुम्हारे सामने घुटनों के बल गिर जाऊं?"

उसने कोई जवाब नहीं दिया।

"नहीं चाहतीं? तुम्हारी मर्ज़ी... तब से मैं यह निश्चय करने का प्रयत्न कर रहा हूं कि मैं दोषी हूं कि नहीं? लगता है कि हूं। सो मैं तुमसे कहता हूं—कहो, तुम्हारे सामने घुटनों के बल गिर जाऊं?"

उसने फिर कोई जवाब नहीं दिया। ग्रिगोरी के मुंह से वोद्का के भभकारे आ रहे थे, जिससे मात्र्योना के हृदय में कटुता का संचार हो रहा था।

"इधर देखो, ज्यादा बनो नहीं! अच्छा यही है कि जब तक मैं शांत हूं, तुम कुछ कह-सुन लो," ग्रिगोरी ने कहा और उसकी आवाज उत्तरोत्तर ऊंची होती गई, "बोलो, तुम मुझे माफ़ कर रही हो या नहीं?"

"तुम नशे में हो," मात्र्योना ने सांस खींचते हुए कहा, "जाओ और झपकी लो..."

"यह झूठ है, मैं नशे में नहीं हूं, मैं केवल थक गया हूं। तब से मैं बराबर चलता और सोचता रहा हूं। ओह, क्या कुछ मैंने नहीं सोचा! कहे देता हूं, जरा संभलकर रहना!"

उसने अपनी उंगली हिलाकर उसे धमकाया और एक वक्र मुस्कराहट उसके होंठों पर दौड़ गई।

"कुछ कहतीं क्यों नहीं?"

"मैं तुमसे बात नहीं कर सकती।"

"बात नहीं कर सकतीं? क्यों?"

सहसा वह भड़क उठा और उसकी आवाज़ दृढ़तर हो गई।

"पिछली रात तुम मुझपर चिल्लाई थीं, भोंकी थीं, और मैं हूं कि यहां खड़ा तुमसे माफ़ी मांग रहा हूं। यह समझ लो!"

उसकी आवाज़ भयानक थी, उसके होंठ बल खा रहे थे और उसके नथुने फूले हुए थे। मात्र्योना जानती थी कि इसका क्या मतलब है। उसकी कल्पना में बीते जीवन के दृश्य मूर्त हो उठे—वह खोली, शनिवार को मार-पीट, उनके दम घोंट जीवन की उदासी।

"समझ गई!" उसने करारी आवाज़ में कहा, "मैं देख रही हूं कि जंगली जन्तु फिर तुम्हारे भीतर सिर उठा रहा है!"

"जंगली जन्तु? उसका इससे क्या वास्ता? मैं तुमसे माफ़ करने के लिए कह रहा हूं। क्या तुम यह समझती हो कि तुम्हारी माफ़ी के बिना

मेरी जान निकल जाएगी? उसके बिना भी मैं मजे में गुजर कर सकता हूं, लेकिन मैं चाहता हूं कि तुम मुझे माफ़ कर दो, समझीं?"

"जाओ, ग्रिगोरी!" कातर आवाज़ में उसने कहा और मुड़कर उससे अलग दूर हो गई।

"चला जाऊं?" उसने कुत्सित हंसी के साथ कहा, "क्या इसलिए कि फिर तुम आज़ादी से मनमानी कर सको? ओह नहीं! इसे देखा है तुमने?"

उसने उसके कंधे को पकड़ा, झटककर अपनी ओर खींचा और उसके चेहरे पर एक चाकू तान लिया। जंग लगे लोहे का छोटा, मोटा और तेज़ टुकड़ा।

"काश तुम मेरा काम तमाम कर देते!" माल्योना ने एक गहरी उसांस छोड़ते हुए कहा और उसे धकेलकर फिर अलग जा खड़ी हुई। वह सकपकाकर पीछे की ओर लड़खड़ाया–इतना शब्दों से आहत होकर नहीं, जितना कि उस लहजे से, जिसमें वे शब्द कहे गये थे। उसने पहले भी उसे यह कहते सुना था, लेकिन इस तरह से कभी नहीं। एक क्षण पहले वह आसानी से उसपर प्रहार कर सकता था, लेकिन अब यह उसके वश की बात नहीं थी और न ही वह ऐसा करना चाहता था। उसकी इस उदासीनता से भयभीत उसने चाकू मेज़ पर फेंक दिया और मंद कुत्सा से कहा–

"शैतान की नानी! आखिर तुम चाहती क्या हो?"

"मैं तुमसे कुछ नहीं चाहती!" माल्योना हांफ उठी, "तुम मेरी जान लेने आए थे न? तो ले लो।"

ग्रिगोरी ने बिना कुछ कहे उसकी ओर देखा। वह पूर्णतया हत्‌बुद्धि हो गया था। वह यह निश्चय करके यहां आया था कि अपनी पत्नी को अपने आगे झुकाकर छोड़ेगा। पिछली रात की टक्कर में वह जबर सिद्ध हुई थी। यह बात उसे खटक रही थी और इसे वह अपने लिए अपमानजनक समझता था। वह निश्चित रूप से जानता था कि चाहे जो भी हो, उसे फिर अपने अंगूठे के नीचे लाना ही होगा। तेज़ उमंगों के इस आदमी ने, पिछले चौबीस घंटों में क्या कुछ नहीं सोचा और क्या कुछ नहीं सहा? लेकिन अपने मस्तिष्क के धुंधलेपन के कारण भावों की इस उथल-पुथल को वह नहीं समझ सका जिसे उसकी पत्नी के सही अभियोग ने उसके हृदय में पैदा कर दिया

था। इतना ही वह भांप सका था कि वह विद्रोह पर उतरी है, और इसी लिए एक चाकू वह अपने साथ ले आया था कि उसे देखकर उसका विद्रोह ठंडा पड़ जाएगा और अगर वह अधिक ज़ोर दिखाती तो वह उसे मार भी डालता। लेकिन वह थी कि वहां, सामने ही, खड़ी थी–अरक्षित, वेदना से चूर और फिर भी उससे ज्यादा मजबूत। यही वह डंक था जिसने उसे डस लिया था, और उसकी चुभन ने उसे बहुत कुछ ठंडा कर दिया था।

"सुनो," उसने कहा, "अपने इस हवाई घोड़े से अब नीचे उतर आओ! तुम मुझे जानती हो–मैं सचमुच इसे तुम्हारी पसलियों के आर-पार कर सकता हूं–और बस, खेल ख़त्म! न बांस रहे, न बजे बांसुरी। एकदम सीधा नुस्ख़ा..."

यह महसूस करते हुए कि उसे जो कुछ कहना चाहिए था, वह यह नहीं है, वह रुक गया। मात्र्योना हिली-डुली नहीं, उसकी ओर पीठ किए जहां की तहां खड़ी रही। उसके मस्तिष्क में इस समय भी वही प्रश्न नाच रहा था– "आगे क्या होनेवाला है?"

"मात्र्योना," मेज़ का सहारा लेते हुए और पत्नी की ओर झुकते हुए ग्रिगोरी ने कहा, "अगर सब कुछ ठीक-ठाक नहीं है, तो उसके लिये क्या मैं दोषी हूं?"

उसने अपना सिर झुका लिया और एक गहरी सांस खींची।

"जीवन में घुन लगा है। यह भी कोई जीवन है? हैज़े के मरीज़ हैं तो सही, लेकिन इससे क्या? क्या वे मेरे जीवन को सहज बनाते हैं? उनमें से कुछ मर जायेंगे, अन्य अच्छे हो जायेंगे, लेकिन मैं... मुझे तो जीते जाना है। मगर कैसे? यह कोई जीवन नहीं है, यह तो केवल एक गहरी ऐंठन है... क्या यह न्याय है? मैं हर चीज़ देखता-समझता हूं, लेकिन मेरे लिये यह कठिन है। मैं अब और अधिक ऐसे जी नहीं सकता... तुम्हीं देखो, कितनी अधिक देख-भाल उनकी होती है, कितना अधिक ध्यान उनपर दिया जाता है... और मैं स्वस्थ हूं, लेकिन मेरी आत्मा टीस रही है, तब तो क्या मैं उनसे भी गया-बीता हूं? ज़रा सोचो, मेरी हालत हैज़े के मरीज़ों से कहीं बदतर है... मेरी आत्मा ऐंठनों की शिकार है! और तुम मुझपर चिल्लाती हो! मुझे जंगली जन्तु कहती हो! पियक्कड़ बताती हो। ओह, स्त्रियों की बुद्धि भी अजीब होती है!"

वह धीरे-धीरे, सीधे-सरल ढंग से अपनी बात कह रहा था, लेकिन

वह कुछ सुन नहीं रही थी। वह पूरी बेरहमी से अतीत की छानबीन कर रही थी।

"सो तुम चुप हो," अपने हृदय में किसी नये सशक्त भाव को उमड़ता हुआ अनुभव कर ग्रिगोरी ने कहा, "तुम कुछ कहती क्यों नहीं? क्या चाहती हो तुम मुझ से?"

"कुछ भी नहीं चाहती मैं!" मात्योना चीख़ उठी, "क्यों तुम मुझे सताते हो? आख़िर तुम चाहते क्या हो?"

"मैं क्या चाहता हूं? मैं चाहता... मैं..."

ग्रिगोरी ने अनुभव किया कि जो वह चाहता है, उसे वह कह नहीं सकता – उस ढंग से नहीं, जिससे कि बात तुरंत ख़ुद उसकी और उसकी पत्नी की समझ में आ जाए। वह समझ गया कि उन दोनों के बीच एक खाई पैदा हो गई है और यह कि उसे किन्हीं भी शब्दों से नहीं पाटा जा सकता...

तब उसमें अंधे गुस्से की आग भड़क उठी। उसने अपनी बांह जोरों से तानी और अपनी पत्नी की गुद्दी पर घूंसा मारा, पागल की भांति चिंघाड़ते हुए –

"तेरी मंशा क्या है, चुड़ैल? कौनसी चाल अब चलना चाहती है? जान से मार डालूंगा!"

आघात के कारण उसका सिर मेज से जा टकराया, लेकिन वह उछलकर खड़ी हो गई और उसने अपने पति की ओर देखा। उसकी आंखों में घृणा की आग धधक रही थी।

"रुक क्यों गए?" उसने जोरों से थिर आवाज़ में कहा।

"मुंह बन्द रख!"

"लो, पीटो!"

"पिशाचिनी कहीं की!"

"बस, ग्रिगोरी। सहनशीलता की हद हो चुकी..."

"मुंह बन्द रख!"

"अपने साथ अब और अधिक मनमानी नहीं करने दूंगी तुम्हें..."

उसने अपने दांत पीसे और एक डग पीछे हट गया, शायद उसपर फिर प्रहार करने के लिए।

लेकिन तभी दरवाज़ा खुला और डाक्टर वाश्चेन्को ने भीतर पांव रखा।

"यह क्या तमाशा है? तुम अपने आपको आख़िर कहां समझते हो?"

उसके चेहरे पर कठोरता थी, साथ ही स्तब्धता का भी भाव था। ग्रिगोरी ज़रा भी नहीं अचकचाया, उसने थोड़ा झुककर अभिवादन भी किया—

"कोई ख़ास बात नहीं... मियां-बीवी अपनी कुछ सफ़ाई कर रहे थे..."

वह डाक्टर के मुंह पर उन्मादियों की भांति हंस पड़ा...

"तुम ड्यूटी पर हाज़िर क्यों नहीं हुए?" उसके इस छिछलेपन से झुंझलाकर डाक्टर ने तेज़ आवाज़ में पूछा।

ग्रिगोरी ने अपने कंधे झटके और शान्त भाव से कहा—

"मैं व्यस्त था... एक निजी काम में..."

"और कल रात यहां कौन हुल्लड़ मचा रहा था?"

"हम..."

"तुम? बहुत ख़ूब! तुम इस तरह व्यवहार करते हो जैसे यह तुम्हारी नानी का घर हो—बिना किसी से पूछे चल देते हो, और..."

"इसलिए कि तुम्हारे बन्धक ग़ुलाम नहीं हैं..."

"चुप रहो! तुमने यहां शराबख़ाना बना रखा है... जंगली जानवर! अभी मालूम हो जाएगा कि तुम कहां हो..."

अवज्ञा की अंधी भावना की बाढ़ से, इस बनैली इच्छा से कि एकदम टाट उलटकर उस जंजाल से, जिसमें उसकी आत्मा उलझी थी, पीछा छुड़ा ले, ग्रिगोरी पागल-सा हो उठा। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि वह क्षण आ गया है जब वह कोई असाधारण काम करेगा जिससे वे बन्धन टूटकर अलग जा गिरेंगे जो अंधेरे में टटोलती उसकी आत्मा को जकड़े थे। उसके समूचे बदन में एक कंपकंपी-सी दौड़ गई और पेट के गढ़े में एक झुरझुरी का उसने अनुभव किया। बिल्ली की भांति अपनी बत्तीसी झलकाता वह डाक्टर की ओर मुड़ा और बोला—

"इतना नहीं चिल्लाओ, बेकार दिमाग़ की कोई नस न फट जाए। मुझे ख़ूब मालूम है कि मैं कहां हूं—बूचड़ख़ाने में!"

"क्या-आ-आ? क्या कहा तुमने?" उसकी ओर झुकते हुए डाक्टर ने पूछा। उसे जैसे काठ मारा गया था।

ग्रिगोरी जानता था कि कोई अत्यन्त कुत्सित बात उसके मुंह से निकल

गई है, लेकिन इससे उसका आवेग ठंडा पड़ने के बजाए और भी तेज हो गया।

"कोई बात नहीं, सब ठीक है! उतर जायेगा यह भी गले के नीचे... चलो, मात्र्योना, अपनी सब चीजें बटोर लो!"

"नहीं, यह नहीं होगा, मेरे प्यारे! सीधी तरह पहले मेरे सवाल का जवाब देने का कष्ट करो..." डाक्टर ने जहरीली शान्ति के साथ कहा, "और इसके लिए, कम्बख़्त, मैं तुम्हें..."

"चिल्लाओ नहीं... कोसो नहीं..." उद्धत भाव से डाक्टर की आंखों में ताकते हुए ग्रिगोरी ने कहा। जब वह बोल रहा था तो उसे ऐसा अनुभव हो रहा था जैसे वह छलांगें भरता बढ़ रहा हो और प्रत्येक छलांग के साथ उसकी जी हल्का होता जा रहा हो, "शायद तुम इस भ्रम में हो कि हैज़े ने तुम्हें मुझे मनचाहा नाच नचाने का अधिकार दे दिया है। नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। और जहां तक तुम्हारी इस दवा-दारू और इलाज-फ़िलाज का सम्बन्ध है, इससे किसी का कुछ भला नहीं हो सकता... बूचड़ख़ाना तो मैंने योंही चिढ़ाने के लिए कहा था, लेकिन तुम्हारा यह चिल्लाना फिर भी बेकार है..."

"नहीं, तुम झूठ बोल रहे हो!" डाक्टर ने थिर भाव से कहा, "इसके लिए मैं तुम्हें सबक़ दूंगा... ऐ, इधर आओ!"

गलियारे में अब तक लोगों की एक भीड़ जमा हो गई थी... ग्रिगोरी ने आंखें सिकोड़ीं और दांत भींच लिए...

"डरे वह, जो झूठ बोले—मैंने ऐसा कुछ नहीं किया। और अगर तुम मुझे सबक देने पर तुले हो तो फिर मैं भी दो-चार बातें और कह देना चाहूंगा..."

"यह बात है! कहो, जो मन में आए!"

"मैं नगर में जाऊंगा और लोगों के अच्छी तरह कान भर दूंगा। कहूंगा—'ऐ मित्रो, क्या तुम्हें मालूम है कि वहां हैज़े का किस तरह इलाज किया जाता है?'"

"क्या-आ?" डाक्टर की आंखें फैल गईं।

"तब तो हम यहां कीड़ों की अच्छी सफ़ाई करेंगे, आतिशबाजी भी चलेगी..."

"यह तुम क्या कह रहे हो, तुम्हारा बेड़ा गर्क हो!" डाक्टर के चेहरे

पर खीज और झुंझलाहट का भाव अब इस आदमी के प्रति अचरज में बदल चला था। वह उसे एक मेहनती और समझदार कर्मी समझता था लेकिन अब–जाने किस औघड़ वजह से–वह ख़ुद अपने हाथों गले में फंदा डाल रहा था।

"तुम यह क्या बक रहे हो, बेवक़ूफ़?!"

"बेवक़ूफ़!"–यह शब्द ग्रिगोरी के रोम-रोम में ध्वनित हो उठा। वह जानता था कि यह मूर्खता ही है जो वह कर रहा है, लेकिन इससे वह और भी अधिक बुरा मान गया।

"मैं क्या कह रहा हूं? जो कह रहा हूं, वह मैं जानता हूं... मेरे लिए इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता..." अपनी आंखों को कौंधाते हुए उसने कहा, "मैं अब समझ सकता हूं कि मेरे जैसे लोगों के लिए कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता... और अपने भावों को छिपाकर रखना बेकार है... चलो, मात्र्योना, अपनी चीज़ें बटोर लो!"

"मैं नहीं जाऊंगी!" मात्र्योना ने दृढ़ता से कहा।

डाक्टर आंखें गोल किए उनकी ओर ताक और अपने माथे को खुजला रहा था। वह पूर्णतया हत्बुद्धि हो गया था।

"तुम... नशे में हो, या तुम्हारा दिमाग़ चल निकला है! क्या तुम्हें इस बात का भी कुछ ख़याल है कि यह तुम क्या कर रहे हो?"

ग्रिगोरी झुका नहीं, वह झुक भी नहीं सकता था।

"तुम्हारा क्या ख़याल है?" वह मुंह चिढ़ाते हुए बोला, "तुम लोग क्या करते हो? छूत को दूर करते हो, हा-हा-हा! रोगियों का इलाज करते हो और अच्छे-बिच्छे लोग जीवन की घुटन से मरते रहते हैं... मात्र्योना, मैं तुम्हारा तोबड़ा तोड़ दूंगा! चलो..."

"मैं तुम्हारे साथ नहीं जाऊंगी!"

उसका चेहरा पीला पड़ गया था, वह जबर्दस्ती अपने को शांत बनाये थी और उसकी आंखों में एक ठंडी दृढ़ता थी। ग्रिगोरी ने अपने इस वीरतापूर्ण धूम-धड़ाके के बावजूद एक ओर हटकर ख़ामोशी में सिर लटका लिया।

"यह क्या बवाल है!" डाक्टर ने कहा, "ख़ुद शैतान भी इसका कुछ सिर-पैर नहीं समझ सकता... जाओ, दफ़ा हो जाओ यहां से। जाओ और अपना भाग्य सराहो कि मैं तुम्हें यों ही छोड़ दे रहा हूं... मुझे तुम्हें

पुलिस के हवाले कर देना चाहिए था... ख़रदिमाग़! जाओ, निकल जाओ यहां से!"

ग्रिगोरी ने आंखें उठाकर डाक्टर की ओर देखा और फिर अपना सिर झुका लिया। अगर वे उसकी मरम्मत कर देते या पुलिस-थाने के लिए उसका बिस्तरा गोल कर देते, तो वह अधिक हल्का अनुभव करता।

"मैं तुमसे आख़िरी बार पूछ रहा हूं—मेरे साथ चल रही हो?" फटी हुई आवाज़ में ग्रिगोरी ने अपनी पत्नी से कहा।

"नहीं, मैं नहीं चल रही हूं," उसने जवाब दिया, इस तरह सिकुड़ते हुए, जैसे उसपर प्रहार होनेवाला हो।

ग्रिगोरी ने हाथ झटका।

"जहन्नुम में जाओ तुम सब के सब! मुझे क्या तुम्हारा अचार डालना है?"

"अरे, जंगली जानवर, तुम..." उसे सुध में लाने के लिए डाक्टर ने कहना शुरू किया।

"चुप रहो!" ग्रिगोरी चिल्लाया, "हां तो, न घर की न घाट की कुतिया, मैं जा रहा हूं। हो सकता है कि हम फिर न मिलें, या मिलें भी... जैसा भी मुझे ठीक जंचा! लेकिन अगर हम मिले, तो यह निश्चय समझ लो कि तुम्हारा बुरा हाल होगा!"

और वह दरवाज़े की ओर बढ़ गया।

"दुखान्त नाटक के अभिनेता, विदा!" ग्रिगोरी के पास से गुज़रने पर डाक्टर ने कुत्सित व्यंग्य से कहा।

ग्रिगोरी ठिठक गया और अपनी आंखें ऊपर उठाईं जो व्यथा से जल रही थीं।

"मुझे न छेड़ो," उसने शांत भाव से कहा, "मुझे फिर से कसने की कोशिश न करो। स्प्रिंग इस बार बिना किसी को चोट पहुंचाए छिटक गया। सो इतने पर ही बस करो!"

उसने फ़र्श पर से अपनी टोपी उठाई, उसे सिर पर रखा, कंधे झटके और पत्नी की ओर देखे बिना ही बाहर निकल गया।

डाक्टर व्यग्र भाव से उसकी ओर देख रहा था। उसका चेहरा एकदम सफ़ेद पड़ गया था।

"उसे यह हुआ क्या है?" ग्रिगोरी की ओर गर्दन से इशारा करते हुए डाक्टर ने पूछा।

"मुझे नहीं मालूम..."

"हुंह, अब कहां जाएगा?"

"नशे में डूबने," मात्र्योना ने बिना किसी हिचकिचाहट के कहा।

डाक्टर ने भौंहें चढ़ाईं और कमरे से बाहर चला गया।

मात्र्योना ने खिड़की में से बाहर देखा। एक आदमी का आकार धुंध को चीरता, बारिश और हवा के बीच, तेज़ डगों से नगर वाली सड़क पर बढ़ा जा रहा था—अकेला, बारिश से भीगे उन भूरे खेतों के बीच...

...मात्र्योना का चेहरा और भी पीला पड़ गया। वह उस कोने में गई, जहां देव-प्रतिमा रखी थी और उसके सामने घुटने टेककर बैठ गई। वह बार-बार अपना माथा नवा रही थी, प्रार्थना के शब्द एक आवेगमयी धारा के रूप में प्रकट हो रहे थे और वह उत्तेजना से कांपती हुई उंगलियों से बार-बार अपने कंठ और वक्ष का स्पर्श कर रही थी।

एक दिन 'क' नगर में मैं एक व्यावसायिक स्कूल देखने गया। पथ-प्रदर्शक मेरी जान-पहचान का आदमी था। उसने इस स्कूल की स्थापना में योग दिया था। जब वह मुझे अव्वल दर्जे के कक्षाओं में घुमा रहा था तो उसने कहा—

"जैसा कि तुम देख रहे हो, यह एक ऐसी संस्था है जिसपर हम गर्व कर सकते हैं... हमारे युवक छात्र यहां शान के साथ काम सीखते हैं, और तुम्हें यह जानकर आश्चर्य होगा कि कितने बढ़िया शिक्षकों का दल हमारे यहां मौजूद है। मिसाल के लिए जूता बनाने की शाप में हमने एक मोची को ही यह काम सिखाने का भार सौंपा है। वह एक स्त्री है—बहुत ही लुभावनी—लेकिन बिल्कुल बेदाग़ चरित्र। लेकिन यह सब मैं तुम्हें किसलिए बता रहा हूं? जैसा कि मैंने कहा, वह एक मामूली मोची है, लेकिन ओह, कितना जमकर काम करती है! बहुत ही बढ़िया प्रशिक्षिका है वह और अपने छात्रों को ख़ूब चाहती है। एकदम असाधारण! निरा हीरा है हीरा! और कुल बारह रूबल महीने तथा रहने के लिए स्कूल में एक कमरे पर... इस रक़म से वह दो अनाथों का भी पालन करती है। बहुत ही अजीब और दिलचस्प जीव है वह!"

मेरा मित्र इस मोची औरत की इस हद तक खुलकर प्रशंसा कर रहा था कि मैं उससे मिलने के लिए उत्सुक हो उठा।

इसका आसानी से प्रबन्ध हो गया और एक दिन मात्र्योना ओरलोवा ने मुझे अपने जीवन की दुखद कहानी सुनाई। पति को छोड़ने के बाद कुछ दिनों तक वह उसकी नाक में दम किए रहा। नशे में धुत्त ओरलोव उससे मिलने आता, लोगों को तमाशे दिखाता, छिपकर उसके बाहर निकलने का इन्तजार करता और उसे बेरहमी से पीटता। यह सब उसने सहा।

जब बारिक बन्द हो गई तो डाक्टर ने उसे इस स्कूल में रखवाने और उसे उसके पति से बचाने में मदद की। यह हो जाने पर मात्र्योना ने शांतिपूर्ण श्रम के जीवन में प्रवेश किया। उसको जान-पहचान की नर्सों ने उसे लिखना-पढ़ना सिखाया, एक अनाथालय से दो बच्चों को—एक लड़का और एक लड़की को—उसने गोद लिया और जी-जान से अपने काम में जुट गई। वह अपने इस भाग्य से सन्तुष्ट थी, लेकिन अतीत की याद कर आतंकित और दुखी हो जाती थी। अपने छात्रों पर जान देती थी और काम का महत्त्व वह व्यापक दृष्टि से आंकती थी, बहुत ही सजग और सचेत रहकर काम करती थी और स्कूल के अधिकारी उसकी इज्जत करते थे। लेकिन सूखी खांसी उसकी जान के पीछे पड़ गई थी, उसके गालों के गढ़ों में एक घाती चमक दिखाई देती थी और उसकी भूरी आंखों में उदासी की छाया मंडराती रहती थी।

ग्रिगोरी से भी मैंने जान-पहचान कर ली। नगर की गंदी बस्तियों में वह मुझे मिला और दो-तीन बार की मुलाक़ात में ही हम दोस्त बन गये। उसने भी उसी कहानी को दोहराया, जो उसकी पत्नी से मैं सुन चुका था, और फिर कुछ सोचकर बोला—

"सो यह है सारी कहानी, मक्सिम साव्वातेयेविच—कुछ समय के लिए मैं ऊपर उठा और फिर नीचे चला गया। इस प्रकार जिस बड़े काम को करने का मैं सपना देखा करता था, वह कभी नहीं कर सका। बड़ा काम करने की भूख अब भी मुझमें मौजूद है... धरती को पीसकर चूर-चूर कर देना या चोरों का सरदार बनकर तहलका मचाना, या अन्य कोई ऐसा काम करना, जो मुझे अन्य सब से ऊंचा उठा दे, इतना ऊंचा कि उनके मुंह पर थूकते हुए मैं यह कह सकूं—'ओह, धरती पर रेंगनेवाले कीड़ो, तुम किसलिए जी रहे हो? किस ढब का यह जीवन है तुम्हारा? ढोंगी,

धोखेबाज हो तुम!' और तब उस ऊंचाई से पत्थर की भांति लुढ़कता मैं नीचे आ गिरता, और—बैंग!—सारा खेल ख़त्म! ओह, कितना बोझिल और दमघोट है यह जीवन! जब मात्र्योना से मेरा पिंड छूटा तो मैंने अपने आपसे कहा—'अब रास्ता साफ़ है, ग्रिगोरी! अपना लंगर उठाओ और नाव को तेज़ी से बढ़ने दो!' लेकिन ऐसा हुआ कहां? पानी छिछला था, नाव एक चट्टान से टकराई और तब से ख़ुश्की में ही मैं हाथ-पांव पटक रहा हूं। लेकिन मैं देर तक सूखे में नहीं रहूंगा, लोगों को दिखा दूंगा कि मैं अब भी क्या कर सकता हूं! किस तरह? शैतान के सिवा यह कोई नहीं जानता... मेरी पत्नी? जहन्नुम में जाए वह! मेरे जैसा आदमी पत्नी को लेकर क्या चाटेगा? मैं, जो एकसाथ ही चारों दिशाओं की ओर लपकता हूं... मां के पेट से ही ऐसी बेचैन आत्मा लेकर मैं पैदा हुआ... मेरे भाग्य में आवारा बनना ही बदा है। मैंने पैदल और सवारी पर दुनिया भर की जगहों की धूल छानी है... चैन कहीं नहीं... पीना? बेशक, मैं पीता हूं। दिल की आग बुझाने के लिए वोद्‌का एक अच्छी चीज़ है—और मेरे भीतर पूरा बड़वानल धधक रहा है... मैं हर चीज़ से ऊब गया हूं—नगरों से, गांवों से, हर कांट-छांट और बनावटी लोगों से... निरा जहन्नुम! क्या इससे अच्छी कोई अन्य चीज़ नहीं सोची जा सकती थी? हर आदमी अपने पड़ोसी की गर्दन दबोचने की ताक में बैठा है। जी करता है कि इन सब की बत्ती गुल कर दूं! ओह, यह जीवन! शैतान के दिमाग़ की उपज है!"

शराबख़ाने का भारी दरवाज़ा, जिसमें ग्रिगोरी और मैं बैठे थे, रह-रहकर खुलता था और हर बार चीं-चीं की पुकारती-सी आवाज़ करता था। और शराबख़ाने का भीतरी भाग एक भीमाकार जबड़े की भांति मालूम होता था जो धीरे-धीरे, लेकिन अनिवार्य रूप से, एक के बाद एक बेचारे रूसी लोगों को, बेचैन तथा अन्य को निगल रहा था...

तूफ़ान का अग्रदूत

सागर की श्वेत-रुपहली सतह के ऊपर झंझा जुटा रही है काले मेघों को, बादलों को। सागर और बादलों के बीच उड़ रहा है तूफ़ान का अग्रदूत, पितरेल पक्षी, काली बिजली की तरह।

पंखों से कभी वह छूता है लहरों को, तो तीर की तरह झपटता है कभी बादलों की ओर, वह चीखता है, और—साहस भरी चीख में पक्षी की, बादल सुनते हैं ख़ुशी की गूंज।

इस चीख़ में—तूफ़ान का हार्दिक आह्वान है। इस चीख़ में अनुभव करते हैं बादल क्रोध की भभक, आवेश की लपट और विजय का विश्वास।

मुर्गाबियां चिचियाती हैं तूफ़ान के पहले—चिचियाती हैं, सागर के ऊपर चक्कर काटती हैं और तूफ़ान के भय से मुक्ति पाने की ख़ातिर सागर के तल में छिपाने को तैयार हैं वे। और लून भी चिचियाते हैं—जीवन-युद्ध के आनन्द से अनजान हैं ये लून पक्षी, प्रहारों के धमाकों से भयभीत होते हैं वे।

वृद्ध पेंगुइन भी अपने चर्बीचढ़े शरीरों को डर से छिपाते हैं चट्टानों के बीच... बस, एक गर्वीला पितरेल ही स्वच्छन्द और साहस से उड़ रहा है फेन से श्वेत हुए सागर के ऊपर।

सागर के ऊपर अधिकाधिक काले और अधिकाधिक नीचे होते जा रहे हैं बादल, लहरें गाती हैं और तूफ़ान के स्वागत को ऊंची उछलती हैं, लपकती हैं।

घन-गर्जन हो रहा है।

लहरें झंझा से जूझती हैं, क्रोध से झाग उगलती हुई कराहती हैं। वह लीजिये, झंझा ने ढेर-सी लहरों को कसकर जकड़ लिया अपनी बांहों में

और क्रोध से पगलाते हुए ज़ोर से पटक दिया चट्टानों पर, उन विराट, पर मरकती आकारों को खण्ड-खण्ड कर बिखेर दिया जल-कणों में, फुहारों में।

तूफ़ान का अग्रदूत पितरेल पक्षी, ललकार की चीख़ के साथ उड़ रहा है, काली बिजली की तरह, तीर की तरह बादलों को चीरता हुआ, लहरों के फेन को पंखों से छूता हुआ।

देखो तो, वह उड़ रहा है दानव की तरह—तूफ़ान के गर्वीले, काले दानव की तरह—और वह हंसता है, और वह सिसकता है... वह बादलों पर हंसता है, वह ख़ुशी से सिसकता है!

यह समझदार दानव—बादलों के क्रोधपूर्ण गर्जन में—बहुत पहले से ही थकान अनुभव कर रहा है। उसे विश्वास है कि बादल सूर्य को नहीं छिपा सकेंगे—नहीं, नहीं छिपा सकेंगे!

हवा चिंघाड़ रही है... बादल ज़ोर-शोर से गरज रहे हैं...

तलहीन सागर के ऊपर नीली लपटों से झलकते हैं बादल। बिजली के तीरों को लोकता है सागर और बुझा देता है उन्हें अपनी गहराई में। लुप्त होती हुई ये बिजलियां अग्नि-सर्पों सी झलक दिखाती हैं सागर में।

तूफ़ान! बहुत जल्द आयेगा तूफ़ान!

गुस्से से उफनते-फुंकारते सागर के ऊपर, बिजली की लपटों के बीच, बड़े साहस से उड़ रहा है तूफ़ान का अग्रदूत, गर्वीला पितरेल पक्षी; और वह जीत का पैग़म्बर चीख़कर कह रहा है—

"आये, ख़ूब ज़ोर-शोर से आये तूफ़ान!

१९०१

इटली की कथाएं

जीवन जिन्हें स्वयं जन्म देता है,
उनसे बेहतर कथाएं नहीं होतीं

एंडर्सन

२

जिनोआ में रेलवे स्टेशन के सामनेवाले छोटे-से मैदान में लोगों की भारी भीड़ लगी हुई थी। इनमें से अधिकांश तो मजदूर थे, किन्तु ढंग की पोशाकें पहने और खाते-पीते लोग भी वहां काफ़ी संख्या में थे। भीड़ के सामने नगर-पालिका का भारी और बढ़िया कढ़ाईवाला रेशमी ध्वज लहरा रहा था और उसके नीचे नगर-पालिका के सदस्य खड़े थे। इस ध्वज के पास विभिन्न मजदूर संगठनों के रंग-बिरंगे झंडे लहरा रहे थे। झंडों के सुनहरे झब्बे, झालरें, डोरियां और ध्वज-दंडों के सिरे चमक-दमक रहे थे, रेशम की सरसराहट और धीमे स्वर में गाये जानेवाले सहगान की भांति भीड़ की समारोही मनःस्थिति की भनक सुनाई दे रही थी।

ऊपर की ओर ऊंचे चबूतरे पर उस स्वप्नदर्शी कोलंबस की मूर्त्ति खड़ी थी जिसे अपने विश्वासों के कारण अपार कष्ट सहने पड़े थे और जो अपने विश्वास ही के कारण विजयी हुआ था। आज भी वह जन-समूह की ओर देख रहा था और उसके संगमरमर के होंठ यह कहते हुए से दिखाई दे रहे थे –

"जो विश्वास करते हैं, वही विजयी होते हैं।"

वादकों ने मूर्त्ति के चरणों के पास, चबूतरे के इर्दगिर्द अपने वाद्य रख दिये थे और धूप में पीतल की तुरहियां स्वर्ण की तरह जगमगा रही थीं।

स्टेशन की अर्धगोलाकार इमारत संगमरमर के अपने भारी बाजुओं को इस तरह फैलाये हुए थी मानो लोगों का आलिंगन करना चाह रही हो। बंदरगाह से जहाजों की भारी सांसें, पानी को मथनेवाले पंखे की दबी-सी आवाज, जंजीरों की झनझनाहट, सीटियां और चीख़-चिल्लाहट सुनाई दे रही थी। मैदान बिल्कुल शांत था और तेज धूप में तप रहा था। मकानों के छज्जों तथा खिड़कियों में स्त्रियां अपने हाथों में फूल लिये खड़ी थीं और उनके पास खड़े हुए बच्चे भी रंग-बिरंगी शानदार पोशाकों के कारण फूलों जैसे नजर आ रहे थे।

सीटी बजाता हुआ इंजन स्टेशन के पास पहुंच ही रहा था कि भीड़ में हलचल मची, कई गुड़े-मुड़े हैट काले पंछियों की तरह हवा में उड़े, वादकों ने अपनी तुरहियां उठाईं, कुछ गंभीर, प्रौढ़ व्यक्ति जरा फुर्ती से आगे बढ़े और भीड़ की तरफ़ मुंह करके अपने हाथों को दायें-बायें हिलाते हुए कुछ कहने लगे।

धीरे-धीरे भीड़ पीछे हट गई और सड़क के बीच एक चौड़ा रास्ता बन गया।

"ये लोग किसके स्वागत को आये हैं?"

"पारमा के बच्चों के!"

पारमा में हड़ताल जारी थी। मालिक लोग झुकने को तैयार न थे और मजदूर ऐसे घोर संकट में थे कि उन्होंने अपने बच्चों को भुखमरी से बचाने के लिये जिनोआ भेजने का निर्णय किया था।

स्टेशन की इमारत के खंभों के पीछे से बच्चों का एक सुव्यवस्थित जुलूस निकला। ये बच्चे अधनंगे थे और अपने फटे-पुराने चिथड़ों में वे कुछ विचित्र, झबरे, छोटे जानवरों-से लग रहे थे। धूल-सने और थके-मांदे ये नन्हे-मुन्ने हाथ में हाथ डाले पांच पांच की क़तार में चल रहे थे। उनके चेहरे गंभीर थे, लेकिन आंखें चमक रही थीं और वादकों ने जब गारीबाल्डी का स्तुति-गीत बजाया तब उन दुबले-पतले और क्षुधा-पीड़ित छोटे-छोटे चेहरों पर आनंदसूचक मुस्कराहट दौड़ी।

जन-समूह ने गगनभेदी नारों के साथ इन भावी नर-नारियों का स्वागत किया। उनके सामने झंडियां झुक गईं और आंखें चौंधियाती तथा कान बहरे करती पीतल की तुरहियां जोरों से बज उठीं। इस भव्य स्वागत से चकित होकर वे एक क्षण के लिये कुछ पीछे हटे और फिर एकदम संभलकर सीधे

खड़े हो गये जिससे वे कुछ लंबे, पिण्डबद्ध से दिखाई दिये और शत कंठों से, मगर एक ही छाती से निकली आवाज़ में चिल्लाये –

«Viva Italia!»*

"नव पारमा ज़िन्दाबाद!" बच्चों की दिशा में जन-समूह ने जोरदार नारा लगाया।

«Evviva Garibaldi!»** भूरे पच्चड़ की शक्ल में भीड़ में घुसते हुए बच्चे चिल्लाये और जन-समूह में विलीन हो गये।

होटलों की खिड़कियों तथा मकानों की छतों से सफ़ेद पंछियों की तरह अनगिनत रूमाल फड़फड़ा रहे थे और नीचे की भीड़ पर फूलों तथा उत्साहपूर्ण हर्ष-ध्वनियों की वर्षा हो रही थी।

सब कुछ उत्सव के रंग में रंग गया, सब कुछ सजीव हो उठा और भूरे संगमरमर तक में जहां-तहां चटकता झलक उठी।

पताकाएं लहरा रही थीं, टोपियां उछाली जा रही थीं और फूलों की बौछार हो रही थी, बच्चों के नन्हे-नन्हे सिर लोगों के सिरों के ऊपर दिखाई देने लगे; फूलों को पकड़ते और अभिवादन करते नन्हे-नन्हे गन्दे-मन्दे हाथ दिखाई देते थे और हवा में लगातार ऊंचे नारे गूंज रहे थे –

«Viva il Socialismo!»***

«Evviva Italia!»

लगभग सभी बच्चों को लोगों ने उठा लिया। वे बड़ों के कंधों पर सवार थे, कठोर मुखाकृति और मूंछोंवाले आदमियों के चौड़े सीनों से चिपके हुए थे। शोर तथा हंसी के कोलाहल में संगीत तो दब-सा गया था।

बाक़ी बाल-अतिथियों को लेने के लिये स्त्रियां भीड़ में घुस आईं और उनके बीच इस तरह की ऊंची बातचीत सुनाई दी –

"तुम दो ले रही हो न, अनीता?"

"हां, और तुम भी?"

"अपंग मार्गरेट के लिये भी एक बच्चा..."

सब और आनंदपूर्ण उत्तेजना छाई हुई थी, सब ओर सस्मित चेहरे

---

* इटली की जय! – सं०

** गारीबाल्डी की जय! – सं०

*** समाजवाद की जय! – सं०

ग्रौर सदय नम नयन नजर ग्रा रहे थे। कहीं-कहीं तो हड़तालियों के बच्चे रोटी भी चबाने लगे थे।

"हमारे जमाने में ऐसी बात किसी ने भी नहीं सोची थी!" एक वृद्ध ने कहा। उसकी नाक चोंच जैसी थी ग्रौर वह दांतों के बीच काला चुरुट दबाये था।

"ग्रौर कितनी सरल बात है..."

"हां! सरल भी ग्रौर समझदारी की भी।"

वृद्ध ने मुंह से चुरुट हटाया, उसके सिरे को देखा ग्रौर राख झाड़ते हुए ग्राह भरी। फिर दो नन्हे पारमा-बालकों (जो स्पष्टतया भाई थे) को देखकर उसने भयंकर मुखाकृति बनाई,—बच्चे उसे गंभीरतापूर्वक देख रहे थे—उसने ग्रपने हैट को ग्रांखों पर खींचा, हाथ फैलाये ग्रौर जैसे ही वे दोनों भाई नाक-भौंह सिकोड़कर एकसाथ पीछे हटे वह एकदम उकड़ू बैठा ग्रौर मुर्गे की तरह कुकड़ू-कूं की बांग दी। बच्चे खिलखिलाकर हंस पड़े ग्रौर ग्रपने नंगे पैरों को सड़क के पत्थरों पर पटकते हुए उछलने लगे। वृद्ध उठा, उसने ग्रपना हैट ठीक किया ग्रौर यह मानते हुए कि उसने ग्रपना फ़र्ज ग्रदा कर दिया है, लड़खड़ाता हुग्रा एक ग्रोर को चल दिया।

एक कुबड़ी, पके बालोंवाली स्त्री, जिसका चेहरा डाइन जैसा था ग्रौर जिसकी हड़ीली ठोड़ी पर सफ़ेद, तार जैसे बाल दिखाई दे रहे थे, कोलंबस की मूर्त्ति के पास खड़ी-खड़ी रो रही थी ग्रौर ग्रपनी बदरंग शाल के सिरे से ग्रांसू-भरी लाल-लाल ग्रांखें पोंछ रही थी। यह सांवली ग्रौर कुरूप स्त्री उस उत्तेजित भीड़ में विलक्षण एकाकी-सी नजर ग्रा रही थी...

काले केशवाली एक जिनोवाई युवती एक सातेक वर्षीय ग्रादमी का हाथ थामे नाचती हुई वहां ग्राई। यह ग्रादमी लकड़ी के जूते पहने था ग्रौर उसके सिर पर लगभग कंधों को छूता हुग्रा बड़ा-सा भूरा हैट था। हैट को ग्रांखों पर से हटाने के लिये वह ग्रपने नन्हे-से सिर को पीछे की ग्रोर झटकता था, लेकिन हैट उसके मुंह पर खिसक ही ग्राता था। ग्राखिर युवती ने छोटे-से सिर से हैट को झटके के साथ उतारकर हंसते-गाते हवा में घुमाया। बच्चे के चेहरे पर मुस्कुराहट की लहर दौड़ी। उसने ऊपर देखा ग्रौर हैट को पकड़ने के लिये उछला। वे दोनों ऐसे ही ग्रांखों से ग्रोझल हो गये।

बड़ी-बड़ी उघाड़ी भुजाओंवाला एक लंबा-तड़ंगा आदमी, जो चमड़े का एप्रन पहने था, एक छ:वर्षीया बालिका को अपने कंधे पर बैठाये जा रहा था। यह बच्ची नन्ही, भूरी चुहिया-सी लग रही थी। चमकीले लाल बालोंवाले एक बच्चे का हाथ पकड़े हुए, पास से जानेवाली एक स्त्री से उस आदमी ने कहा – "समझती हो न, यदि ऐसी बातों ने जोर पकड़ा तो... हमें हराना आसान काम नहीं होगा, सच है न?"

और विजय की जोरदार हंसी के साथ उसने अपने हल्के-से बोझ को नीली हवा में उछाला और चिल्ला उठा –

"Evviva Parma!"*

बच्चों को उठाये या उनके हाथ पकड़े हुए लोग धीरे-धीरे वहां से चल दिये और उस मैदान में रह गये कुचले हुए फूल, टॉफ़ियों के बेठन, आनंदित कुलियों का एक समूह और सबसे ऊपर उस व्यक्ति की महिमामयी मूर्त्ति जिसने नयी दुनिया खोजी थी।

और नवजीवन की दिशा में अग्रसर लोगों का ख़ुशीभरा शोर-गुल सड़कों पर इस तरह गूंज रहा था मानो बड़ी-बड़ी तुरहियां बज रही हों।

---

* पारमा की जय! – सं०

४

शांत नीला सरोवर, अनंत हिमाच्छादित मुकुटधारी ऊंचे पर्वतों से परिवेष्टित है। सरोवर के किनारे तक गहरे रंग के लहरदार बगीचे फैले हुए हैं जो नयनाभिराम नक्क़ाशी से नजर आते हैं। सफ़ेद घर, जो शक्कर के बने हुए से दिखाई देते हैं, जलाशय में टकटकी लगाये झांक रहे हैं और सभी ओर शिशु की मीठी नींद की सी शांति फैली हुई है।

प्रभात का समय। पहाड़ियों से फूलों की प्यारी-प्यारी सुगंध बही आ रही है। सूरज अभी अभी निकला है; पेड़ों की पत्तियों तथा तृणों की नोकों पर ओसकण अभी भी चमक रहे हैं। शांत घाटी में से गुज़रनेवाला रास्ता भूरे रंग का फ़ीता सा लग रहा है और पत्थर से मढ़ा होने पर भी मख़मल जैसा लगता है और छूने को मन होता है।

कंकड़-पत्थरों के ढेर के पास एक मजदूर बैठा हुआ है—गोबरैले जैसा काला। उसके चेहरे पर साहस तथा दयालुता झलक रही है और सीने पर एक तमग़ा लटक रहा है।

कांसे के से हाथ घुटनों पर रखे हुए वह एक पथिक की ओर ताक रहा है जो शाहबलूत के नीचे खड़ा है।

"सिंपलन सुरंग पर किये हुए काम के लिए मिला है मुझे यह, सिन्योर," वह कहता है।

गर्दन झुकाकर वह सीने पर लटक रहे धातु के सुन्दर टुकड़े को देखता है और उसके चेहरे पर कोमल मुस्कराहट आ जाती है।

"हां, जब तक हम काम में दिल नहीं लगाते और उसे प्यार करना नहीं सीखते तब तक हर काम कठिन लगता है, लेकिन जभी उससे दिली प्यार होता है, वह उत्साहित करता है और कठिन नहीं रहता। लेकिन, हां, वह काम आसान नहीं था!"

सूरज की ओर देखकर मुस्कराते हुए उसने अपना सिर कुछ हिलाया, फिर यकायक रंग में आया, हाथ झटका और उसकी काली आंखें चमक उठीं।

"कभी कभी तो दिल डरा भी। धरती भी तो जरूर कुछ महसूस करती होगी, ठीक है न? पहाड़ की बग़ल को चीरकर जब हमने गहरा विवर बनाया तब वहां की धरती बड़े क्रोध से हमारे सामने आई। उसकी सांस गरम थी। हमारे दिल की धड़कन रुक सी गयी, सिर भारी हुए और हड्डियों में दर्द होने लगा—बहुतों ने ऐसा ही अनुभव किया! फिर धरती ने हम पर पत्थरों की बौछार की और गरम पानी उंडेला। बहुत भयानक था यह तो! कभी-कभी रोशनी में पानी लाल-लाल नज़र आता और तब मेरे पिताजी कहते—'हमने धरती को घायल किया है, देख लेना, वह हम सब को अपने ख़ून में डूबो देगी और उससे झुलसा देगी।' हां, यह थी तो कोरी कल्पना; लेकिन धरती के गर्भ में, जहां दमघोंटू अंधकार हो, पानी रोता हुआ सा रिस रहा हो और पत्थर पर लोहे की रगड़ की आवाज़ आ रही हो, कोई भी बात संभव लगती है। प्यारे सिन्योर, वहां सभी कुछ बड़ा अकल्पनीय था। हम जिसकी आंतों को छेद रहे थे, वह तो था गगनस्पर्शी पहाड़ और उसकी तुलना में हम थे छोटे-छोटे इन्सान... अगर आपने उसे देखा होता, तो मेरी बात समझ लेते! यह तो देखने की चीज़ थी कि हम अदने से आदमियों ने, जो सूर्योदय के समय धरती के गर्भ में जाते थे और जिन्हें वह दर्दभरी नज़र से विलीन होते देखता था, उस पहाड़ की बग़ल में कैसा चौड़ा छेद बनाया था! वे मशीनें, पहाड़ की वह खिन्न-सूरत, गहराई की वह गंभीर गड़गड़ाहट और पागल के ठहाके जैसी विस्फोटों की वे प्रतिध्वनियां, देखते-सुनते ही बनती थीं!"

उसने अपने हाथों को निहारा, नीले कुरते पर लटक रहे तमग़े को ठीक किया और एक अस्पष्ट आह भरी।

"आदमी काम करना जानता है!" उसने गर्व से बात आगे चलायी। "ओ सिन्योर, अदना आदमी जब काम करना चाहता है, तो अजेय शक्ति बन जाता है! और विश्वास कीजिये कि यही अदना आदमी तो जो चाहता है, वह सब कुछ कर डालता है। मेरे पिताजी पहले ऐसा नहीं मानते थे।

"वे कहा करते थे कि 'पहाड़ को चीरकर एक देश से दूसरे देश में जाना भगवान की व्यवस्था को तोड़ना है, जिसने पहाड़ों की दीवारों से भूमि का बंटवारा किया है। देख लेना, मदोन्ना हमसे नाराज़ होगी!'

पिताजी की यह बात सही नहीं थी क्योंकि मदोन्ना उनसे कभी नाराज़ नहीं होती जो उसको प्यार करते हैं। बाद में पिताजी भी लगभग वही सोचने लगे जो मैं सोचता था, क्योंकि उन्होंने अपने को पहाड़ से भी बड़ा और ज्यादा ताक़तवर महसूस किया। लेकिन ऐसे मौक़े भी आते थे जब किसी त्योहार के दिन वे मेज़ पर शराब की बोतल अपने सामने रखे हुए मुझे तथा दूसरे लोगों से कहते—

"'भगवान के बच्चो,'—यह पिताजी का प्रिय संबोधन था, क्योंकि वे एक दयालु तथा धर्मपरायण व्यक्ति थे। 'भगवान के बच्चो, इस प्रकार धरती से जूझना नहीं चाहिये। उसपर किये गये आघातों का वह जरूर बदला लेगी और ख़ुद अजेय ही रहेगी! देख लेना पर्वत के हृदय तक विवर बना लेने पर जैसे ही हम उसे स्पर्श करेंगे, वह हमें भस्म कर डालेगा, हम पर आग बरसायेगा, क्योंकि धरती के हृदय में आग है—इसे तो सभी जानते हैं! धरती को जोतना दूसरी बात है, प्रकृति की प्रसूति-वेदना में सहायक होना पुरुष का कर्त्तव्य है, लेकिन हम तो उसके मुख, उसके रूप को विकृत करते हैं। देखते हो न कि हम पहाड़ को जैसे अधिकाधिक खोदते जाते हैं, हवा ज्यादा गरम होती जाती है और सांस लेना अधिकाधिक दूभर होता जाता है...'"

दोनों हाथों की उंगलियों से मूंछों पर ताव देते हुए वह धीरे से हंसा।

"ऐसा माननेवाले वे अकेले ही नहीं थे, हां, और यह सच भी था कि जैसे जैसे हम आगे बढ़ रहे थे, हवा गरम होती जा रही थी, अधिकाधिक लोग बीमार पड़ते और मौत के शिकार होते जाते थे। उष्ण जल-स्रोत अधिकाधिक जोरदार होते जा रहे थे, मिट्टी के टुकड़े जोरों से फट पड़ते और लुगानो से आये हमारे दो मजदूर साथी पागल हो गये। रात के समय बारिकों में कई लोग चित्त-भ्रम में बड़बड़ा उठते, चीख़ते और भयभीत होकर अपनी खाटों पर से कूद पड़ते...

"'मैंने ग़लत कहा था क्या?' सहमी-सहमी आंखों से और अक्सर तथा ज्यादा जोर से खांसते हुए पिताजी कहते... 'मैंने ग़लत कहा था क्या?' वे दोहराते। 'यह धरती अपराजेय है!'

"और आख़िर उन्होंने जो चारपाई पकड़ी, तो फिर कभी उठे नहीं। बड़े मजबूत थे मेरे वृद्ध पिता और उन्होंने तीन सप्ताह से भी अधिक समय तक, हाय-वाय किये बिना ख़ूब डटकर मौत का मुक़ाबला किया—उस आदमी की तरह जो अपना मूल्य जानता है।

"'सुनो पाम्रोलो, मेरा काम समाप्त हुआ,' एक रात पिताजी ने मुझसे कहा, 'अपना ध्यान रखो और घर चले जाओ। मदोन्ना तुम्हें सुखी रखे!' इसके बाद वे देर तक मौन रहे। आंखें बंद किये और मुश्किल से सांस लेते हुए।"

वह आदमी उठ खड़ा हुआ, उसने पहाड़ की ओर देखा और ऐसे जोर से अंगड़ाई ली कि उसकी नसें चटचटा उठीं।

"तब पिताजी ने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया और मुझे अपने पास खींचकर कहा—इसे बिल्कुल सच मानिये, सिन्योर!—'जानते हो बेटा पाम्रोलो? फिर भी मुझे लगता है कि यह ऐसा होकर ही रहेगा: हम और दूसरी ओर से खुदाई करनेवाले लोग पर्वत के बीच एक दूसरे से मिल जायेंगे, तुम विश्वास करते हो न?' मैं विश्वास करता था। 'ठीक है, मेरे बेटे! मनुष्य को अपने कार्य में सदैव विश्वास रखना चाहिए, अपनी कामयाबी का यक़ीन होना चाहिए और उस परमेश्वर के प्रति श्रद्धा होनी चाहिए जो मदोन्ना की कृपा से सत्कार्यों का सहायक होता है। मेरे बेटे, मैं तुमसे बिनती करता हूं कि यदि ऐसा ही हो जाये, पहाड़ के बीच लोग मिल जायें, तो मेरी क़ब्र पर आकर कह देना: पिताजी वह हो गया! ताकि मैं जान जाऊं!'

"यह अच्छी बात थी, प्यारे सिन्योर, और मैंने पिताजी को ऐसा करने का वचन दिया। पांच दिन बाद पिताजी का देहांत हुआ। अपनी मृत्यु से दो दिन पहले उन्होंने मुझसे तथा हमारे साथियों से कहा कि उन्हें सुरंग के अंदर, उसी जगह पर दफ़नाया जाये, जहां उन्होंने काम किया था। उन्होंने हमसे ऐसा करने की बहुत प्रार्थना की, लेकिन मुझे लगा कि वे चित्त-भ्रम में यह कह रहे हैं...

"हम और दूसरी ओर से हमारी ओर बढ़नेवाले लोग मेरे पिताजी के देहांत के तेरह सप्ताह बाद पहाड़ के बीच एक दूसरे से मिले। ओह! सिन्योर, उस दिन तो हमारी ख़ुशी का पारावार ही नहीं था! ओह, जब हमने अंधकारपूर्ण भूगर्भ में दूसरी ओर से हमारी ओर आनेवाले लोगों के काम की आवाज सुनी, जरा सोचिये सिन्योर, धरती के ऐसे भारी बोझ के नीचे, जो एक ही चोट में हम सब अदने से आदमियों का काम तमाम कर देती, कितनी ख़ुशी हुई होगी हमें!

"कई दिन तक हम यह आवाज सुनते रहे। धीमी सी आवाजें दिन-ब-दिन जोरदार तथा ज्यादा साफ़ होती गयीं और हम पर विजेताओं

की सी मस्ती छा गई। हम राक्षसों की तरह, भूत-पिशाचों की तरह काम करते थे और हमें न तो जरा सी भी थकावट और किसी के हुक्म की जरूरत ही महसूस होती थी। कैसा मजा आता था, यक़ीन कीजिये, सुहावने दिन पर नाच के समान! और हम सब, बच्चों की तरह सदय तथा सरल-हृदय हो गये थे। काश! आप जान सकते कि महीनों से जहां हम छछूंदर की तरह अथक परिश्रम से विवर बना रहे थे वहां, अंधकारमय भूगर्भ में लोगों से मिलने की इच्छा कितनी बलवती, कैसी उत्कट रही होगी!"

इस आदमी का चेहरा उत्तेजना से तमतमा उठा। वह समीप आया और अपनी गंभीर मानवतापूर्ण आंखों से अपने श्रोता की आंखों में एकटक देखते हुए उसने मृदु, मंजुल स्वर में बात आगे चलायी—

"और जब हमारे बीच की मिट्टी की आख़िरी परत गिर गई, सुरंग का अभी-अभी खुला हुआ हिस्सा मशाल की तेज लाल रोशनी से जगमगा उठा, आनंदाश्रु से भीगा हुआ एक काला चेहरा दिखाई दिया और फिर कई अन्य मशालें तथा चेहरे नजर आये और विजय तथा हर्ष-ध्वनियां गूंज उठीं—ओह, मेरे जीवन का वह सबसे सुखद दिन था! उस दिन को याद करके मैं महसूस करता हूं कि मेरा जीवन बेकार नहीं रहा! मैं आपसे कहता हूं सिन्योर, यह काम था, मेरा काम, पवित्र काम! और जब हम धरती के गर्भ से फिर ऊपर, सूर्य-प्रकाश में आये तो हम में से बहुतों ने भूमि पर गिरकर उसे चूमा, आंसू बहाये और यह सब परी-कथा की तरह अद्‌भुत था! हां, हमने विजित पर्वत को चूमा, धरती को चूमा और सिन्योर, उस दिन धरती मेरे अधिक निकट हो गयी, मैं उसे समझ पाया और एक नारी के रूप में उसे प्यार करने लगा।

"कहने की जरूरत नहीं कि मैं अपने पिताजी की क़ब्र पर पहुंचा। जी हां! मुझे मालूम है कि मृत कुछ नहीं सुनते, फिर भी मैं वहां गया, क्योंकि हमें उन लोगों की इच्छाओं का आदर करना चाहिए जिन्होंने हमारे लिए परिश्रम किया और हमारी तरह ही कष्ट उठाये। ठीक है न?

"हां, हां, मैं पिताजी की क़ब्र पर गया, अपने पैर से धरती को थपथपाकर वही शब्द दोहराये जो पिताजी मुझसे कह गये थे—

"पिताजी, वह हो गया!" मैंने कहा। "लोग जीत गये। वह हो गया, पिताजी!"

११

माताओं की गौरव-गाथा अनंत है।

कई सप्ताह हुए दुश्मन के फ़ौलादी दस्तों ने शहर को बुरी तरह घेर रखा था; रात को अलाव जलाये जाते थे और उसकी ज्वालाएं घने अंधेरे को चीरकर शहर की दीवारों की ओर हज़ारों रक्तवर्णी आंखों की तरह झांकती थीं। ये ज्वालाएं द्वेषपूर्ण ख़ुशी से दहकतीं और घात-सी लगाये हुए उनकी चमक उस घिरे हुए शहर में विषादपूर्ण विचार पैदा करतीं।

नागरिकों ने दीवारों पर से देखा कि शत्रु-सेना का फंदा अधिकाधिक कसता जा रहा है, आग के इर्दगिर्द काली परछाइयों की भी उन्हें झलक मिली। उन्होंने सुना पुष्ट घोड़ों का हिनहिनाना, हथियारों का खनखनाना, ज़ोरदार ठहाके और विजय को सुनिश्चित माननेवाले सिपाहियों का गाना-बजाना। और हां, शत्रु के गीतों तथा हंसी के फ़व्वारों से अधिक कर्णकटु क्या हो सकता है?

शत्रु ने शहर की जलपूर्ति करनेवाले सभी झरनों-स्रोतों में लाशें फेंक दी थीं, दीवारों के आस-पासवाले अंगूर-बगीचों को जला दिया था, खेतों को रौंद डाला था और फलोद्यानों को तहस-नहस कर दिया था। शहर अब चारों ओर से खुला पड़ा था और लगभग हर दिन शत्रु-सेना की तोपें तथा बंदूकें उसपर गोलों तथा गोलियों की बौछार करती थीं।

लड़ाइयों से थके-हारे तथा अध-भूखे सिपाहियों की निराशा में डूबी हुई टुकड़ियां शहर की तंग सड़कों पर क़दम बढ़ा रही थीं; घरों की खिड़कियों से घायलों की कराहें, भ्रान्तचित्त लोगों की चीख़ें, स्त्रियों की प्रार्थनाएं तथा बच्चों की विलाप ध्वनियां सुनाई दे रही थीं। लोग आपस में कानाफूसी करते, बोलते बोलते यकायक रुक जाते और कान लगाकर सुनते कि कहीं शत्रु-सेना ने आक्रमण तो नहीं शुरू कर दिया था?

सबसे भयानक होतीं रातें। रात की नीरवता में कराहें तथा क्रन्दन-विलाप अधिक स्पष्ट सुनाये देते। तब दूरस्थ पहाड़ों के दर्रों से नीली-काली परछाइयां रेंग कर सामने आ जातीं और शत्रु के शिविर को छिपाती हुई शहर की अर्धनष्ट दीवारों की ओर बढ़ने लगतीं, और पर्वत-श्रेणी की काली शिरोरेखा के ऊपर चांद निकल आता जो तलवारों के आघातों से छिन्न-भिन्न बेकार ढाल की तरह दिखाई देता।

मदद से ना-उम्मीद, कड़ी मेहनत और भूख से बेहाल, दिन-प्रति-दिन निराश होते हुए लोग सहमी-सी नजर से चांद, पर्वत-शिखरों की तीक्ष्ण नोकों, दर्रों के काले-काले मुखों तथा कोलाहलपूर्ण शत्रु-शिविरों की ओर देखते। हर चीज उन्हें मृत्यु की याद दिलाती और उन्हें दिलासा देनेवाला एक भी सितारा जगमगाता दिखाई न देता।

लोग अपने घरों में बत्तियां जलाते हुए डरते, शहर की सड़कों को घना अंधेरा ढंके रहता और ऐसे में सिर से पांव तक काला लबादा ओढ़े एक नारी, नदी की गहराई में इधर-उधर जानेवाली मछली की तरह चुपचाप घूमती दिखाई देती।

लोग उसे देखकर एक दूसरे से पूछते—

"यही है वह?"

"हां!"

फिर वे फाटकों की ओट में छिप जाते या सिर झुकाये चुपचाप उस स्त्री के पास से भाग जाते। गश्ती सिपाहियों के मुखिया उसे कठोरता से चेतावनी देते—

"फिर तुम सड़क पर आ गईं, मोन्ना मरिआन्ना? यह समझ लीजिये, कोई आपकी हत्या भी कर सकता है और फिर कोई अपराधी को ढूंढ़ने की कोशिश भी न करेगा..."

वह सम्हलकर खड़ी रहती लेकिन गश्ती सिपाही वहां से चले जाते। उनमें उसपर हाथ उठाने की या तो हिम्मत नहीं थी या वे ऐसा करना घृणास्पद मानते थे। सशस्त्र लोग उसे मानो लाश मानते हुए उसके पास से निकल जाते, अंधेरे में वह फिर अकेली रह जाती, एकाकी ही किसी ओर को चल देती और एक के बाद दूसरी सड़क पर आती-जाती रहती। चुपचाप और स्याहपोश यह औरत जैसे कि शहर के दुर्भाग्य का साकार रूप प्रतीत होती और चारों ओर से आर्त्त-ध्वनियां—कराहें, चीखें, प्रार्थनाएं

ग्रौर विजय की सारी ग्राशा खोये हुए सिपाहियों की उदास बड़बड़ाहट – मानो उसका पीछा-सा करती रहतीं।

वह नागरिका ग्रौर मां थी, ग्रपने बेटे तथा मातृभूमि के बारे में सोचती रहती थी। शहर को नष्ट-भ्रष्ट करनेवाले सैनिकों का ग्रगुग्रा था उसका बेटा – प्रसन्न वदन, ग्रत्यधिक सुन्दर, किन्तु हृदयहीन। कुछ ही दिन पहले तक वह उसपर गर्व करती थी, उसे मातृभूमि के लिये एक मूल्यवान उपहार मानती ग्रौर यह समझती थी कि जिस शहर में वह ख़ुद पैदा हुई ग्रौर जहां उसने ग्रपने पुत्र को जन्म दिया तथा उसका लालन-पालन किया, उस शहर के लोगों की सहायता के लिए उसने ग्रपने पुत्र के रूप में एक कल्याणकारी शक्ति प्रदान की है। उसका हृदय सैंकड़ों ग्रदृश्य सूत्रों से उन प्राचीन पत्थरों के साथ बंधा हुग्रा था जिनसे उसके पुरखों ने उस शहर के घर बनाये थे, नगर-रक्षक दीवार बनायी थी; उस भूमि के साथ, जिसमें उसके सगे-संबंधियों की ग्रस्थियां थीं ग्रौर वह सम्बद्ध था लोक-कथाग्रों, गीतों तथा लोगों की ग्राशाग्रों से। लेकिन ग्रब यही हृदय ग्रपने सबसे प्यारे व्यक्ति को खो बैठा था ग्रौर इसलिये रो रहा था। वह तो मानो एक तराज़ू बना हुग्रा था जिसमें वह पुत्र-प्रेम तथा जन्म-भूमि के प्रेम को तोल रही थी ग्रौर यह तय नहीं कर पा रही थी कि दोनों में से कौनसा पलड़ा हल्का ग्रौर कौनसा भारी है?

ग्रौर इस तरह वह रातों को सड़कों पर घूमती रहती ग्रौर बहुत से लोग उसे न पहचानकर तथा उसकी काली ग्राकृति को मृत्यु की – जोकि उन सब के ग्रति निकट थी – प्रतिमा समझकर डर जाते ग्रौर पहचान लेने पर उस देशद्रोही की मां से चुपचाप दूर हट जाते।

लेकिन एक रात नगर-रक्षक दीवार के एक कोने में उसे एक ग्रन्य स्त्री दिखाई दी जो एक शव के पास घुटनों के बल ऐसे निश्चल बैठी थी कि धरती का एक ग्रंग ही लग रही थी। शोकग्रस्त मुख को तारों की ग्रोर उठाये हुए वह प्रार्थना कर रही थी। ऊपर, दीवार पर संतरी धीरे-धीरे बातचीत कर रहे थे ग्रौर पत्थर पर रगड़ खाने से उनके शस्त्रों की कर्कश ध्वनि ग्रा रही थी।

देशद्रोही की मां ने पूछा –

"पति?"

"नहीं।"

"भाई ?"

"बेटा। मेरा पति तेरह दिन पहले ही मारा गया और यह आज।"

मृतक की मां ने उठते हुए नम्रता से कहा –

"मदोन्ना सब देखती है और सब जानती है। मैं उसकी आभारी हूं।"

"किसलिये ?" पहली स्त्री ने पूछा। दूसरी ने उत्तर दिया –

"अब, जबकि मेरा बेटा अपने देश के लिये लड़ते हुए वीर-गति को प्राप्त हो चुका है, मैं कह सकती हूं कि मैं उसकी ओर से सशंकित रहती थी। उसका हृदय बड़ा चंचल था, वह मौज-मस्ती भरी ज़िंदगी का शौक़ीन था और मुझे डर था कि कहीं वह भी मरिआन्ना के बेटे की तरह, ईश्वर तथा मानव के उस शत्रु की तरह, हमारे दुश्मनों के अगुआ की तरह, अपने शहर के साथ विश्वासघात न कर दे। लानत है उस देशद्रोही तथा उसे जन्म देनेवाली कोख पर!"

मरिआन्ना ने अपना चेहरा ढंक लिया और वहां से चल दी। दूसरे दिन सवेरे वह नगर-रक्षकों के पास पहुंची और बोली –

"या तो इसलिये मुझे मार डालिये कि मेरा बेटा आपका शत्रु बन गया है, या फिर शहर का फाटक खोल दीजिये, ताकि मैं उसके पास चली जाऊं..."

उन्होंने जवाब दिया –

"तुम – इन्सान हो और तुम्हारे लिये मातृभूमि सर्वोपरि होनी चाहिये; तुम्हारा बेटा तुम्हारा भी उतना ही दुश्मन है जितना हम सब का।"

"मैं – मां हूं। मैं उसे प्यार करती हूं और जैसा वह बना है, उसके लिये अपने को ही दोषी मानती हूं।"

तब नगर-रक्षकों ने एक दूसरे से सलाह-मशविरा किया और कहा –

"बेटे के पाप के लिये हम तुम्हारी हत्या नहीं कर सकते। हम जानते हैं कि तुम उसे ऐसा भयंकर पाप करने की प्रेरणा नहीं दे सकती थीं और हम यह भी अनुभव करते हैं कि इस कारण तुम्हारे दिल पर कितनी भारी गुजर रही होगी। लेकिन शहर को तो शरीर-बंधक के रूप में भी तुम्हारी आवश्यकता नहीं है; तुम्हारे बेटे को तुम्हारी कोई फ़िक्र नहीं है, हमारे ख़्याल में तो वह शैतान तुम्हें भूल भी गया है और अगर तुम अपने को इसके लायक़ मानती हो, तो यह है तुम्हारे लिये सज़ा! हम मानते हैं कि यह सज़ा मृत्यु से भी अधिक भयंकर है!"

"हां," उसने कहा। "यह सचमुच अधिक भयंकर है।"

उन्होंने फाटक खोल दिया और उसे शहर से जाने दिया। दीवारों पर से लोगों ने उसे अपनी प्यारी भूमि पर, जो उसी के पुत्र द्वारा ख़ून से लथपथ की गयी थी, जाते देखा। वह धीरे-धीरे चल रही थी, बड़ी मुश्किल से इस भूमि से क़दम आगे बढ़ा पा रही थी। वह नगर-रक्षकों के शवों को झुककर प्रणाम कर रही थी और टूटे-फूटे हथियारों को नफ़रत के साथ ठुकरा रही थी—जीवन-रक्षक शस्त्रों को छोड़कर बाक़ी सारे शस्त्र माताओं के लिये घृणित होते हैं।

वह इस तरह चल रही थी मानो पानी से भरा प्याला अपने लबादे में छिपाकर लिये जा रही हो और उसे डर हो कि कहीं वह छलक न जाये। दूर जाते हुए उसकी आकृति जैसे-जैसे अधिकाधिक छोटी होती गयी वैसे-वैसे दीवारों से उसे देखनेवालों को ऐसा महसूस होने लगा कि उनकी निराशा तथा असहायता भी उस के साथ-साथ ही दूर होती जा रही है।

उन्होंने देखा कि वह आधी दूर जाकर रुकी, उसने टोपी उतारी और पीछे मुड़कर देर तक शहर को ताकती रही। उधर शत्रु-शिविर के लोगों ने उसे मैदान में अकेली खड़ी देखा और उसके जैसी ही काली काली आकृतियां सावधानी से तथा धीरे-धीरे उसके पास आयीं। उन्होंने पूछा कि वह कौन है तथा किधर जा रही है?

"तुम्हारा नेता मेरा बेटा है," उसने कहा और किसी भी सिपाही के मन में किसी तरह का शक पैदा नहीं हुआ। उसके साथ चलते-चलते वे उसके पुत्र की गौरव-गाथा गाने लगे और उसकी चतुरता तथा वीरता की प्रशंसा करने लगे। गर्व के साथ सिर ऊंचा करके वह इन बातों को सुनती रही और उसने तनिक भी आश्चर्य प्रकट नहीं किया—उसके पुत्र को ऐसा ही तो होना भी चाहिये था!

आख़िर वह उस व्यक्ति के सामने जा खड़ी हुई, जिसको उसके जन्म के नौ मास से पहले जानती थी, जो कभी भी उसके हृदय से अलग नहीं हो पाया था। रेशमी तथा मख़मली वस्त्र पहने वह उसके सामने खड़ा था और उसके शस्त्र रत्नजटित थे। सब कुछ वैसा ही था जैसा होना चाहिए था। मां ने बहुत बार सपनों में उसे इसी रूप में देखा था—धनी, प्रसिद्ध और प्रशंसनीय।

"मां!" उसके हाथों को चूमते हुए उसने कहा, "तुम मेरे पास आ

गईं। इसका मतलब है कि तुम मुझे समझ गईं और कल में उस शापित शहर को जीत लूंगा!"

"जहां तुम पैदा हुए थे," मां ने याद दिलाया।

अपनी बहादुरी के कारनामों से उन्मत्त और अधिक यश के लिये लालायित पुत्र ने जवानी के जोश में उद्दंडता के साथ उत्तर दिया—

"मैं दुनिया में इसलिये पैदा हुआ हूं कि उसे आश्चर्यचकित करूं! अब तक मैंने इस शहर को सिर्फ़ तुम्हारे कारण ही फ़तह नहीं किया था। मेरे पैर में वह फांस की तरह चुभ रहा है और मेरी जल्दी से ख्याति की ओर बढ़ने की राह में एक रोड़ा-सा बना हुआ है। लेकिन कल मैं ज़िद्दी मूर्खों के इस घोंसले को तहस-नहस कर दूंगा!"

"जहां का एक-एक पत्थर तुम्हें एक बच्चे के रूप में जानता है और स्मरण करता है," मां ने कहा।

"पत्थर तब तक गूंगे रहते हैं, जब तक आदमी उन्हें जबान नहीं देता। पहाड़ मेरे गौरव-गीत गायें—मैं, बस यही चाहता हूं!"

"और लोग?" मां ने पूछा।

"हां, मैं उन्हें भूला नहीं हूं, मां। मुझे उनकी भी आवश्यकता है, क्योंकि मनुष्य की स्मृति में ही वीर अमरत्व पाते हैं!"

मां ने कहा—

"वीर वह है जो मौत से लोहा लेकर जीवन का निर्माण करता है, जो मृत्यु को जीतता है..."

"नहीं!" पुत्र ने आपत्ति की। "नगर-नाशक भी उतना ही यशस्वी होता है जितना नगर-निर्माता। देखो, हम नहीं जानते कि रोम का निर्माण किसने किया—एनिअस ने या रोमुलस ने—लेकिन हम अलारिक तथा उन अन्य वीरों के नाम अच्छी तरह जानते हैं, जिन्होंने रोम को नष्ट-भ्रष्ट किया..."

"लेकिन रोम का नाम ही चिरस्थायी रहा है," मां ने याद दिलाया।

इस तरह दोनों सूर्यास्त तक बातें करते रहे; मां उसकी उद्दंडतापूर्ण बातों के दौरान उसे अधिकाधिक कम टोकने लगी और उसका गर्वोन्नत मस्तक अधिकाधिक नीचे झुकता गया।

मां निर्माण करती है, रक्षा करती है और उसके आगे विनाश की बातें करना उसके विरुद्ध बोलना है, लेकिन बेटे को यह मालूम नहीं था और वह मां के जीवन के उद्देश्य से ही इन्कार कर रहा था।

मां सदैव मृत्यु के विरुद्ध रहती है और जो हाथ आबाद घरों में मौत लाते हैं वे माताओं के लिए तिरस्करणीय तथा घृणित होते हैं। लेकिन पुत्र इस बात को समझने में असमर्थ था, क्योंकि यश की भावनाहीन जगमगाहट के कारण उसकी आंखें चौंधिया गई थीं, उसका दिल पत्थर हो गया था।

वह यह नहीं जानता था कि मां जिस जीवन का निर्माण तथा रक्षा करती है, उसके लिये ख़तरा पैदा होने पर वह जितनी निर्भय होती है उतनी ही चतुर तथा कठोर भी हो सकती है।

मां सिर झुकाये बैठी थी और शत्रु-नेता के वैभवशाली तंबू के खुले हिस्से में से उस शहर को देख रही थी जहां उसे उस बालक के गर्भ में आने की मधुर अनुभूति तथा उसके जन्म की भयानक प्रसव-पीड़ा का अनुभव हुआ था, जो अब उसे नष्ट-भ्रष्ट करना चाहता था।

सूर्य की सुर्ख़ किरणों ने शहर की दीवारों तथा मीनारों को रक्तरंजित कर दिया और खिड़कियों के शीशों पर ऐसी अमंगल चमक फैला दी जिससे सारा शहर घायल शरीर जैसा दिखाई देने लगा, जिसके सैकड़ों घावों में से जीवन की लोहित धारा बह रही थी। कुछ समय बीतने पर शहर लाश की तरह काला पड़ने लगा और अंत्येष्टिकालीन मोमबत्तियों की तरह उसके ऊपर तारे चमक उठे।

वह उन धुंधले घरों को देख रही थी जिनमें लोग इसलिये बत्तियां जलाने से डर रहे थे कि कहीं शत्रु का ध्यान उनकी ओर न खिंच जाय; उन सड़कों को देख रही थी जिनपर अंधेरा छाया था और जहां लाशों की बदबू फैली हुई थी, वह मौत के इन्तजार में ज़िन्दगी की घड़ियां बितानेवाले लोगों की फुसफुसाहट सुन रही थी—वह सब को और सभी कुछ देख रही थी, सब कुछ जाना-पहचाना तथा प्रिय उसके सामने था, चुपचाप उसके निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा था और उसने यह अनुभव किया कि वह सभी नगरवासियों की मां है।

काले पर्वत-शिखरों से बादल घाटी में उतर आये और पंखवाले घोड़ों की तरह उस मरणोन्मुख शहर पर झपट पड़े।

"यदि रात काफ़ी अंधेरी हुई, तो हम शायद आज रात को हमला करेंगे!" बेटे ने कहा। "जब सूरज आंखों को चौंधियाता है और शस्त्रों की चमक उन्हें अंधा कर देती है, तब दुश्मन को मारना आसान नहीं होता और कई वार बेकार हो जाते हैं," अपनी तलवार को निहारते हुए उसने कहा।

मां ने उससे कहा—

"मेरे पास आओ, मेरे लाल, मेरी छाती पर सिर रखकर जरा आराम कर लो और जरा यह याद करो कि बचपन में तुम कितने ख़ुशमिजाज और दयालु थे और किस तरह सभी तुम्हें प्यार करते थे..."

बेटे ने मां की बात मानी और अपना सिर उसकी गोद में रखकर तथा आंखें मूंदकर कहा—

"मैं प्यार करता हूं केवल कीर्ति को और तुम्हें, क्योंकि जो कुछ मैं आज हूं, वैसे को तुम्हीं ने जन्म दिया था।"

"और स्त्रियां?" उसके मुख पर झुकते हुए मां ने पूछा।

"उनकी क्या कमी है? लेकिन आदमी उनसे उसी तरह ऊब जाता है जैसे हर बेहद मीठी चीज से।"

"और क्या तुम बच्चे नहीं चाहते?" मां ने आख़िर पूछा।

"किसलिये? ताकि वे मारे जायें? मेरे ही जैसा कोई उन्हें मार डालेगा; इससे मुझे बड़ा सदमा पहुंचेगा और तब तक मैं इतना बूढ़ा तथा कमजोर हो चुका हूंगा कि उनकी मौत का बदला नहीं ले सकूंगा।"

"तुम सुन्दर, लेकिन गाज की तरह ऊसर हो," मां ने आह भरते हुए कहा।

"हां, गाज की तरह..." पुत्र ने मुस्कराते हुए जवाब दिया और मां के वक्ष पर बच्चे की तरह उसे झपकी आ गयी।

तब मां ने बेटे को अपने काले लबादे से ढंका, उसके हृदय में उसने छुरा भोंका और वह सिहरकर उसी क्षण मर गया। आख़िर वह अच्छी तरह जानती ही थी कि बेटे का हृदय किस जगह धड़कता है... आश्चर्यचकित सिपाहियों के पैरों के पास पुत्र का शव लुढ़काकर उसने नगर की ओर मुड़कर कहा—

"एक आदमी के नाते मैं अपनी मातृभूमि के लिये जो कुछ कर सकती थी, मैंने वह कर दिया और मां के नाते मैं हूं अपने बेटे के साथ! दूसरे बेटे को जन्म देने में मैं अब असमर्थ हूं और मेरी जान की किसी को आवश्यकता नहीं।"

और अपने पुत्र के ख़ून से—अपने ही ख़ून से—लथपथ वह गरम छुरा उसने जोर से अपनी छाती में भोंक लिया। इस बार भी ठीक निशाने पर बैठा—टीसते दिल को ढूंढ़ना मुश्किल नहीं होता।

२६

पेपे दसेक बरस का है। दुबला-पतला, नाजुक और छिपकली की तरह चपल। रंग-बिरंगे चिथड़े उसके सिकुड़े-संकरे कंधों से लटकते रहते हैं और अनगिनत छेदों में से उसका शरीर झांकता रहता है, जो धूप तथा धूल से काला पड़ गया है।

वह सूखी घास के उस तिनके जैसा है जिसे खिलवाड़ करती हुई समुद्री हवा इधर-उधर उड़ाती है। सूर्योदय से सूर्यास्त तक पेपे द्वीप की चट्टानों पर कूदा करता है और उसकी अथक आवाज सर्वत्र सुनाई देती रहती है:

"सुन्दर इटली,
मेरी इटली!"

हर चीज में वह दिलचस्पी लेता है: हरी-भरी धरती पर महमहाकर खिलनेवाले फूलों में, बैंगनी चट्टानों पर सरसराती छिपकलियों में, जैतून वृक्ष की सुघड़ पत्तियों, नक्काशीदार हरी अंगूर लताओं में फुदकनेवाली चिड़ियों, सागर तल के अंधेरे उद्यानों की मछलियों और शहर की संकरी, टेढ़ी-मेढ़ी सड़कों पर से गुजरनेवाले परदेसियों; चेहरे पर तलवार की खरोंचवाले मोटे से जर्मन, मानवद्वेषी की भूमिका खेलनेवाले अभिनेता की याद दिलानेवाले अंग्रेज, अंग्रेज की तरह दिखाई देने का असफल प्रयत्न करनेवाले अमरीकी और झुनझुने की तरह शोर मचानेवाले बेजोड़ फ़्रांसीसी में भी।

"क्या चेहरा है!" अपनी पैनी आंखें उस जर्मन पर गड़ाते हुए पेपे अपने दोस्तों से कहता है। अपनी शान में वह ऐसा ऐंठा हुआ है कि उसके बाल खड़े से दिखाई देते हैं। "उसका चहेरा तो मेरे पेट से कम नहीं है!"

पेपे जर्मनों को पसन्द नहीं करता है। सड़कों, मैदानों तथा उन छोटी-

मोटी अंधेरी दूकानों पर सुनाई देनेवाले विचार हों जहां अपने लोग शराब पीते हैं, ताश खेलते हैं और अखबार पढ़ते हुए राजनीति की चर्चा करते हैं, उसके भी विचार हैं।

"बल्कान के स्लाव लोग हमारे उन नेक मित्रों से हम ग़रीब दक्षिणियों के कहीं ज्यादा नजदीक हैं जिन्होंने हमें मैत्री के लिए अफ़्रीका के रेगिस्तानों का उपहार दिया है," वे कहते हैं।

दक्षिण के सीधे-सादे लोग इस बात को बार बार दोहराते हैं। पेपे सब कुछ सुनता है और भूलता कुछ भी नहीं।

कैंचीनुमा पैरोंवाला अनमना अंग्रेज लंबे डग भरता हुआ जा रहा है। पेपे उसके आगे आगे मरसिया या साधारण शोकगीत सा गुनगुनाता हुआ चलता है :

"मित्र मेरा चल बसा जब
दुख हुआ मेरी प्रिया को।
कुछ समझ पाता नहीं मैं
हृदय में उसके व्यथा क्यों?"

पेपे के साथी हंसी से दोहरे होते हुए पीछे-पीछे चलते हैं और जब वह परदेशी अपनी धुंधलायी आंखों से उन पर शांत नजर दौड़ाता है, तब वे झाड़ियों या दीवालों के पीछे छिपने के लिए चूहों की तरह सरपट दौड़ते हैं।

पेपे के बारे में कई दिलचस्प क़िस्से सुनाए जा सकते हैं।

एक दिन एक महिला ने अपने बगीचे के सेबों से भरी डलिया पेपे के हाथों अपने मित्र के यहां भेजनी चाही।

"एक सोल्दो की कमाई कर लोगे!" उसने कहा, "इसमें कुछ बुराई नहीं है..."

पेपे ने फ़ौरन डलिया उठायी, सिर पर रखी और चल दिया। शाम तक वह सोल्दो के लिए वापस नहीं आया।

"बहुत जल्दी लौटे हो!" महिला ने व्यंगपूर्वक कहा।

"ओह, प्रिय सिन्योरा, फिर भी मैं बहुत थक गया हूं..." आह भरते हुए पेपे ने कहा, "आप ही सोचिये, वे दस से ज्यादा जो थे!"

"ऊपर तक भरी डलिया में? कुल दस सेब?"

"सेब नहीं, सिन्योरा, लड़के।"

"लेकिन सेबों का क्या हुआ?"

"पहले लड़कों की बात सुनिये: मीकेले, ज्योवान्नी..."

वह झुंझला उठी। पेपे के कंधे पकड़कर उसने उसे जोर से झंझोड़ा। "बताओ सेब पहुंचा दिये कि नहीं?"

"हां, चौराहे तक गया, सिन्योरा! सुनिये, मैंने कैसा अच्छा बर्ताव किया। शुरू शुरू में मैंने उनको तानेबाजी पर ध्यान नहीं दिया। मैंने अपने आप से कहा कि भले ही वे गधे के साथ मेरी तुलना करें, मैं उसको सह लूंगा – मैं सिन्योरा की इज्जत जो करता हूं। लेकिन जब उन्होंने मेरी मां के बारे में चुटकियां लेनी शुरू कीं, तब सब्र की हद हो गयी। मैंने डलिया नीचे रख दी और, सिन्योरा, वह देखते ही बनता था कि किस तरह मैंने उन शैतानों पर कैसी फुर्ती से और कितने ठीक निशाने लगाये – आपको बड़ा मजा आता!"

"तो वे मेरे फल ले उड़े?!" सिन्योरा चिल्लाई।

पेपे ने एक दर्दभरी आह खींची –

"जी नहीं," उसने कहा, "लेकिन जो सेब निशाने पर नहीं बैठे, वे दीवाल से टकराकर टुकड़े-टुकड़े हो गये; फिर जब अपने दुश्मनों को परास्त करके मैंने उनसे सुलह कर ली, तो बचे-खुचे सेब हम सब ने खा लिये..."

महिला देर तक चीख़ती-चिल्लाती रही, पेपे के सफ़ाचट सिर पर दुनिया भर की गालियों की बौछार करती रही। वह ध्यान और नम्रता से सुनता रहा। जब-तब प्रशंसा में जबान को चटकारता और कह उठता –

"वाह, मजा ही आ गया! क्या बढ़िया शब्द हैं!"

आख़िर जब वह थक कर वहां से चल दी तो पेपे ने कहा –

"सच, अगर आपने देखा होता कि किस ख़ूबसूरती के साथ आपके बढ़िया फलों से मैंने उन ठगों की गंदी खोपड़ियों पर निशाने लगाये, तो आप इस तरह नाराज न होतीं। काश, आपने यह देखा होता! तब आप मुझे एक के बदले दो सोल्दो देतीं!"

फूहड़ औरत उस विजेता के विनीत गर्व को समझ न पायी और उसने पेपे की ओर घूंसा ताना।

पेपे की बहन, जो उम्र में उससे काफ़ी बड़ी, लेकिन समझदारी में इक्कीस नहीं थी, एक धनी अमरीकी के घर में नौकरानी हो गयी। कुछ ही दिनों में उसका कायाकल्प हो गया—वह साफ़-सुथरी रहने लगी और अच्छे खाने-पीने से गालों पर गुलाब खिल उठे। वह अगस्त महीने की पकी नाशपाती की तरह रसीली हो गयी।

"तुम हर रोज खाना खाती हो?" एक बार भाई ने उससे पूछा।

"चाहूं तो दिन में दो-तीन बार भी," बहन ने बड़ी शान से जवाब दिया।

"अपने दांतों पर तो रहम करो!" पेपे ने सलाह दी, कुछ देर सोचता रहा और फिर पूछा—

"बहुत मालदार है क्या तुम्हारा मालिक?"

"मेरा मालिक? मेरे ख्याल में तो राजा से भी बढ़कर!"

"तुम किसी और को बुद्धू बनाओ! कहो, उसके पास कितने पतलून हैं?"

"कहना मुश्किल है।"

"दस?"

"शायद ज्यादा..."

"तो उनमें से एक मुझे ला देना। ज्यादा लंबा न हो, लेकिन गरम जरूर," पेपे ने कहा।

"किस लिए?"

"मेरा पतलून तो देख रही हो न?"

वहां देखने के लिए कुछ था ही नहीं—उसके बदन पर पतलून कहलाने लायक़ शायद ही कुछ बचा था।

"हां," बहन ने स्वीकार किया, "तुम्हें कपड़ों की जरूरत है! लेकिन क्या मेरा मालिक यह नहीं समझेगा कि हमने चोरी की है?"

"यह नहीं सोचना चाहिये कि लोग हमसे ज्यादा बेवक़ूफ़ हैं!" पेपे ने उसे समझाते हुए कहा। "ज्यादा में से थोड़ा हम जब लेते तो इसे न चोरी कहते, हिस्सेदारी बतलाते।"

"मगर ऐसा तो सिर्फ़ गाना ही है!" बहन ने आपत्ति की। लेकिन पेपे ने शीघ्र ही उसे समझा-बुझाकर राजी कर लिया और वह हल्के स्लेटी रंग का एक अच्छा सा पतलून लेकर रसोई में आयी। वह पेपे को पूरी

लम्बाई से भी कुछ अधिक लंबा था, लेकिन पेपे ने फ़ौरन समझ लिया कि इस कठिनाई को कैसे पार करना चाहिये।

"ज़रा छुरी देना तो!" उसने कहा।

दोनों ने मिलकर कुछ ही देर में अमरीकी के उस पतलून को लड़के के योग्य पोशाक में बदल डाला। उसकी कोशिशों का नतीजा रहा एक ढीला-ढाला, मगर आरामदेह बोरा। गर्दन पर बांधी जानेवाली डोरियों के सहारे वह उसके कंधों पर टिका रह सकता था और पतलून की जेबें आस्तीनों का बढ़िया काम दे सकती थीं।

पतलून के मालिक की बीबी ने अगर उनकी कोशिशों में ख़लल न डाल दिया होता, तो शायद वे इससे भी अच्छी और अधिक आरामदेह पोशाक बना लेते। यह औरत रसोई में घुस आई और उसने कई भाषाओं में अत्यंत अशुद्ध उच्चारण से, जैसी कि अमरीकियों की आदत है, गालियों की बौछार शुरू की।

उसकी वाक्पटुता के इस प्रवाह को रोकने का पेपे का कोई भी उपाय सफल नहीं रहा। पेपे ने नाक-भौं सिकोड़ी, दिल पर हाथ रखा और निराशा से अपना सिर पकड़कर ज़ोरदार आह भरी; लेकिन अमरीकी महिला के ग़ुस्से का पारा ज़रा भी नीचे नहीं आया। आख़िर उसका पति वहां आ पहुंचा।

"क्या मामला है?" उसने पूछा।

तब पेपे ने कहा—

"सिन्योर, आपकी सिन्योरा ने जो हल्ला मचा दिया है, उससे मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। मुझे तो आपके लिये कुछ दुःख भी हो रहा है। जहां तक मैं समझा हूं, वे यह मानती हैं कि हमने पतलून का सत्यानास कर डाला है, लेकिन मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि वह मेरे लिये बहुत आरामदेह है। सिन्योरा शायद ऐसा सोचती हैं कि आपके पास सिर्फ़ यही पतलून था, जो मैंने ले लिया और अब दूसरा ख़रीदना आपके लिये नामुमकिन है..."

पेपे के भाषण को शांतिपूर्वक सुन लेने के बाद अमरीकी ने कहा—

"और साहबज़ादे, मेरे ख़्याल में तो अब पुलिस को बुलाना चाहिये।"

"सच?" पेपे ने आश्चर्य से पूछा, "किसलिये?"

"तुम्हें जेल ले जाने के लिये..."

पेपे को गहरी चोट पहुंची। वह तो रुग्रांसा हो उठा और जैसे-तैसे आंसू पीकर गम्भीरता से बोला—

"सिन्योर, अगर लोगों को जेल भिजवाने में आपको मजा आता हो तो बात दूसरी है! लेकिन अगर मेरे पास कई पतलून होते और आपके पास एक भी न होता, तो मैं कभी ऐसा न करता। मैं आपको दो और शायद तीन पतलून भी दे देता हालांकि एकसाथ तीन पतलून पहनना नामुमकिन है! ख़ासकर गरम मौसम में..."

अमरीकी ठट्ठा मारकर हंस पड़ा, क्योंकि धनी भी कभी कभी रंग में आ जाते हैं।

फिर उसने पेपे को कुछ चाकलेट दिया और एक फ़्रंक का सिक्का भी। पेपे ने सिक्के को दांतों से परखा और धन्यवाद देते हुए कहा—

"शुक्रिया सिन्योर! लगता है कि सिक्का असली है?"

लेकिन पेपे की सर्वोत्तम झांकी तब दिखाई देती है जब वह अकेला कहीं चट्टानों के बीच खड़ा, ग़ौर से उनकी दरारों की जांच-सी करता है, मानो चट्टानों के जीवन का अनजाना इतिहास पढ़ रहा हो। ऐसे अवसरों पर उसकी सजीव आंखें आश्चर्य से विस्फारित तथा झिल्लीदार हो जाती हैं, उसके पतले-से हाथ पीठ पर बंधे रहते हैं और जरा सा झुका हुआ उसका सिर पवन-लहरी में झूमनेवाले फूल की तरह झूमा करता है। वह धीरे-धीरे कुछ गुनगुनाया करता है—वह तो हमेशा ही गाता रहता है।

फूलों को, दीवालों पर उमड़ पड़नेवाले विस्तारिया के बैंगनी पुष्प-गुच्छों को निहारते समय भी पेपे की सूरत देखते बनती है। वह उनके सामने तार की तरह तनकर खड़ा रहता है, मानो समुद्री हवा के झोंके से छेड़ी गयी रेशमी पंखुड़ियों के मृदु कंपन को कान लगाकर सुन रहा हो।

वह देखता रहता है और गाता जाता है—

"फ़िओरीनो... फ़िओरीनो..."

और दूर से किसी विशाल खंजरी की आवाज़ की तरह सागर की दबी हुई आह-सी सुनाई देती है। फूलों पर तितलियां दौड़ा-दौड़ी का खेल खेलती हैं। पेपे सिर उठाता है और उन्हें एकटक निहारता रहता है, सूर्य के प्रकाश से आंखें मिचमिचाते हुए, कुछ-कुछ ईर्ष्या और उदासी की झलक लिये हल्की-

सी मुस्कान उसके होंठों पर खिल उठती है, लेकिन फिर भी वह धरती के एक बड़े जीव की मधुर मुस्कान होती है।

"चो!" पन्ने जैसी हरी छिपकली को डराने के लिये ताली बजाकर वह चिल्लाता है।

श्रौर जब सागर शीशे की तरह शांत होता है तथा चट्टानों पर लहरों की हलचल के सफ़ेद लेसदार झाग का कोई निशान नहीं बचता, तब पेपे एक शिलाखंड पर बैठकर अपनी पैनी श्रांखों से उस पारदर्शक पानी में टकटकी लगाकर देखता है जहां लाल सी समुद्री लताश्रों के बीच मछलियां बड़ी लोच से सरकती रहती हैं, झींगा मछलियां तेज़ी से गुज़रती हैं श्रौर केकड़े तिरछे-टेढ़े रेंगते जाते हैं। निस्तब्धता में इस लड़के की विचारमग्न स्पष्ट श्रावाज़ नीले पानी पर धीरे से लहरा उठती है –

"सागर, हे सागर..."

बड़े-बूढ़े पेपे के बारे में कहा करते हैं –

"यह तो श्रराजकतावादी बनेगा!"

लेकिन श्रधिक सूझबूझवाले श्रौर कुछ सहृदय लोगों की राय दूसरी ही है। वे कहते हैं –

"पेपे हमारा कवि बनेगा..."

श्रौर चांदी के ढले हुए से सिर तथा प्राचीन रोमन सिक्कों पर खुदे से चेहरेवाला बूढ़ा बढ़ई पास्कवालीनो, बुद्धिमान तथा श्रादरणीय पास्कवालीनो का मत यह है –

"हमारे बच्चे हमसे श्रच्छे होंगे श्रौर उनका जीवन भी श्रधिक श्रच्छा होगा!"

बहुत-से लोग उसकी बात पर विश्वास करते हैं।

१९११

इन्सान पैदा हुआ

यह सन् ६२ के अकाल के दिनों की बात है। सुख़ुम और ओचेमचिरी के बीच, कोदोर नदी के तट पर—पहाड़ी झरने के सुमधुर कलकल नाद को डुबाते हुए समुद्र का गम्भीर गर्जन साफ़ सुनाई दे रहा था।

पतझड़ का मौसम था। छोटे-छोटे पीले पत्ते कोदोर की सफ़ेद लहरों पर चंचल मछलियों के समान इधर-उधर लहरा रहे थे। मैं नदी के किनारे पत्थरों पर बैठा हुआ सोच रहा था कि मुर्ग़ाबियां और दूसरी समुद्री चिड़ियां भी इन पत्तियों को मछली समझ कर धोखा खा रही हैं। इसी कारण वे दाहिनी ओर, पेड़ों के पीछे, जहां समुद्र बहुत उछल-कूद रहा था, बुरी तरह चीख़-चिल्ला रही हैं।

मेरे ऊपर छाये हुए बलूत सोने से सजे थे। पैरों के पास पड़े हुए असंख्य पत्ते ऐसे लग रहे थे मानो अनेक हथेलियां काटकर इधर-उधर फेंक दी गयी हों। दूसरे किनारे पर खड़े हुए वृक्षों की नंगी शाखायें हवा में लटके हुए टूटे जाल की तरह लग रही थीं। उस जाल में, एक पीला-लाल पहाड़ी कठफोड़वा इस प्रकार कूद रहा था मानों उसमें फंस गया हो और पेड़ के तने पर अपनी काली चोंच से ठकठक की आवाज़ कर कीड़ों को निकाल रहा था। और ये निकले हुए कीड़े उत्तर से आये हुए मेहमानों द्वारा, जिनमें चालाक फुदकियां और अन्य छोटी चिड़ियां भी थीं, फ़ौरन ही निगल लिये जाते थे।

बाईं तरफ़ धूम-धुआंरे काले बादल पहाड़ की चोटियों पर छा रहे थे। उन्हें देखकर वर्षा होने की आशंका हो रही थी। उनकी छायाएं पहाड़ की

हरी ढलान पर रेंग रही थीं जहां पातहीन समशीत के वृक्ष खड़े हुए थे और जहां पुराने लीपा तथा दूसरे जंगली वृक्षों के कोटरों में "मादक मधु" मिल सकता था, जिसने प्राचीन युग में महान पोम्पियस की सेना को लगभग नष्ट ही कर दिया होता। इसने रोमन सेना की बख़्तरबन्द टुकड़ियों को अपनी मादकता उत्पन्न करने वाली मिठास से बिल्कुल मस्त कर दिया था। इस शहद को मधुमक्खियां धतूरे और महुए के फूलों से बनाती हैं। पथिक इसे कोटरों में से निकाल कर अपनी गेहूं की पतली रोटियों—लवाशों—पर लगाकर खाते हैं।

बलूत की छाया में पत्थरों पर बैठा हुआ मैं भी यही कर रहा था। मधुमक्खियों ने झल्लाकर मुझे काट लिया था। मैं पतीली में, जिसमें शहद भरा हुआ था, अपनी रोटी डुबो कर खा रहा था और पतझड़ के थके हुए से सूरज को भी मुग्ध होकर देखता जाता था।

पतझड़ के दिनों में काकेशस किसी एक सुन्दर गिरजे की तरह दिखाई देता है, जिसे मानो महान मनीषियों ने,—जो महान पापी भी थे,—अपने गत जीवन को आत्मा की तीखी नज़रों से बचाने के लिये, बनवाया हो। यह विशाल मन्दिर बनाया गया है सोने, फ़िरोज़ा और पन्नों से और पहाड़ों पर समरकन्द और शेमाहा के तुर्कमानों द्वारा बनाये सुन्दर ज़रीदार कालीन लटकाये गये हैं। सारी दुनिया और सब कुछ लूटकर वे यहां सूर्य के सामने ले आये हैं और मानो उससे यह कहना चाहते हों—

"तुम्हारा—तुम्हारों से—तुम्हारे ही लिये।"

...मैं देख रहा था कि कैसे श्वेत दाढ़ी और बच्चों की सी प्रसन्न बड़ी आंखों वाले दैत्य पहाड़ों से उतर रहे हैं, खुले हाथों रंग-बिरंगे रत्नों के ख़ज़ाने वे चारों ओर बिखेरते हुए पृथ्वी को सुन्दर बना रहे हैं। पहाड़ की चोटियों पर उन्होंने चांदी की एक मोटी तह जमा दी थी और ढलानों पर अनेक प्रकार के वृक्षों का कालीन बिछा दिया था। उनके हाथों की करामात से पृथ्वी का यह सुन्दर भाग, मुग्ध कर देनेवाले सौन्दर्य से जगमगा उठा था।

मनुष्य बनकर इस संसार में आना सबसे बड़ा सौभाग्य है! कितनी अद्भुत वस्तुएं हैं, उसके चारों ओर! सौन्दर्य की मूक-स्तुति करते हुए कैसी पीड़ायुक्त मधुर हलचल होती है हृदय में!

हां, कभी-कभी बहुत भारी गुजरती है, हृदय में एक तीव्र घृणा प्रज्वलित हो उठती है और दुख हृदय का रक्त चूसने लगता है—परन्तु यह अवस्था हमेशा नहीं रहती, यहां तक कि कभी-कभी सूर्य भी मनुष्यों को अपने हृदय में असह्य अवसाद छिपाए देखने लगता है—उसने इनके लिये कितना परिश्रम किया, मगर इन्सान तो अच्छे इन्सान नहीं बने...

जाहिर है कि अच्छे आदमी भी काफ़ी हैं, पर उन्हें ठीक-ठाक करने की जरूरत है और ज्यादा अच्छा तो यही होगा कि उनका पुनःनिर्माण किया जाये।

...मेरे बायीं ओर झाड़ियों के ऊपर काले सिर हिल-डुल रहे थे। समुद्र की लहरों के गर्जन और नदी की कलकल ध्वनि में इन्सानों की आवाजें मुश्किल से सुनाई दे रही थीं। ये "भूखे लोग" सुख़ुम से, जहां वे एक पक्की सड़क बना रहे थे, ओचेमचिरी की तरफ़ कोई नया काम पाने की आशा में जा रहे थे।

मैं उन्हें जानता था। वे ओरेल के रहनेवाले थे। मैंने उनके साथ सुख़ुम में काम किया था और हम लोगों को एक दिन पहले एकसाथ ही वेतन मिला था। मैं रात को उनसे पहले ही चल दिया था ताकि समुद्र तट पर सूर्योदय को देख सकूं।

उनमें चार मर्द और गाल की उभरी हड्डियों वाली एक गर्भवती जवान किसान औरत थी। उसका बड़ा पेट बाहर निकला हुआ था। उसकी आंखें नीलापन लिये भूरी थीं और भय से बाहर निकली पड़ रही थीं। मुझे झाड़ियों के ऊपर पीले रूमाल से ढका हुआ उसका सिर दिखाई दिया जो खिले हुए सूरजमुखी के फूल की तरह हवा में इधर-उधर हिल रहा था। उसका आदमी सुख़ुम में, अधिक फल खाने से मर गया था। मैं वहां इन लोगों के साथ एक ही बारिक में रहता था। पुराने रूसी स्वभाव के अनुसार वे अपनी मुसीबतों की इतनी अधिक और इतने ऊंचे स्वर में शिकायत करते थे कि उनकी ये दुखद दास्तानें कोसों दूर सुनी जा सकती थीं।

दुख से बुरी तरह सताये हुए ये ऊब भरे लोग थे। मुसीबत ने, इन्हें अपनी जन्मभूमि, थकी-हारी और ऊसर धरती से, पतझड़ में टूटे हुए सूखे पत्तों की तरह उड़ाकर इधर फेंक दिया था। यहां की अद्भुत और समृद्ध

प्रकृति ने उनकी आंखों में चकाचौंध पैदा कर दी थी और साथ ही अत्यधिक कठोर परिश्रम ने उन्हें पूरी तरह तोड़ भी दिया था। भौचक्कों की तरह अपनी धुंधली, उदास आंखों को झपकाते हुए वे यहां की हर चीज को देखते और होंठों पर करुण मुस्कान लाकर धीमी आवाज में एक दूसरे से कहते—

"ओह, यह है जमीन तो..."

"चीजें जैसे पृथ्वी फाड़कर निकली पड़ती हैं।"

"हां... फिर भी यह पथरीली अधिक है..."

"इतनी अच्छी तो नहीं, मानना पड़ेगा..."

और फिर उन्हें याद आये कोबोली लोजोक, सुखोई गोन, मोक्रेन्कोये—उनके अपने जन्म-स्थान जहां की मिट्टी के कण-कण में उनके पूर्वजों की राख मिली हुई थी, जहां का सब कुछ दिलों पर अंकित था, सब कुछ उनका प्यारा और परिचित था, उनके पसीने से सींचा गया था।

उनके साथ एक और औरत थी—लम्बी, सीधी, तख़्ते की तरह, भारी जबड़ा, कोयले सी काली, तिरछी उदास आंखों वाली।

शामों को वह पीले रूमाल वाली औरत के साथ झोंपड़ी के पीछे कुछ दूर जाती और कंकड़-पत्थर के एक ढेर पर बैठ जाती। फिर अपनी हथेली पर गाल रखकर तथा एक तरफ़ सिर झुकाकर झल्लाई सी ऊंची आवाज में गाती—

"हरी-हरी सी झाड़ियों में
उन क़ब्रों के पार
सफ़ेद रूमाल बिछा बालू पर
मैं अलबेली नार...
राह पिया की देखूंगी मैं
पल, छिन नयन लगाये
सीस झुकाऊंगी मैं उसको
जब वह साजन आये।"

पीले रूमाल वाली हमेशा चुपचाप बैठी हुई अपने पेट को देखती रहती परन्तु कभी-कभी अचानक एक गहरी, मन्द, मर्दानी-सी आवाज में गीत की अन्तिम शोकपूर्ण कड़ी गा उठती—

"ओ रे, ओ रे, ओ रे,
प्रीतम मेरे प्यारे
नहीं लिखे हैं अब क़िस्मत में
दर्शन कभी तुम्हारे..."

दम घोंटने वाली दक्षिणी काली रात में, ये कराहती आवाज़ें उत्तर की बर्फ़ीली निर्जनता, चिंघाड़ते हुए बर्फ़ीले तूफ़ान और भेड़ियों की भयंकर गुर्राहट की स्मृति जगा देती...

कुछ समय बाद वह तिरछी आंखों वाली औरत ज्वर ग्रस्त हो गयी और उसे तिरपाल के स्ट्रेचर पर डाल कर शहर ले जाया गया। वह उसमें ज़ोरों से कांपती-छटपटाती और ऐसे चीख़ती-चिल्लाती रही मानो कब्रिस्तान और बालू वाला अपना गीत जारी रख रही हो।

...पीले रूमाल वाले सिर ने हवा में मानो डुबकी लगाई और गायब हो गया।

मैंने अपना नाश्ता समाप्त किया। पतीली में रखे हुए शहद को पत्तियों से ढका, झोला बांधा और अपनी छड़ी को ठोस ज़मीन पर बजाता हुआ धीरे-धीरे दूसरे लोगों के पीछे-पीछे रास्ते पर चल दिया।

फिर से मैं उस संकरी, भूरी सड़क की पट्टी पर चल रहा था। दाहिनी तरफ़ गहरा नीला समुद्र लहरा रहा था। ऐसा मालूम देता था जैसे सहस्रों अदृश्य बढ़ई अपने रन्दों से इसे छील रहे हों और इसकी सफ़ेद छीलन, स्वस्थ औरत की नम, गर्म और सुगन्धित सांस जैसी हवा के दबाव से किनारे की तरफ़ भागी जा रही हो। एक पालदार तुर्की नाव सुख़ुम की ओर बढ़ी जा रही थी, इसके पाल ऐसे फूले हुए थे जैसे सुख़ुम का धीर-गम्भीर इंजीनियर अपने मोटे गालों को फुला लेता था। किसी कारण उसके उच्चारण में गंवारपन का पुट था।

"चुप रहो! बेशक हो तो तुम बड़े तीसमार-ख़ां, पर मैं तुम्हें अभी थाने पहुंचा दूंगा..."

उसे लोगों को थाने भिजवाने में बड़ा मज़ा आता था और यह सोचकर दिल को ख़ुशी होती थी कि शायद अब तक क़ब्र में कीड़ों ने उसके शरीर की हड्डियां तक खा ली होंगी।

...पैदल चलना कितना आसान लग रहा था जैसे हवा में तैरते चले

जा रहे हों। मधुर भाव, रंग-बिरंगी सुखद स्मृतियां प्यारा नाच-सा नाच रही थीं। आत्मा का यह नृत्य समुद्री सतह की झागदार सफ़ेद चंचल लहरों के समान था। और आत्मा की अतल गहराई में शान्ति थी। वहां, समुद्र की गहराई में लहराती रुपहली मछलियों जैसी यौवन की सुन्दर और उज्ज्वल आशाएं लहरा रही थीं।

रास्ता समुद्र तट को जाता था और चक्कर खाता हुआ रेतीले किनारे के और नज़दीक खिसकता जाता था जहां लहरें तट को धो रही थीं। झाड़ियां भी समुद्र की एक झलक पाने को तरस रही थीं। वे तो मानो सड़क के किनारे खड़ी सागर के अनन्त नीले विस्तार को प्रणाम कर रही थीं।

पहाड़ों की तरफ़ से हवा चल पड़ी—पानी बरसेगा।

...झाड़ियों में धीमी कराहट सुनाई दी—मनुष्य की कराहट जो सीधी दिल पर चोट करती है।

मैंने झाड़ियों को एक तरफ़ हटाया—क्या देखता हूं कि पीले रूमाल वाली औरत अखरोट वृक्ष के तने से पीठ लगाए बैठी है। उसका सिर कन्धे पर लटक रहा था, मुख विकृत हो उठा था, आंखें पागल की आंखों की तरह बाहर को निकली पड़ रही थीं। वह अपना बड़ा पेट दोनों हाथों से पकड़े इतने अस्वाभाविक ढंग से सांसें ले रही थी कि दर्द से उसका पेट उछलता सा लग रहा था, अपने भेड़िये के से पीले दांतों को बाहर निकालते हुए धीमे-धीमे कराह रही थी।

"किसी ने पीटा है क्या?" मैंने उसके ऊपर झुकते हुए पूछा। उसने मक्खी की तरह धूल में पैरों को रगड़ा और अपने भारी सिर को घुमाती हुई फटी-सी आवाज़ में बोली—

"जाओ यहां से... निर्लज्ज... जाओ..."

मैं समझ गया कि मामला क्या है—मैं पहले भी एक बार यह देख चुका था। मैं घबराकर पीछे हटा, परन्तु उस औरत ने एक तीखी और लम्बी चीख़ मारी। उसकी बाहर निकली हुई आंखें फटती-सी प्रतीत हुईं और उसके सूजे हुए गहरे लाल गालों पर आंसू बहने लगे।

इसी चीज़ ने मुझे पुनः उसके पास जाने के लिये मजबूर कर दिया। मैंने अपना झोला, पतीली और केतली ज़मीन पर फेंकी, उसे पीठ के बल चित लिटा दिया और उसकी टांगें घुटनों पर से मोड़ने ही वाला था कि

उसने मुझे धक्का दिया, मेरे मुंह और छाती पर घूंसे मारे और रीछनी की तरह हाथों-पैरों के बल रेंगती हुई झाड़ियों में और गहरी घुसकर गुर्राने लगी –

"शैतान... जानवर..."

उसके हाथ शिथिल पड़ गये, वह जमीन पर मुंह के बल गिर पड़ी और टांगों को छटपटाती हुई फिर चीखी।

उत्तेजना की इस स्थिति में, झटपट वह सब कुछ याद करके जो मैं इस विषय में जानता था, मैंने उसे पीठ के बल लिटा दिया और टांगें मोड़ दीं – गर्भ की झिल्ली से तरल स्राव बाहर आने लगा था।

"लेटी रहो, अभी बच्चा बाहर आ जायेगा..."

मैं दौड़ा हुआ किनारे पर गया, कमीज की आस्तीनें ऊपर चढ़ाईं, हाथ धोये, लौटा और बस, दाई बन गया।

औरत आग की लपटों में पड़ी हुई भोजपत्र की छाल की तरह ऐंठ रही थी। अपने आस-पास की जमीन को वह हाथों से पीट रही थी, मुरझाई हुई घास को उखाड़कर मुंह में ठूंसने का प्रयत्न कर रही थी और उसने अपने भयभीत और वेदना से विकृत चेहरे और जंगली, ख़ूनी लाल आंखों पर मिट्टी डाल ली। अब झिल्ली कट गयी और बच्चे का सिर बाहर निकला। मैंने जोर लगाकर उसके पैरों के झटकों को रोका, बच्चे को बाहर निकलने में सहायता पहुंचाई और इस बात का भी ध्यान रखा कि वह अपने वेदना-विकृत, खुले हुए मुंह में घास न डाल ले...

हम दोनों एक दूसरे को कुछ गालियां देते रहे, वह दांत भींचकर और मैं भी धीमी-धीमी आवाज में। वह वेदना और शायद शर्म के मारे और मैं परेशानी और परम करुणा के मारे...

"हे भगवान," उसने भर्रायी आवाज में कहा। उसके दांतों से कटे नीले होंठों पर झाग फैला हुआ था और आंखों से, जो अचानक धूप में धुंधला-सी गयी थीं, माता की असह्य वेदना के प्रतीक ढेरों आंसू बराबर बह रहे थे। उसका सारा शरीर ऐंठ रहा था जैसे उसके दो टुकड़े कर दिये गये हों –

"चले... जाओ... तुम... बेहया..."

अपनी अशक्त भुजाओं से वह मुझे बराबर धकेलती रही और मैं उसे तसल्ली देते हुए कहता रहा –

"वुढू, जनो, जल्दी से..."

उसके प्रति दया से मेरा हृदय फटा जा रहा था। मुझे ऐसा लगा जैसे उसके आंसू मेरी आंखों में छलक आये हों, जैसे हृदय पीड़ा से फट जायेगा। मैंने चीख़ना चाहा और चीख़ा भी—

"जल्दी करो!"

और लीजिये—मेरे हाथों में एक छोटा-सा मानव था—लाल-लाल। आंसुओं में से भी मैंने देखा कि वह बिल्कुल लाल और संसार से पूर्ण रूप से असन्तुष्ट है। वह बराबर लातें फेंका रहा था, छटपटा और चीख़ रहा था, यद्यपि अभी अपनी मां से जुड़ा हुआ था। इसकी आंखें हल्की नीली थीं। इसकी छोटी-सी नाक ऐसी लग रही थी मानो उसे उसके लाल, सिकुड़े हुए चेहरे पर चिपका दिया गया हो। उसके होंठ हिल-डुल रहे थे और चीख़कर कह रहे थे—

"मैं-आ... मैं-आ..."

उसका शरीर इतना चिकना था कि मुझे भय हुआ कि कहीं वह मेरे हाथों में से फिसल न जाये। मैं घुटनों के बल खड़ा हुआ उसे देखकर हंस रहा था—बहुत ख़ुश था उसे देखकर! और मैं यह भूल गया कि अब क्या करना है...

"काट दो..." मां फुसफुसाई। उसकी आंखें बन्द थीं। उसका मुंह उतर गया था, बेरंग हो गया था—बिल्कुल मुर्दे की तरह। उसके नीले होंठ मुश्किल से हिल रहे थे—

"काट दो... चाकू से..."

परन्तु मेरा चाकू चुरा लिया गया था इसलिये मैंने नाल को अपने दांतों से काट दिया। बच्चा भारी ओरेली आवाज़ से चीख़ा। मां मुस्काई—उसकी आंखों में मुझे अद्‌भुत चमक दिखाई दी और उनकी उस अतल गहराई में एक नीली ज्वाला चमकी। उसके मैले सांवले हाथ अपने घघरे की जेब को ढूंढ़ने लगे और उसके कटे, ख़ून से भरे होंठ हिले—

"ताक़त... नहीं... फ़ीता... जेब में... बांध दो... नाल को..."

मैंने फ़ीते का टुकड़ा निकालकर बच्चे का नाल बांध दिया। मां और प्रसन्नता से मुस्कराने लगी। यह मुस्कराहट इतनी प्यारी और प्रखर थी कि उससे मैं चकाचौंध-सा रह गया।

"तुम अपने को ज़रा ठीक-ठाक कर लो, तब तक मैं जाकर उसे धो लाता हूं..."

"सावधानी से... होशियारी से..." वह उद्विग्न होकर बुदबुदाई।

परन्तु यह लाल आदमी तो सावधानी की मांग ही नहीं करता था—मुट्ठियां बांधकर चीख़ता ही चला जा रहा था मानो द्वन्द्वयुद्ध के लिये ललकार रहा हो—

"मैं-आ, मैं-आ! मैं-आ, मैं-आ!"

"हां, तुम, तुम ही हो! हिम्मत कर दुनिया में अपने लिये स्थान बनाओ... नहीं, तो आस-पास के लोग तुम्हारा सिर उड़ा देंगे..."

पहली लहर ने जब हम दोनों को ख़ुशी भरा थपेड़ा मारा तो वह बुरी तरह से चीख़ा, परन्तु जब मैंने धीरे-धीरे उसकी छाती और पीठ को पानी से भिगोते हुए थपथपाना शुरू किया तो उसने आंखें सिकोड़ लीं, छटपटाने और ज़ोर से चिल्लाने लगा और लहरें थीं कि एक दूसरी के बाद आकर उसे धोती जा रही थीं।

"चीख़ो, ओरेलो! अपनी पूरी ताक़त से चीख़ो!"

जब हम उसकी मां के पास लौटे तो वह पुनः अपनी आंखें बन्द किए ज़मीन पर लेटी हुई थी और प्रसव के उपरान्त होने वाले दर्द से व्याकुल होकर अपने होंठ काट रही थी। परन्तु उसकी उस व्याकुल कराहट के बीच मुझे उसकी धीमी फुसफुसाहट सुनाई दी—

"दे दो... उसे दे दो..."

"वह थोड़ा इन्तज़ार कर सकता है।"

"दे दो..."

उसने कांपते हाथों से अपने ब्लाऊज़ के बटन खोले। मैंने छाती उघाड़ने में उसकी सहायता की जिसे कुदरत ने बीस बच्चों को दूध पिलाने के योग्य पुष्ट बनाया था और उस उद्दंड ओरेली को उसके गर्म शरीर के साथ सटा दिया। वह तुरंत सब कुछ समझ गया और उसने चीख़ना बन्द कर दिया।

"पवित्र कुमारी... ईश्वर की माता..." सांस लेकर और अपने अस्तव्यस्त सिर को झोली पर इधर-उधर हिलाकर मां बुदबुदाई।

अचानक वह धीरे से चीख़ी, फिर चुप हो गई और फिर एक बार उसने अपनी बेहद सुन्दर आंखें खोलीं—एक मां की पवित्र आंखें—जो नीली थीं और नीले आकाश को ताक रही थीं। उन आंखों में कृतज्ञता से भरी हुई एक प्रसन्न मुस्कराहट चमक रही थी। अपने भारी हाथ को मुश्किल से ऊपर उठाकर उसने अपने तथा बच्चे के ऊपर सलीब का निशान बनाया...

"तुम्हारी जय हो... पवित्र कुमारी, ईश्वर जननी... तुम्हारी जय हो..."

उसकी ग्राखों की चमक फिर बुझ गई, वे धंस गईं, बड़ी मुश्किल से सांस लेती हुई वह देर तक चुप पड़ी रही। परन्तु अचानक उसने दृढ़ आवाज़ में कहा—

"लड़के, मेरा थैला खोलो..."

मैंने उसका थैला खोला। उसने निगाह गड़ाकर मेरी तरफ़ देखा। उसके चेहरे पर एक फीकी मुस्कराहट दिखाई दी और मैंने उसके मुरझाये हुए गालों और पसीने से तर ललाट पर हल्की-सी लाली झलक उठी।

"यहां से जरा हट जाओ..."

"तुम ज्यादा हिलो-डुलो नहीं..."

"ठीक है... हट जाओ..."

मैं पास की झाड़ियों में चला गया। मैं जैसे थक गया था। फिर भी मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे हृदय में सुन्दर चिड़ियां मधुर गीत गा रही हैं और उनका यह संगीत समुद्र से निरन्तर उठने वाली हरहर ध्वनि से मिलकर इतना आकर्षक हो उठा है कि इसे पूरे वर्ष तक बैठा हुआ सुनता रहूं...

कहीं पास ही एक झरने की झर-झर सुनाई दे रही थी मानो कोई लड़की अपनी सखी से अपने प्रियतम की बातें कर रही हो...

झाड़ियों के ऊपर ढंग से बंधे पीले रूमाल वाला सिर दिखाई दिया।

"ऐ! यह तुम क्या कर रही हो? तुम जल्दी उठ बैठी हो!"

वह झाड़ियों का सहारा लेकर जमीन पर बैठ गई। वह ऐसी दिखायी दे रही थी मानो उसकी सारी शक्ति खींच ली गई हो, उसके राख जैसे चेहरे पर तनिक भी लाली नहीं थी और आंखों की जगह दो बड़ी-बड़ी नीली झीलें थीं। वह मृदुता से फुसफुसायी—

"देखो तो—सो रहा है..."

हां, वह मजे से सो रहा था, परन्तु मेरी दृष्टि में उसका सोना दूसरे बच्चों से कुछ बेहतर नहीं था। अगर कोई अन्तर था भी तो केवल परिस्थितियों का—वह पतझड़ के चटकीले पत्तों के एक ढेर पर एक झाड़ी के नीचे, जैसी कि ओरेल गुबेर्निया में नहीं उगतीं, सो रहा था।

"तुम भी थोड़ी देर लेट लेतीं, मां..."

"न..." शिथिल पड़ गयी अपनी गर्दन को हिलाते हुए वह बोली। "मुझे अपनी चीजें समेट कर उस जगह जाना है... उसका क्या नाम है?"

"ओचेमचिरी?"

"हां, वहीं! मेरे साथ के लोग तो शायद काफ़ी दूर चले गये होंगे..."

"लेकिन क्या तुम चल भी सकोगी?"

"पवित्र कुमारी का सहारा है। वह मदद करेगी..."

ख़ैर, जब वह पवित्र कुमारी के सहारे ही जा रही थी, तो मेरे लिये तो चुप रहना ही ठीक था।

उसने झाड़ी के नीचे छोटे-से, असन्तुष्टता से फूले चेहरे की ओर देखा और उसके नेत्रों से स्नेह की मधुर किरणें निकलने लगीं। उसने अपने होंठों पर जबान फेरी और धीरे से अपनी छाती थपथपाई।

मैंने आग जलाई और उस पर केतली रखने के लिये उसके गिर्द कुछ पत्थर रख दिये।

"अभी मैं तुम्हारे लिये चाय तैयार किये देता हूं..."

"ओह! अच्छा रहेगा... मेरी छाती सूख सी गई है..."

"तुम्हारे साथवाले तुम्हें छोड़ क्यों गये?"

"उन्होंने तो ऐसा नहीं किया। मैं ख़ुद ही पीछे रह गई थी, वे कुछ पिये हुए थे... और यह भी अच्छा ही हुआ। वरना मैं क्या करती..."

उसने मेरी तरफ़ देखकर, हाथ से मुंह ढक लिया, फिर ख़ून थूका और शर्माकर मुस्कराई।

"यह तुम्हारा पहला बच्चा है?"

"हां, पहला है... तुम कौन हो?"

"आदमी सा हूं..."

"हां, आदमी तो हो! शादीशुदा हो?"

"अभी यह सम्मान नहीं मिला..."

"झूठ बोल रहे हो न?"

"किसलिये?"

उसने आंखें नीची कर लीं और कुछ सोचकर पूछा—

"औरतों की ये बातें कैसे जानते हो?"

अब मैं झूठ बोला। मैंने कहा—

"मैंने यह सीखा है। मैं विद्यार्थी हूं – यह शब्द तो सुना है न तुमने ?"

"सुना क्यों नहीं! हमारे पादरी का सबसे बड़ा लड़का भी एक विद्यार्थी है। वह पादरी बनने के लिये पढ़ाई कर रहा है..."

"मैं भी उन्हीं में से एक हूं... अच्छा, मैं जाकर केतली भर लाऊं..."

औरत ने बच्चे के ऊपर सिर झुकाकर यह सुना कि वह सांस तो ले रहा है? फिर उसने समुद्र की ओर देखा।

"मैं अपने को साफ़ करना चाहती हूं लेकिन कौन जाने... यह पानी कैसा है? नमकीन और कड़वा..."

"जाकर अपने को साफ़ कर लो – यह अच्छा पानी है!"

"सच?"

"मैं तुमसे सच कह रहा हूं। झरने के पानी से गरम है और यहां झरने का पानी तो बरफ़ की तरह ठंडा है..."

"तुम जानो..."

घोड़े पर सवार, सिर लटकाये और झपकी लेता हुआ एक अबख़ाज़ी धीमी चाल से वहां से निकला। उसके छोटे-से दुबले-पतले घोड़े ने अपने दोनों कान हिलाये, गोल आंखों को तिरछा कर हमारी तरफ़ देखा और हिनहिनाया। सवार ने झटके के साथ झबरीली फ़र टोपी वाला अपना सिर ऊंचा किया, हमारी तरफ़ देखा और फिर सिर झुका लिया।

"यहां के आदमी कैसे अजीब हैं और कितने भयंकर दिखाई देते हैं," ओरेल निवासिनी ने धीरे-से कहा।

मैं झरने पर गया। पारे की तरह चमकीला और चंचल उसका जल पत्थरों पर उछलता-कूदता चला जा रहा था। पतझड़ के पत्ते उसमें आनन्दपूर्वक नाच रहे थे। कितना अद्‌भुत और सुन्दर दृश्य था! मैंने अपना हाथ-मुंह धोया और केतली भरी। मैं लौट रहा था कि झाड़ियों में मुझे वह औरत हाथ-पांव पर रेंगती दिखाई दी। वह चिन्तित दृष्टि से पीछे देखती जा रही थी।

"क्या बात है?"

वह डर गई, उसका चेहरा फक हो गया और उसने अपने शरीर के नीचे कुछ छिपाने की कोशिश की। मैंने भांप लिया।

"इसे मुझे दो, मैं ज़मीन में गाड़ दूंगा..."

"आहे, मेरे प्यारे! यह कैसे हो सकता है? इसे तो किसी स्नानघर के फ़र्श के नीचे गाड़ा जाना चाहिये..."

"क्या ख़्याल है, जल्दी ही यहां स्नानघर बन जायेगा!"

"तुम मज़ाक़ कर रहे हो और मुझे डर लग रहा है! कहीं किसी जंगली जानवर ने इसे खा लिया तो... इसे गाड़ना तो होगा ही..."

इतना कहकर उसने अपना मुंह दूसरी ओर कर लिया और मुझे एक गीली, भारी पोटली देते हुए लजाकर धीमे से बोली—

"तो इसे अच्छी तरह गाड़ दो, काफ़ी गहरा... ईश्वर की ख़ातिर... मेरे बच्चे की ख़ातिर... ख़ूब अच्छी तरह से गाड़ दो..."

...जब मैं लौटा तो मैंने देखा कि वह लड़खड़ाती और हाथ फैलाये हुए समुद्र तट की ओर से चली आ रही है। उसका घघरा कमर तक भीगा हुआ था। उसके चेहरे पर लाली आ गई थी मानो आन्तरिक प्रसन्नता से चमक रहा हो। मैं उसे सहारा देकर आग के पास ले आया और ताज्जुब में भर सोचने लगा—

"कितनी ताक़त है कम्बख़्त में!"

बाद में, जब हम दोनों शहद के साथ चाय पी रहे थे, उसने धीरे से मुझसे पूछा—

"पढ़ना छोड़ दिया क्या?"

"हां।"

"शराब पीने लगे थे क्या?"

"हां, मां, बहुत बुरी तरह पीने लगा था!"

"यह बात है! मुझे शुरू से ही तुम्हारी याद है—खाने को लेकर मालिक से तुम्हारा झगड़ा हुआ था। तब मैंने अपने आप से कहा था: यह ज़रूर पियक्कड़ होगा—कैसा निडर है..."

सूजे हुए होंठों से शहद चाटते हुए वह अपनी नीली आंखों को बराबर उस झाड़ी की तरफ़ घुमा रही थी जहां वह नवजात ओरेलो शान्तिपूर्वक सो रहा था।

"जाने कैसी जिन्दगी बीतेगी इसकी?" उसने मेरे चेहरे की ओर देखते हुए गहरी सांस लेकर कहा, "तुमने मेरी मदद की, इसके लिये धन्यवाद... परन्तु यह इसके लिये अच्छा भी रहेगा या नहीं—मैं नहीं जानती..."

उसने खाया-पिया, अपने ऊपर सलीब का निशान बनाया और जब

तक मैं अपनी चीजें इकट्ठी करता रहा, वह ऊंघती-सी बैठी हुई हिलती रही और आंखें ज़मीन पर गड़ाए हुए किसी विचार में डूब गई। उसकी आंखों की चमक फिर ग़ायब हो गई थी। कुछ देर बाद वह उठकर खड़ी हो गयी।

"क्या तुम सचमुच चल रही हो?"

"हां।"

"ज़रा सोच लो, मां!"

"पवित्र कुमारी मेरी सहायता करेगी... उसे उठाकर मुझे दे दो!"

"उसे मैं ले चलूंगा..."

इस बात पर हम दोनों में थोड़ी देर तक बहस हुई और फिर वह मान गई। तब हम लोग साथ-साथ, कन्धे से कन्धा भिड़ा कर चल पड़े।

"कहीं मैं लड़खड़ा ही न जाऊं," उसने विनीत भाव से मुस्कराते हुए मेरे कन्धे पर हाथ रखकर कहा।

रूस देश का नया निवासी, ऐसा मानव जिसका भाग्य अज्ञात था, गहरी सांसें लेता हुआ मेरे हाथों पर लेटा था। समुद्र, जो मानो सफ़ेद गोटे की कतरनों से ढका हुआ था, किनारे से टकरा रहा था। झाड़ियां आपस में कानाफूसी कर रही थीं। सूर्य मध्याह्न की रेखा को पार करके चमक रहा था।

हम धीरे-धीरे चलते रहे। मां कभी-कभी रुक जाती, गहरी सांस लेती और सिर उठाकर चारों ओर, समुद्र, जंगल, पहाड़ और फिर अपने बेटे के चेहरे की ओर देखती। उसकी आंखें जो वेदना के आंसुओं से पूरी तरह धुल चुकी थीं पुनः आश्चर्यजनक रूप से उज्ज्वल हो गई थीं और उनमें पुनः असीम स्नेह का नीला प्रकाश चमकने लगा था।

एक बार वह रुकी और बोली—

"हे भगवान! कितना अच्छा लग रहा है! कितना अच्छा! ओह, मैं इसी तरह चलती रहती, दुनिया के अन्तिम छोर तक चलती रहती, और वह, मेरा बच्चा बड़ा होता जाता, आज़ादी से बढ़ता रहता, मां की छाती के पास रहता हुआ मेरा प्यारा बच्चा..."

...सागर हहरा रहा था, हहरा रहा था...

परिशिष्ट

महान रूसी प्रतिभा, मक्सिम गोर्की, सारी मानवजाति की थाती हैं।

समूचे साक्षर जगत में गोर्की को पढ़ा जाता है, दुनिया और सोवियत संघ की जातियों की १२७ भाषाओं में गोर्की की रचनाओं का अनुवाद हो चुका है। महान लेखक के अपने देश में उनकी रचनाओं की लगभग ११ करोड़ प्रतियां छप चुकी हैं।

निज्नी नोवगोरोद* के कारीगर अलेक्सेई पेशकोव उस समय २४ वर्ष के थे, जब १८९२ में "मक्सिम गोर्की" उपनाम से उनकी पहली रचना "मकर चुद्रा" प्रकाशित हुई थी। मगर इस समय तक ही वे इतनी अधिक दुनिया देख चुके थे, अनुभव प्राप्त कर चुके थे, इतनी ज्यादा तकलीफ़ें-मुसीबतें सह चुके थे, अनुभूतियों का इतना बड़ा भण्डार संचित कर चुके थे कि शायद ही कोई उनका पूर्ववर्ती या समकालीन लेखक इस दृष्टि से उनकी बराबरी कर सकता था।

रोज़ी-रोटी की फ़िक्र में बीसवर्षीय गोर्की ने लगभग सारे दक्षिणी रूस—उक्रइना, बेसराबिया, क्रीमिया और काकेशिया का पैदल चक्कर लगाया...

उन सालों के दौरान, जब वे रूस में इस तरह भटकते फिरते रहे, किस किस से उनका वास्ता नहीं पड़ा!

गोर्की लोगों में सजीव दिलचस्पी लेते थे और इसलिये वे नौजवान घुमक्कड़ के सामने बेझिझक अपनी आत्मा खोलकर रख देते थे और अपने जीवन की घटनापूर्ण, मनोरंजक और दुःखद कहानियां सुनाते थे।

१८९८ में गोर्की की रचनाओं के पहले छोटे-छोटे संग्रह "शब्दचित्र और कहानियां" शीर्षक से प्रकाशित हुए, जिन्हें बहुत ही मान्यता प्राप्त

---

*महान लेखक के सम्मान में अब इसका नाम गोर्की है।

हुई और उन्होंने लेखक को अ० चेख़ोव और ल० तोलस्तोय जैसे लेखकों की पांत में खड़ा कर दिया।

म० गोर्की की प्रारम्भिक रचनाओं में अभय यथार्थवादी सचाई के साथ-साथ जीवनोत्साह का पुट और "वीरों के उन्माद" का स्तुति-गान भी था, जो उनके समान कठिन जीवनवाले कलाकार की दृष्टि से आश्चर्य-चकित करनेवाली बात थी।

प्रस्तुत संग्रह में जवान गोर्की की वीरतापूर्ण रोमानी कहानियां – "मकर चुद्रा", "बाज़ का गीत", "बुढ़िया इज़रगिल" और "तूफ़ान का अग्रदूत" शामिल हैं।

"बुढ़िया इज़रगिल" बहुत ही दिलचस्प और लाक्षणिक कहानी है। इस कहानी के तीन भाग उन तीनों रास्तों पर प्रकाश डालते हैं, जो किसी भी व्यक्ति के लिये जीवन में सम्भव हो सकते हैं। लारा की कहानी हमें यह सीख देती है कि एकाकीपन जीवन का सबसे बड़ा दुर्भाग्य होता है और उससे तो मौत भी अच्छी रहती है। कहानी का अन्तिम भाग – दान्को के जलते हुए हृदय की दन्त-कथा – हमें यह बताती है कि जनता की आज़ादी के लिये अपने को बलिदान कर देनेवाला व्यक्ति कितना सौभाग्यशाली होता है।

स्वयं इज़रगिल के भाग्य से सम्बन्धित बीच का भाग हमें क्या बताता है? वह यह बताता है कि बहादुरी के कारनामे करना और साथ ही केवल अपने लिये, व्यक्तिगत सुख-सौभाग्य के लिये जीना, एकसाथ दान्को और लारा बनना सम्भव नहीं हो सकता, क्योंकि तब शक्तिशाली और साहसी व्यक्ति के हृदय में, जैसा कि इज़रगिल अपनी जवानी में थी, "दासोचित भयपूर्ण स्वर" गूंजने लगता है।

रूस में घूमते हुए गोर्की की ऐसे लोगों से भेंट हुई जो "जीवन-तल" में गिरा दिये गये थे, मगर इसके बावजूद जिन्होंने अपने रूसी स्वभाव के लक्षणों – विशाल हृदयता, प्रतिभाशीलता और सुख-सौभाग्य के बारे में बेचैन कल्पना – को नहीं त्यागा था। इस तरह इन तलछटी लोगों, पूंजीवादी समाज द्वारा ठुकराये गये लोगों के बारे में एक कहानीमाला (जिसके अन्तर्गत "चेल्काश", "ओरलोव दम्पति" और दूसरी कहानियां आती हैं) जन्म लिया।

गोर्की ने सहानुभूति से इन तलछटी लोगों, स्वतंत्रता के लिये उनकी

तीव्र इच्छा, निजी सम्पत्ति के प्रति उनकी घृणा और जीवन के उद्देश्य की उनकी खोज का हार्दिक चित्रण किया है। मगर ये तलछटी लोग गोर्की के नायक नहीं थे और उन्होंने उन्हें अनुकरणीय उदाहरणों के रूप में नहीं, बल्कि पुरानी, पूंजीवादी व्यवस्था के "अपराधों के सदेह प्रमाणों" के रूप में प्रस्तुत किया है, जो व्यक्ति के चरित्र, उसके गुणों, और उसके श्रेष्ठ प्रयासों को कुंठित कर देती थी।

विषय-वस्तु की विविधता कहानीकार गोर्की का एक विशेष लक्षण था। तलछटी लोगों के यथार्थवादी चित्रण के साथ-साथ ही उन्होंने "जीवन के स्वामियों" – रूसी सौदागरों, प्रान्तीय टुटपुंजियों ("ऊब कैसे मिटे?") को भी अपनी कहानियों में दिखाया है और उनका भंडाफोड़ किया है।

१६०५ की पहली रूसी क्रान्ति की पूर्ववेला में रूस की शक्तिशाली क्रान्तिकारी वाढ़ ने लेखक और सार्वजनिक कार्यकर्त्ता गोर्की को बहुत प्रभावित किया था। प्रेरणापूर्ण "तूफ़ान का अग्रदूत" और विश्व-विख्यात उपन्यास "मां" के रूप में लेखक ने इस सम्बन्ध में अपनी भावनायें व्यक्त कीं।

व्लादीमिर इल्यीच लेनिन के साथ गोर्की की भेंट और उनकी मैत्री लेखक के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण रही। लेनिन ने गोर्की की प्रतिभा का बहुत ऊंचा मूल्यांकन किया, उन्हें "क्रान्ति का अग्रदूत" बताया और कहा कि अपनी महान रचनाओं द्वारा उन्होंने रूस और सारी दुनिया के मज़दूर आन्दोलन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध जोड़ लिया है।

१. मकर चुद्रा

म० गोर्की उपनाम से प्रकाशित होनेवाली अ० पेशकोव की पहली कहानी थी। यह १८६२ में तिफ़लिस के "कवकाज़" पत्र में छपी थी। आलोचकों ने इसे "सर्वविजयी प्यार का विजय-गीत" कहा है।

२. नमकसार में

यह कहानी एक सच्ची घटना के आधार पर, जो रोजी की फ़िक्र में युवा म० गोर्की के साथ दक्षिणी रूस में भटकते हुए घटी, लिखी गई

थी। कहानी में पिछली शताब्दी के अन्त में ज़ारशाही रूस में नमकसारों की भयानक कार्य-परिस्थितियों का सच्चा वर्णन किया गया है।

३. बाज़ का गीत

१८९५ में यह "समारा समाचारपत्र" में पहली बार छपा। "शब्दचित्र और कहानियां" संग्रह के लिये इस गीत को तैयार करते हुए गोर्की ने इसकी क्रान्तिकारी गूंज को बढ़ा दिया था। "बाज़ का गीत", रूस के अग्रणी लोगों को बहुत पसन्द आया था।

४. चेल्काश

यह गोर्की की वह पहली कहानी थी, जो व० कोरोलेन्को के सहयोग से राजधानी की पत्रिका "रुस्कोये ब्रातसत्वो" (रूसी भ्रातृत्व) में छपी थी।

चेल्काश के मूलरूप, ओदेसा के तलछटिया से गोर्की का परिचय निकोलायेव नामक दक्षिणी नगर के अस्पताल में हुआ था। अस्पताल के एक ही कमरे में गोर्की के साथ रहनेवाले इसी तलछटिया ने लेखक को वह घटना सुनायी थी, जिसके इर्दगिर्द "चेल्काश" का ताना-बाना बुना गया है।

५. बुढ़िया इज़रगिल

मोल्दाविया के लोक-साहित्य के आधार पर गोर्की ने इस दन्तकथात्मक-काल्पनिक कहानी की रचना की। अ० चेख़ोव को लिखे गये एक पत्र में गोर्की ने यह मत प्रकट किया था—"लगता है कि 'बुढ़िया इज़रगिल' के समान कसी हुई और सुन्दर ढंग से मैं और कुछ नहीं लिख पाऊंगा..."

६. ऊब कैसे मिटे?

स्तेपी के एक छोटे-से रेलवे स्टेशन के निर्दयी और निर्मम अधिकारियों द्वारा सतायी गयी एकाकी और भूली-बिसरी नारी की यह दुःखद कहानी

उस सच्ची घटना के आधार पर लिखी गयी थी, जो गोर्की ने १८८८ में दोब्रीन्का रेलवे स्टेशन पर तौली का काम करते हुए सुनी थी।

७. ओरलोव दम्पति

साधारण लोगों, नये जीवन के उनके खोजमार्गों के बारे में कथाकार गोर्की की यह एक महत्त्वपूर्ण कहानी है। स्वयं गोर्की इस कहानी को अपने प्रारम्भिक यथार्थवादी कृतित्व का एक श्रेष्ठ उदाहरण मानते थे।

८. तूफ़ान का अग्रदूत

यह गद्यगीत "जीज़्न" (जीवन) पत्रिका के १६०१ के अप्रैल अंक में छपा था। ज़ार के सेंसर ने इसके बारे में यह रिपोर्ट दी थी – "एक विशेष विचारधारा के साहित्यिक क्षेत्रों में इस गीत ने हलचल पैदा कर दी है। इतना ही नहीं, ख़ुद गोर्की को न सिर्फ़ "तूफ़ान का अग्रदूत", बल्कि "तूफ़ान-घोषक" कहा जाने लगा है, क्योंकि वह उमड़ते तूफ़ान का स्तुति-गान ही नहीं, आह्वान भी करता है। इस गद्यगीत के प्रकाशन के लिये "जीज़्न" पत्रिका को सरकार ने बन्द कर दिया था और लेखक पर पुलिस कड़ी नज़र रखने लगी थी।

लेनिन को गोर्की की जो रचनायें सर्वाधिक प्रिय थीं, "तूफ़ान का अग्रदूत" उनमें से एक थी।

६. इटली की कथाएं

ये कथायें गोर्की ने इटली के काप्री द्वीप में लिखीं, जहां वे १६११–१६१२ में ज़ारशाही के अत्याचारों से बचने के लिये जाकर रहने को मजबूर हुए थे। "कथायें" बोल्शेविक समाचारपत्र "ज़्वेज़्दा" (सितारा) और अक्तूबर क्रान्तिपूर्व के "प्राव्दा" (सत्य) में छपीं। लेनिन ने गोर्की की "इटली की कथाओं" का ऊंचा मूल्यांकन किया। महान लेखक के नाम अपने पत्रों में लेनिन ने "अद्भुत कथाओं" के रूप में सहयोग के लिये धन्यवाद दिया। "आपने 'ज़्वेज़्दा' की बहुत ही मदद की और इससे मुझे बेहद ख़ुशी हुई।"

१०. इन्सान पैदा हुआ

यह कहानी गोर्की की "रूस के आर-पार" कहानीमाला के अन्तर्गत आती है।

म० गोर्की के जीवन की एक घटना ही इस कहानी का आधार बनी थी। १८९२ की गर्मी के अन्त में गोर्की काकेशिया में एक सड़क के निर्माण-स्थल पर काम करते थे। वहीं, एक निर्जन पथ पर एक नारी से उनकी भेंट हुई, जिसे प्रसव-पीड़ा होने लगी थी। गोर्की ने उसका बच्चा जनाया था।

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक की विषय-वस्तु, अनुवाद और डिजाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपका अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। हमारा पता है:

प्रगति प्रकाशन,
२१, जूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।